राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय।

अमृत-बचन

परम गुरू महाराज साहब के

अर्थात्

'डिस्कोर्सेज़ ऑन राधास्वामी-फ़ेथ

का

हिन्दी भाषा में अनुवाद

बाबू ब्रजबासी लाल साहब, बी. ए., एलएल. बी.,
वकील, हाई कोर्ट, ने
दयालबाग, आगरा, से प्रकाशित किया।

राधास्वामी सम्वत् १०६

प्रथम बार] सन् १९२४ ई० [२००० पुस्तकें

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय।

अमृत-बचन

परम गुरू महाराज साहब के

अर्थात्
'डिस्कोर्सेज़ ऑन राधास्वामी-फ़ेथ'
का
हिन्दी भाषा में अनुवाद

165

बाबू ब्रजबासी लाल साहब, बी. ए., एलएल. बी.,
वकील, हाई कोर्ट, ने
दयालबाग़, आगरा, से प्रकाशित किया।

राधास्वामी सम्वत् १०६

प्रथम बार] सन् १९२४ ई० [२००० पुस्तकें

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय ।

भूमिका

यह पुस्तक परम गुरू महाराज साहब के अङ्गरेजी ग्रन्थ 'डिस्कोर्सेज़ ऑन राधास्वामी फ़ेथ' का हिन्दी भाषा में अनुवाद है। इसके तय्यार करने की खास ग़रज़ यह है कि अङ्गरेजी जानने वाले भाइयों को 'डिस्कोर्सेज़' के समझने में मदद मिले और आम लोगों के दिल में उस पवित्र ग्रन्थ के पढ़ने के लिए शौक़ पैदा हो। अनुवाद करने में हरचन्द यह ख़्याल रक्खा गया है कि अङ्गरेजी लेख से पूरी मुताबिक़त रहे लेकिन जहाँ तहाँ अपनी तरफ़ से इबारत बढ़ा कर मज़मून को साफ़ और आम-फ़हम कर दिया गया है। इसमें शक नहीं कि इस अनुवाद के अन्दर अङ्गरेजी लेख की सी खूबियाँ मौजूद नहीं हैं और बहुत सी बातों की महज़ मुख़्तसर तशरीह की गई है लेकिन बावजूद इस कसर के उम्मीद की जाती है कि इसके पढ़ने से प्रेमी जनों को बहुत कुछ मदद अङ्गरेजी ग्रन्थ का आशय समझने में मिलेगी।

परम गुरू महाराज साहब ने सन् १९०६ ई० के आख़िरी हिस्से में 'डिस्कोर्सेज़' के आरम्भ करने की मौज फ़रमाई और हरचन्द आयन्दा साल में तबीअत

ज़्यादा अलील होती गईं लेकिन मज़मून लिखवाने का सिलसिला दया से बराबर जारी रहा । मगर अफ़सोस है कि यह अमूल्य ग्रन्थ मुकम्मल न होने पाया था कि मौज निज धाम में सिधारने की हो गई । महाराज साहब के गुप्त होने पर क़लमी नुस्ख़ा दो एक बुज़ुर्ग भाइयों के हाथ में रहा जिन्हों ने बाद लगाने एक भूमिका के और क़ायम करने मुख़्तलिफ़ सुर्ख़ियों के और बदलने कुछ एक लफ़्ज़ों के इसके छपवाने का प्रबन्ध किया । हरचन्द सब किसी को अफ़सोस है कि यह पवित्र ग्रन्थ बवजह गुप्त हो जाने महाराज साहब के सम्पूर्ण और शुद्धरूप में न छप सका, लेकिन तमाम सतसङ्ग-मण्डली जनाबा माता जी साहबा की और उन प्रेमी भाइयों की सच्चे दिल से मशकूर है जिनकी मेहरबानी व परिश्रम से अवाम को सन् १९०९ ई० में 'डिस्कोर्सेज़' के दर्शन नसीब हुए ।

राधास्वामी-मत के प्रथम आचार्य, जिनको चरण-सेवक स्वामीजी महाराज के नाम से याद करते हैं, शहर आगरा मुहल्ला पन्नीगली में अगस्त सन् १८१८ ई० में एक शरीफ़ खत्रीघराने में प्रकट हुए । आपने सन् १८६१ ई० में सतसङ्ग आम की दया फ़रमाई और जून सन् १८७८ ई० तक आपकी सदारत में यह सिलसिला जारी रहा । शहर के बाहर स्वामीबाग़ में आपकी समाधि

बनी है। आपका ख़ानदानी नाम लाला शिवदयाल सिंह सेठ था। आपके बाद राधास्वामी-मत के दूसरे आचार्य परम गुरू राय सालिगराम साहब बहादुर हुए जिनको चरणसेवक हुजूर महाराज के नाम से मौसूम करते हैं। आप ने सन् १८७८ ई० से लेकर दिसम्बर सन् १८९८ ई० तक सतसङ्ग आम का सिलसिला क़ायम रक्खा। आप के बाद यह सेवा परम गुरू महाराज साहब के सुपुर्द हुई। आप शहर बनारस के एक नामी ब्राह्मणकुल में २८ मार्च सन् १८६१ ई० को प्रकट हुए। आप का ख़ानदानी नाम पण्डित ब्रह्मशङ्कर मिश्र था। आप ने एम. ए. तक तालीम पाने के बाद नवम्बर सन् १८८५ ई० में परम गुरू हुजूर महाराज की चरण-शरण इख़्तियार की और उनके गुप्त होने के समय से लेकर अक्तूबर सन् १९०७ ई० तक सतसङ्ग आम की दया फ़रमाई। आप के बाद परम गुरू सरकार साहब राधास्वामी-मत के चौथे आचार्य हुए। आप ने दिसम्बर सन् १९१३ ई० तक कुछ अर्सा शहर ग़ाज़ीपुर में और बाक़ी हिस्सा मुरार ज़िला शाहाबाद व कोह मन्सूरी वग़ैरह में सतसङ्ग फ़रमाया।

पिछले ज़माने में चूँकि जीव आम तौर पर श्रद्धावान् और सीधे सादे थे इस लिए वे महापुरुषों के स्वच्छ जीवन और पाक रहनी गहनी ही से मुतास्सर होकर

उनकी शिक्षा को स्वीकार कर लेते थे और उनको ज़्यादा-तर यही शौक़ रहता था कि अपना तन, मन, धन लगा-कर किसी परमार्थी शिक्षा का पालन करें। इसी वजह से पिछले महापुरुषों ने अपने स्थानों का भेद और अन्तरी अभ्यास की युक्तियों के समझाने के सिलसिले में युक्ति-यों यानी दलीलों से काम नहीं लिया। लेकिन आज कल के ज़माने में दूसरी ही हवा चल रही है और हर शख़्स की यही माँग है कि परमार्थ के मुतअ-ल्लिक़ हर एक बात युक्तिसहित बयान की जावे इस लिए जीवों की माँग पूरी करने के निमित्त हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने सच्चे परमार्थ का भेद युक्तिपूर्वक बयान करने की मौज फ़रमाई और परम गुरू महाराज साहब ने 'डिस्कोर्सेज़' के अन्दर इस भेद को निहायत उत्तम वैज्ञानिक रीति से वर्णन फ़रमाया। अगर शौक़ीन मुतलाशी 'डिस्कोर्सेज़' को या इस अनुवाद को समझ समझ कर पाठ करेंगे तो उम्मीद है कि सच्चे परमार्थ की निस्बत उनके बहुत से संशय निवृत्त होकर उनके दिल में गहरा शौक़ सच्चे सतगुरु की तलाश के लिए पैदा होगा ताकि उनसे अभ्यास की युक्तियाँ सीख कर और उनकी दया व मदद से कुछ कमाई करके प्रत्यक्ष सुबूत सन्त-मत की सचाई का हासिल करें। और इस क़िस्म का सुबूत मिल जाने पर दिल व जान से सन्तमत की शिक्षा

का पालन करते हुए परम और अविनाशी गति को, जो कि असल उद्देश्य सच्चे परमार्थ का है, प्राप्त हों।

महाराज साहब ने 'डिस्कोर्सेज़' के मज़मून को चार भागों में तक़सीम किया है यानी अव्वल तो यह तहक़ीक़ात की है कि परमार्थ का उद्देश्य क्या है और किस अवस्था में प्रवेश करने पर उस उद्देश्य की प्राप्ति मुमकिन है। दूसरे यह निश्चित किया है कि वे कौन से साधन हैं कि जिनकी कमाई करने से सुरत जगकर चैतन्य-मण्डलों में रसाई हासिल कर सकती है। तीसरे रचना की उत्पत्ति और विस्तार का वर्णन करके यह बतलाया है कि रचना के अन्दर वह चैतन्य-मण्डल कहाँ पर वाक़े है कि जिसमें प्रवेश करने पर परमार्थ का उद्देश्य प्राप्त हो जाता है। और चौथे जीव के कर्मों और संसारी सङ्ग साथ का जो असर उसपर पड़ता है उसको बयान करके यह दिखलाया चाहते थे कि परमार्थ का उद्देश्य सहूलियत से हासिल करने के लिए शौक़ीन अभ्यासी को किस क़िस्म की रहनी गहनी इख़्तियार करनी चाहिए।

पहले भाग के शुरू में जैसा कि क़ुदरती तौर पर चाहिए था परमार्थ के उद्देश्य की निस्बत तहक़ीक़ात की गई है और तमाम जानदारों की हर एक कार्रवाई की तह में जो 'सुख की प्राप्ति' व 'दुख की निवृत्ति' की चाह काम कर रही है उसको लेकर परमार्थ का उद्देश्य

ऐसी गति की प्राप्ति निश्चित किया गया कि जिसके अन्दर किसी भी तरह के दुख व विक्षेप का लेश मौजूद न हो और भरपूर आनन्द की दशा वर्त्तमान हो । इसके बाद वैज्ञानिक रीति से सुख व दुख की तहक़ीक़ात करके यह दिखलाया गया कि ऐसी गति की प्राप्ति सिर्फ़ उस अवस्था में प्रवेश होने पर मुमकिन हो सकती है कि जिसमें शरीर व मन का लेश न रहते हुए केवल चैतन्य-शक्ति के निर्मल जौहर का प्रकाश हो । इस नतीजे पर पहुँचने से क़ुदरती तौर पर सवाल पैदा होता है कि आया ऐसी परमानन्द की अवस्था मुमकिन भी है और अगर मुमकिन है तो रचना में किसी जगह पर वर्त्तमान भी है । चुनांचे प्रकृति की शक्तियों के नियमों की मदद से यह दिखलाया गया कि चैतन्य-शक्ति, जो कि आदि व परम शक्ति है, अपना एक भण्डार रखती है जिसे कुल्ल-मालिक का धाम कहते हैं और जिसके अन्दर चैतन्य-शक्ति के निज ख़वास का भरपूर इज़हार रहने से परम शक्ति, परम आनन्द और परम सुख का राज्य है और किसी तरह के रद्द व बदल व क्षीणता का दख़ल नहीं है और यह स्थापन किया गया कि इस धाम में दाख़िल होने ही पर परमार्थ के उद्देश्य की प्राप्ति हो सकती है । चैतन्य-शक्ति के भण्डार की मौजूदगी साबित होने पर ज़रूरत यह जानने की होती है कि वह चैतन्य-भण्डार रचना में किस जगह पर

वाक़ै है क्योंकि इसके बग़ैर यह तय नहीं हो सकता कि उसमें रसाई हासिल करने के लिए कौन से यत्न व उपाय करने मुनासिब होंगे। इस मुश्किल के हल करने के लिए अगर कोई हौसला करे कि चर्मेन्द्रियों और वैज्ञानिक पुरुषों के बनाये हुए आला औज़ारों की मदद से कुल रचना का भेद दरियाफ़्त कर ले तो ज़ाहिर है कि ऐसी कोशिश निष्फल रहेगी। इसके लिए यही मुनासिब है कि जैसे सूर्य का हाल दरियाफ़्त करने के लिए सूर्य से आई हुई किरण से मदद ली जाती है इसी तरह रचना का भेद समझने के लिए चैतन्य-भण्डार से आई हुई किरणरूपी सुरत-अंश का हाल मुताला किया जावे। चुनांचे सुरत-अंश के रचे हुए मनुष्य-शरीर की मिसाल से साबित किया गया कि जैसे स्थूल शरीर के परे मन और मन के परे सुरत क़ायम है वैसे ही रचना में मलीन माया-देश के परे ब्रह्माण्डी मन का देश और उसके परे निर्मल चैतन्य-देश वाक़ै है और जैसे मनुष्य-शरीर का छठा चक्र मनुष्य की सुरत का निवास-स्थान है वैसे ही निर्मल चैतन्य-देश का छठा मुक़ाम कुल रचना की सुरत यानी चैतन्य-भण्डार का स्थान है। यह मालूम होने पर कि चैतन्य-भण्डार रचना में किस जगह पर वाक़ै है सवाल पैदा होता है कि मनुष्य अपनी देह के अन्दर रहता हुआ चैतन्य-भण्डार से तअल्लुक़ क्योंकर पैदा करे। इसके

जवाब में बयान किया गया कि मनुष्य के दिमाग़ के अन्दर ऐसे छिद्र या सूराख़ मौजूद हैं कि जिनके अन्दर क़ायम शक्तियों की मदद से रचना यानी आलमे कबीर के कुल मुक़ामों से उसी तौर पर मेल किया जा सकता है जैसे आँख के छिद्र की मारफ़त सूर्य से मेल किया जाता है ।

पहले भाग में यह दिखलाकर कि मनुष्य-शरीर यानी आलमे सग़ीर छोटे पैमाने पर कुल रचना यानी आलमे कबीर की नक़ल है और दोनों में मेल मनुष्य-शरीर के अन्दर वाक़े छिद्रों द्वारा होता है और यह बयान करके कि मौजूदा हालत में सुरत की बैठक कहाँ पर है और परम और अविनाशी आनन्द का स्थान कहाँ वाक़े है दूसरे भाग में जैसा कि लाज़िमी तौर पर मुनासिब था सुरत के जगाने और दरमियानी मण्डलों को पार करके उसको निर्मल चैतन्य-धाम में पहुँचाने के तीन साधनों का वर्णन किया गया । दफ़ा ५५ के पढ़ने से मालूम होगा कि अन्तरी साधनों की कमाई के लिए वक़्त-गुरू की शरण का लेना निहायत ज़रूरी है क्योंकि साधनों की क्रियाएँ ऐसे अन्तरी घाटों पर करनी होती हैं कि जिनसे अभ्यासी बिलकुल नावाक़फ़ होता है और उन घाटों के जगाने के लिए सतगुरु की अन्तरी मदद दम दम पर दरकार होती है । अलावा इसके हर इन्सान के हृदय में

ऐसी अनेक कमज़ोरियाँ व कदूरतें छिपी रहती हैं कि जो वक़्तन् फ़वक़्तन् अपना ज़ोर दिखला कर न सिर्फ़ उसके शौक़ को ढीला कर देती हैं बल्कि उसको ग़लत रास्ते पर ले जाती हैं। ये सब कसरें सतगुरु-वक़्त के सतसङ्ग में हाज़िर होने से रफ़्ता रफ़्ता दूर हो जाती हैं और अभ्यासी के हृदय में शुद्धता पैदा होकर उसके चित्त को बहुत कुछ स्थिरता प्राप्त हो जाती है। वक़्त-गुरू की ज़रूरत समझ में आने पर क़ुदरती तौर पर हर एक शख़्स के दिल में यह सवाल पैदा होगा कि आया इस ज़माने में ऐसे गुरू मौजूद भी हैं या नहीं और अगर मौजूद हैं तो वह उनकी तलाश कहाँ पर करे। चुनांचे इस भाग में हुज़ूर राधास्वामी दयाल की तशरीफ़आवरी और उनके संसार में क़याम के उसूलों का बयान करके इस मुश्किल को हल कर दिया गया। दफ़ा ६१ के पढ़ने से मालूम होगा कि हरचन्द युक्तियाँ गिनती में तीन हैं लेकिन मुख्य उद्देश्य सब का एक ही है अलबत्ता शुरू में पहली दो युक्तियों का यानी चैतन्य नाम के सुमिरन और चैतन्य स्वरूप के ध्यान का अभ्यास कराया जाता है ताकि अभ्यासी की सुरत का किसी क़दर सिमटाव हो कर उसके अन्दर योग्यता चैतन्य शब्द के सुनने के लिए पैदा हो जावे। खोजी परमार्थी की भूल भ्रम को दूर करने की ग़रज़ से यह भी वाज़ै कर दिया गया कि वह

चैतन्य नाम, जिसका सुमिरन करने से असली और पूरा परमार्थी फ़ायदा हासिल हो सकता है, राधास्वामी नाम है और वह चैतन्य स्वरूप, जिसका ध्यान करने से हस्ब दिलख़्वाह अन्तर में तरक़्क़ी हो सकती है, सतगुरु-स्वरूप है। चूँकि साधन की युक्तियों की कमाई पर अभ्यासी की संसारी हालतों का और मन की रुचियों व बासनाओं का भारी असर पड़ता है और जीवों की संसारी हालतों व मन की वासनाओं वग़ैरह पर सृष्टिनियमों का भारी असर पड़ता है इस लिए तीसरे भाग में रचना की तरतीब और उसके इन्तिज़ाम व उद्देश्य का बयान करते हुए रचना के अन्दर वर्तमान सृष्टिनियमों का मुफ़स्सल ज़िक्र किया गया।

लेकिन रचना की तरतीब का बयान करने से पहले यह दिखलाया गया कि रचना के पेश्तर क्या दशा वर्तमान थी क्योंकि बग़ैर इसके रचना के रूपवान होने के सिलसिले का बयान अयुक्त रहता। आगे चल कर चैतन्य-शक्ति के ध्रुवीय भाव का ज़िक्र करके कुल्ल-मालिक और सुरत-अंशों की आदि दशा का वर्णन किया गया और चैतन्य-शक्ति के इज़हार की क्रिया समझाने के लिए चुम्बक शक्ति की चुम्बक बनाने वाली क्रिया का मुफ़स्सल बयान किया गया क्योंकि संसार में चैतन्य-शक्ति की तरह चुम्बक-शक्ति ही आकर्षक शक्ति है और इसकी

क्रिया का हाल समझ में आने से चैतन्य-शक्ति के इज़हार का हाल किसी क़दर समझ में आ सकता है। अलावा इसके जैसे चुम्बक-शक्ति का दो क्रियाओं यानी धारों के क्षेत्र में फैलने और क्षेत्र के नुक़्तों का चुम्बक की जानिब आकर्षण होने की मारफ़त इज़हार होता है ऐसे ही चैतन्य-शक्ति का भी दो अङ्गों की मारफ़त, जिनको सुरतधार और शब्दधार कहते हैं, इज़हार हुआ और इन दो अङ्गों ही से निर्मल चैतन्य-देश के छः स्थान ज़ाहिर हुए। निर्मल चैतन्य-देश के छः स्थानों की उत्पत्ति और उनके बासियों की देहों का हाल बयान करके काल और आद्या की धारों के ज़हूर और ब्रह्माण्ड के स्थानों की रचना का मुफ़स्सल ज़िक्र किया गया और निहायत खूबसूरती के साथ पुरुष प्रकृति, ब्रह्म माया, निरञ्जन ज्योति वग़ैरह की पैदायश का बयान करके तीन गुणों, पाँच तत्वों और पच्चीस प्रकृतियों की तशरीह की गई। ब्रह्माण्ड देश के बयान के बाद पिण्ड-देश की रचना और उसके नियमों का ज़िक्र किया गया और आवागवन और प्रलय व महा-प्रलय के विषयों पर रोशनी डालते हुए मनुष्य-शरीर की महिमा का मुफ़स्सल बयान करके दिखलाया गया कि क्यों ब्रह्मपुरुष और सच्चे कुल्ल-मालिक का इसी शरीर में अवतार होता है। अन्त में मनुष्य-जीवन की चार अवस्थाओं की उपमा से चार युगों की अवस्थाओं का

वर्णन करके समझाया गया कि हरचन्द कलियुग के दौरान में जीवों पर मुश्किलें व मुसीबतें बहुत आती हैं लेकिन जगदुद्धार की भारी दया इसी ज़माने में हो सकती है और यह दिखलाया गया कि संसार के अन्दर दुख तकलीफ़ और कमी बेशी की सूरतें देखकर आम लोग जो रचना के नियन्ता पर आक्षेप करते हैं वह सब नतीजा रचना की दया की ग़रज़ समझ में न आने का है। आगे चलकर दफ़ा १२३ में निहायत उत्तम वैज्ञानिक रीति से दरसाया गया कि रचना में भिन्नता की सूरत कैसे ज़हूर में आई और रचना के अन्दर इस वक़्त जो कुछ मौजूद है वह महज़ चैतन्यता के दर्जों में कमी व बेशी का इज़हार है यानी रचना के रूपवान होने पर कोई और बात ज़हूर में नहीं आई है सिवाय इसके कि चैतन्यता के अनेक दर्जे, जो पेशतर मौजूद न थे, अब क़ायम हो गये हैं। इसके बाद दफ़ा १२४ में रचना की दया की ग़रज़ निहायत सुन्दररूप में बयान की गई।

चौथा भाग, जैसा कि इस भूमिका के शुरू में ज़िक्र किया गया, नामुकम्मल है। इसमें सिर्फ़ चार दफ़ात हैं जिनके अन्दर इस क़दर बयान हुआ है कि हमारे मन-आकाश पर जो संस्कार पड़ते हैं वे बराबर क़ायम रहते हैं और दोबारा प्रकट हो कर हम से कर्म कराते हैं।

परम गुरू महाराज साहब ने 'डिस्कोर्सेज़' के अलावा दो चार शब्द हिन्दी भाषा में भी रचे थे, जिनका हरचन्द 'डिस्कोर्सेज़' के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है लेकिन प्रेमी जनों की वाक़फ़ियत के लिए उनको इस अनुवाद के अन्त में बतौर ज़मीमा के छाप दिया गया है।

दयालबाग़,
१ जून १९२४ ई०

आ० स्व०

सूचीपत्र।

(भाग पहला)

बयान सच्चे परमार्थ का और उसके उद्देश्य (ग़रज़) का और वर्णन उस अवस्था का कि जिसमें उस उद्देश्य की प्राप्ति हो सकती है। (पृष्ठ १ से ६७ तक)

(भाग दूसरा)

बयान सुरत के जगाने और उसे अन्तर में चढ़ाने के साधनों का। (पृष्ठ ६८ से १५९ तक)

(भाग चौथा)

बयान कर्म यानी मनुष्यों की क्रियाओं का और वर्णन उस असर का जो क्रियाओं के द्वारा मनुष्यों पर पड़ता है। (पृष्ठ २६३ से २६८ तक)

अमृत-बचन

परम गुरू महाराज साहब के

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय ।

अमृत बचन

भाग पहला

बयान सच्चे परमार्थ का और उसके उद्देश्य (ग़रज़) का और वर्णन उस अवस्था का कि जिसमें उस उद्देश्य की प्राप्ति हो सकती है ।

१—परमार्थ की वैज्ञानिक रीति से तहक़ीक़ात की ज़रूरत ।

देखने में आता है कि इस ज़माने के बढ़के समझदार लोगों और ख़ास कर वैज्ञानिक पुरुषों की बहुत ही कम तवज्जह परमार्थ की जानिब जाती है। चाहिए तो यह था कि जैसे संसार के अनेक पदार्थों और विद्याओं और कामों की तरफ़ तवज्जह दे कर नई नई मालूमात की जा रही हैं और जीवों के लिए सुख के नये नये सामान बहम पहुँचने का इन्तिज़ाम हो रहा है वैसे ही परमार्थ की जानिब भी तवज्जह दे कर नये भेद मालूम किये जाते

और जीवों के लिए ऊँचे दर्जे के सुख का रास्ता खोला जाता । लेकिन जैसा कि बयान किया गया, सूरत इसके बिलकुल बरख़िलाफ़ है । इसकी क्या वजह है? वजह यह है कि परमार्थ का मज़मून (विषय) उमंग व जोश की बातों, गुप्त इशारों व भेदों की उलझनों और टेक व पक्ष की अटकों से भरपूर है; और वह करदेखी और यथार्थ जाँच व परख, जो आज कल के वैज्ञानिक निर्णय विचार की जान है, इसमें नदारद है । क़ुदरती तौर पर विद्यावान लोगों का मन परमार्थ के सिलसिले में उसी तरीक़े की तहक़ीक़ात चाहता है जैसी कि और दूसरे विषयों के सिलसिले में की जाती है और ऐसा इन्तिज़ाम न होने की वजह से इन पुरुषों की तवज्जह परमार्थ की जानिब बहुत कम जाती है । इस कसर को दूर करने यानी परमार्थ के मज़मून में नई रोशनी की तहक़ीक़ात का रस पैदा करने के लिए यह आवश्यक होता है कि परमार्थ की तहक़ीक़ात आज कल की वैज्ञानिक रीति के अनुसार की जावे यानी अव्वल साफ़ तौर पर परमार्थ का उद्देश्य बयान किया जावे और बाद में ऐसे मुनासिब साधन तजवीज़ किये जावें कि जिन पर अमल करने से उस उद्देश्य की प्राप्ति हो सके । चुनांचे इस पुस्तक में हम ऐसे ही परमार्थ के सिद्धान्तों और साधनों का वर्णन करेंगे कि जिसमें हर बात वैज्ञानिक रीति की जाँच व परख के बाद मानी गई है ।

२—परमार्थ के उद्देश्य का बयान ।

गौर करने से मालूम होता है कि इस संसार में प्राणी-मात्र जो भी संकल्प उठाते हैं या कर्म करते हैं उन सब की बुनियाद किसी न किसी प्रकार के सुख की प्राप्ति या दुख से निवृत्ति की चाह होती है । इतना ही नहीं, बल्कि जो संकल्प हमारे अन्दर आप से आप उठते हैं और जो कर्म बिला शामिल होने हमारी मर्ज़ी या इरादे के हम-से बन पड़ते हैं उनकी तह में भी इस बासना का कुछ न कुछ लेश ज़रूर मौजूद रहता है । चुनांचे जो दशा हमारे आराम व बेहतरी के लिए सहायक होती है उसके लिए हमारी जानिब से बराबर शिरकत, शमूलियत या मंज़ूरी का इज़हार होता है और जो दशा ख़िलाफ़ सूरत पैदा करने वाली होती है उसके लिए रुकावट या हटाव ज़ाहिर होता है । मसलन जो खाना हम खाते हैं उसमें जो कुछ हमारे लिए मुफ़ीद मसाला होता है वह बिला शिरकत हमारी मर्ज़ी के आप से आप हज़म हो कर हमारे शरीर का हिस्सा बन जाता है, और किसी तरह का नाक़िस मसाला अन्दर जाने पर हमारे जिस्म के तमाम आज़ा उसको बाहर निकालने की कोशिश करते हैं । अलफ़ाज़ "दुख" व "सुख" इस बयान में और आयन्दा भी हमने इनके वसी मानी में इस्तेमाल किये हैं । मसलन सुख के लिए यह ज़रूरी नहीं है कि जो काम

हम करें वह इसी वक़्त या ख़ास हमारे ही लिए सुखदाई हो। जैसे अगर कोई आदमी कीलों पर लेटा है या गर्मी के मौसम में खेत में हल चला रहा है तो सवाल हो सकता है कि इन कार्रवाइयों से इन लोगों को क्या सुख मिल रहा है। इसमें शक नहीं कि ज़ाहिरा तौर पर कीलों पर लेटना या गर्मी के मौसम में खेत में काम करना उस वक़्त किसी तरह सुखदाई नहीं है लेकिन इन दोनों कार्र-वाइयों की तह में ज़रूर बासना सुख के भोगने की मौजूद है। चुनांचे कीलों पर लेटा हुआ आदमी दिल में यह समझता है कि उसको कष्ट की हालत में देख कर लोग रुपया पैसा दान देंगे जिससे वह अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ सुख भोग सकेगा। और दूसरा शख़्स जो खेत में काम करता है जानता है कि चार छः महीने बाद फ़सल तैयार होने पर उसको भरपूर मौक़ा खेत की आमदनी से सुख भोगने का मिलेगा। मतलब यह है कि "सुख की प्राप्ति" व "दुख की निवृत्ति" की बासना से हमारी मुराद फ़ौरन इसी समय के और ख़ुद अपने ही भोग में आने वाले सुखों दुखों से नहीं है बल्कि आगे पीछे आने वाले और अपने व दूसरे जीवों के सम्बन्धी दुख सुख भी इनमें शामिल हैं।

ज़ाहिर है कि इस प्रकार की बासना की पूरी शान्ति तभी हो सकती है कि जब जीव को ऐसी गति हासिल हो जावे कि जिसमें किसी भी तरह के दुख व विक्षेप का

लेश मौजूद न हो और परम आनन्द भरपूर प्राप्त हो। मालूम होवे कि परमार्थ का उद्देश्य यानी मतलब मनुष्यों के इसी 'परम अर्थ' की प्राप्ति या सिद्धि है। चैतन्य शक्ति यानी जीवात्मा के नियम क्या हैं? सच्चा मालिक यानी सत्-करतार किसको कहते हैं? रचना कैसे और किस निमित्त रूपवान हुई? जीव के लिए इस संसार में रहते हुए मुनासिब कर्तव्य क्या होने चाहिएँ? ये भी ऐसे विषय हैं कि जिनकी निस्बत सच्चे परमार्थ की जाँच के सिलसिले में ग़ौर करना लाज़िमी है।

३—सुख और दुख का बयान।

जब यह तै होगया कि परमार्थ का असली उद्देश्य परम आनन्द की प्राप्ति और सर्व प्रकार के दुख से क़तई निवृत्ति हासिल करना है तो यह ज़रूरी हो जाता है कि सुख और दुख की अवस्थाओं की विस्तार पूर्वक जाँच की जावे क्योंकि बग़ैर इसके दुख और सुख की असलियत यानी असल हक़ीक़त हमारी समझ में नहीं आ सकती और न ही वे साधन तजवीज़ हो सकते हैं कि जिन पर अमल करने से हमारे लिए परमार्थ के उद्देश्य की प्राप्ति मुमकिन हो सकती है।

४–जीव-चैतन्य या ज्ञानेन्द्रिय की धार* ।

हम हर रोज़ देखते हैं कि जीव को दुख सुख का ज्ञान ख़ास जाग्रत अवस्था ही में होता है और स्वप्न, सुषुप्ति या सकूते (समाधि) की अवस्था में प्रवेश होने पर या क्लोरोफ़ार्म सूँघने से बेहोशी आने पर इनका कोई अनुभव नहीं होता। इससे ज़ाहिर है कि दुख सुख के ज्ञान की प्राप्ति में ज़्यादातर खेल उस कला का रहता है कि जो जाग्रत अवस्था के स्वप्न, सुषुप्ति आदि अवस्थाओं में बदलने पर हमारे अन्दर खिँच जाती है या निष्क्रिय हो जाती है। विद्यावानों ने इस कला का नाम "ज्ञानेन्द्रिय की धार" या "जीव-चैतन्य धार" रक्खा है। यह मालूम होने पर कि दुख सुख का अनुभव इस धार की मौजूदगी व सहायता से ही हुआ करता है, दुख सुख की अवस्थाओं का रहस्य समझने के लिए यह आवश्यक ठहरता है कि अव्वल इस धार की हक़ीक़त और इसके इज़हार की सूरत को पूरे तौर पर समझा जावे, जैसे देखो, आग हमेशा हवा की मौजूदगी में जला करती है और ज्योंही हवा हटा ली जाती है या बन्द करदी जाती है तो यह फ़ौरन बुझने लगती है। इस लिए जो शख़्स आग के जलने का भेद जानना चाहता है उसके वास्ते अव्वल हवा की हक़ीक़त व बनावट का समझना लाज़िमी है। जब मालूम होजावे कि हवा कैसे व

* Sensory Current.

किन गैसों से मिल कर बनती है तभी समझ में आ सकता है कि आग कैसे जला करती है ।

जीव-चैतन्य धार की हक़ीक़त के समझाने और आम लोगों को जो इसके बारे में उलझनें हैं उनको सुलझाने की ग़रज़ से हम एक मामूली वाक़ए की तरफ़ तवज्जह दिलाते हैं । ज़रा ग़ौर कर के देखना चाहिए कि इससे क्या नतीजा निकलता है । ख़्याल करो कि कोई शख़्स गणित के किसी गहरे सवाल के हल करने में लगा है, कई घण्टे बीत जाते हैं, और घड़ी बजती है, लेकिन उस शख़्स को घण्टों के बीतने और घड़ी के बजने की कोई सुधि नहीं होती । इस सुधि न होने की क्या वजह है ? वजह यह है कि उसकी तवज्जह या चित्तवृत्ति सवाल के हल करने में मसरूफ़ होने के कारण और सब तरफ़ों से हटी हुई है और इस हटाव के कारण उसको दूसरी बातों की सुधि नहीं होती । अगर इस शख़्स की तवज्जह सवाल की जानिब यकसू न होती तो उसको अपने आस पास होने वाली बहुत सी बातों की सुधि अवश्य ही रहती । मतलब यह है कि जब हमारी तवज्जह किसी एक तरफ़ लग जाती है तो उस तरफ़ के सिवाय और दूसरी तरफ़ का हमको मुतलक़ ज्ञान नहीं होता और जब तवज्जह यकसू नहीं होती है तो उस वक़्त हमको अपने आस-पास होने वाली बहुत सी बातों का ज्ञान रहता

है । हमारे इस उत्तर की तह में जो भारी सिद्धान्त और नियम मौजूद हैं और काम कर रहे हैं वे अभी तक ठीक २ तौर पर निश्चित नहीं हुए हैं और न ही अभी उनको दूसरी अवस्थाओं पर घटा कर जाँचा गया है और न ही विद्यावानों ने उनकी बुनियाद पर कोई आम क़ायदे क़ायम किये हैं । अलबत्ता इस क़दर ज़रूर मालूम होता है कि इन्द्रिय-ज्ञान की प्राप्ति की क्रिया हमेशा तवज्जहरूप ही में होती है यानी जो कुछ भी इन्द्रिय-ज्ञान हमको प्राप्त होता है वह सब तवज्जह ही के द्वारा होता है और तवज्जह की कमी व बेशी के अनुसार इन्द्रिय-ज्ञान में भी कमी व बेशी हुआ करती है और तवज्जह के पूरे तौर पर हट जाने की सूरत में इसका भी सम्पूर्ण अंग में अभाव हो जाता है । और जोकि तवज्जह की कमी व बेशी के दर्जे बेशुमार हैं इस लिए हमारे इन्द्रिय-ज्ञान के भी दर्जे अनेक हैं । यह नियम जो ऊपर बयान हुआ किसी ख़ास क़िस्म के इन्द्रिय-ज्ञान के लिए मख़सूस नहीं है बल्कि सभी प्रकार के इन्द्रिय-ज्ञान के ऊपर लगता है यानी पाँचों ज्ञानेन्द्रिय द्वारा प्राप्त होने वाला हर क़िस्म का ज्ञान तवज्जह ही की मारफ़त हासिल होता है । मोटे तौर पर इन्द्रिय-ज्ञान की दो क़िस्में हैं यानी एक तो सुखसम्बन्धी और दूसरे दुखसम्बन्धी । यह बयान होने पर कि सब का सब इन्द्रिय-ज्ञान कैसे प्राप्त होता है और तवज्जह की कमी व बेशी

से इन्द्रिय-ज्ञान में कैसे कमी व बेशी हुआ करती है और इन्द्रिय-ज्ञान की मोटे तौर पर कितनी क़िस्में हैं, अब दुख और सुख की असल हक़ीक़त यानी उनके ख़ास ख़ास लक्षण ठीक तौर पर आसानी से समझ में आ सकते हैं। चुनांचे पहले दुख की हक़ीक़त का बयान शुरू करते हैं।

५—दुख का बयान।

दुख दो तरह के होते हैं:— शारीरिक और मानसिक। शारीरिक दुख की हक़ीक़त की जाँच करने के लिए हम शारीरिक दुख के एक तजरुबे को लेते हैं। फ़र्ज़ करो कि किसी आदमी के जाग्रत अवस्था में छुरी का ज़ख्म आ जाता है या किसी और तरह से जिस्म में चोट लग जाती है। ज़ख्म या चोट के लगने पर जिस्म का वह हिस्सा या तो कट कर अलहदा हो जाता है या कुचल जाता है और उसके अन्दर की रगें भी, जिन पर से होकर ज्ञानेन्द्रिय की धारें जिस्म में आती जाती हैं, कट जाती हैं या ज़ख्मी हो जाती हैं। ग़ौर करने से मालूम होगा कि रगों के कट जाने या चोट खाने से जिस्म के अन्दर फैली हुई ज्ञानेन्द्रिय की धार के कुछ हिस्से का जिस्म के कटे या कुचले हुए अंग से जबरन् यानी ज़बरदस्ती इख़राज हो जाता है और जब ज़ख्मी अंग के पास या नज़दीक वाली ज्ञानेन्द्रिय की धारें इस जबरन् इख़राज या हटाव की

दशा को ज्ञाता तक पहुँचाती हैं तो उसको शारीरिक दुख का अनुभव होता है। अगर हिप्नॉटिज़्म के अमल द्वारा या क्लोरोफ़ार्म सुँघाकर ज्ञानेन्द्रिय की धार की क्रिया बंद कर दी जावे तो शरीर की सुधि बिसर जाने से यानी शरीर के घाट से तवज्जह के सम्पूर्ण अंग में हट जाने पर जीव को कोई इत्तिला ज़ख़्म लगने की न पहुँच सकेगी और न उस को दुख का कोई ज्ञान हासिल होगा।

मानसिक दुख का ज्ञान भी जीव को इसी तौर पर ज्ञानेन्द्रिय की धार ही की मारफ़त होता है। अलबत्ता इस सूरत में रगों के बजाय मन के बन्धनों को झटका लगता है। लेकिन इन बंधनों को झटका लगने पर मानसिक दुख का अनुभव शारीरिक दुख के ज्ञान की तरह ज्ञानेन्द्रिय की धारही के ज़रिये से होता है।

जाग्रत अवस्था की निस्बत यह बयान किया गया कि ज्ञानेन्द्रिय की धार तवज्जह रूप में प्रकट हो कर ज्ञान हासिल करती है, लेकिन मालूम होवे कि स्वप्न-अवस्था में भी जो जल्द जल्द बदलते हुए नज़ारे दिखाई देते हैं और एक ही सेकन्ड में बीसों बातें व चीज़ें तजरुबे में आ जाती हैं, यह सब तवज्जह ही का खेल है। क्योंकि उस वक़्त में तवज्जह का रुख़ दिमाग़ के अन्दर पड़े हुए मुख़्तलिफ़ नक़्शों की जानिब होने ही के कारण स्वप्न की चीज़ें और बातें तजरुबे में आती हैं और कभी कभी बाहरी शोर या आवाज़

वग़ैरह की वजह से तवज्जह का रुख़ अचानक पलट जाने से नई तरह के और वाज़ औक़ात निहायत अजीब व ग़रीब या डरावने स्वप्न दिखलाई देने लगते हैं।

ग़रज़े कि अगर जाग्रत और स्वप्न की सब हालतों की मुनासिब जाँच की जावेगी तो बिला शुबह साबित हो जायगा कि तवज्जह की मदद के बग़ैर मन के अन्दर किसी क़िस्म का ज्ञान पैदा नहीं हो सकता। यह ज़रूर है कि शारीरिक दुख के व्यापने में ज्ञानेन्द्रिय की धारों की वाहक (ले जाने वाली) रगें होती हैं और मानसिक दुख के व्यापने में जो मन के बन्धनों को झटका लगने से हुआ करता है उन धारों के वाहक हमारे ख़्यालात होते हैं। [इन्द्रियों के द्वारा संसार के पदार्थों का जो कुछ ज्ञान हमको प्राप्त होता है वह सब संस्कार या नक़्श की शक्ल में हमारे दिमाग़ के अन्दर दाख़िल होता है और इन संस्कारों या नक़्शों के सम्बन्ध में जो रूप (कल्पनास्वरूपी) अन्तर में हमारी चित्तवृत्ति या तवज्जह धारण करती है उन्हींको ख़्याल कहते हैं।] यह कहना ग़लत न होगा कि शारीरिक दुख के व्यापने में तार के ज़रिये ख़बर पहुँचने की सी क्रिया होती है और मानसिक दुख के व्यापने में बेतार के तार पहुँचने की सी क्रिया होती है। जब हमारे मन को किसी क़िस्म का सदमा पहुँचता है या चोट लगती है तो उस वक़्त अवश्य

ही यह अनुभव होता है कि कोई न कोई बात जिसमें हमारा बहुत बन्धन था पूरी होने नहीं पाई है या कोई ऐसी वस्तु कि जिसके साथ हमारा किसी न किसी प्रकार से तअल्लुक़ था हमसे जुदा हो गई है या उस वस्तु की किसी प्रकार से हानि हो गई है। बहरहाल इन सब अवस्थाओं में या तो हमारे मन के बन्धन के ज़बरदस्ती कटने की सूरत पैदा होती है या उसको चोट लगने की कैफ़ियत ज़ाहिर होती है और जब तवज्जह की धार इनमें से किसी एक वजह से अपनी मामूली गुज़रगाह से ज़बरदस्ती हटाए जाने पर इस ज़बरदस्ती हटाव की कैफ़ियत को मानसिक घाट पर दोहराती है तो हमको मानसिक दुख का अनुभव होता है।

शारीरिक और मानसिक दुख के सम्बन्ध में, यह मानने पर कि दोनों के अन्दर मुख्य बात तवज्जह का ज़बरदस्ती हटाव है, दुख की परिभाषा (तारीफ़) यह क़ायम होती है:—

शरीर या मन के घाट से अपनी ज्ञानेन्द्रिय की धारों के जबरन् इख़राज या ज़बरदस्ती हटाव का जो अनुभव जीव को होता है वही दुख है।

६—सुख का बयान।

चूँकि ज़ाहिरा तौर पर सुख की अवस्था दुख-अवस्था की ख़िलाफ़ यानी उलटी सूरत मालूम होती है इस लिए यह ख़्याल करना ग़लत न होगा कि अगर दुख के ब्या-

पने में ज्ञानेन्द्रिय की धार का ज़बरदस्ती हटाव होता है तो सुख के व्यापने में हटाव के बजाय उसकी एकत्रता होनी चाहिए। चुनांचे सुख की अवस्था के दो एक तजरुबों की परीक्षा करके देखते हैं कि यह ख़्याल कहाँ तक दुरुस्त है।

फ़र्ज़ करो कि कहीं पर निहायत सुरीला गाना बजाना हो रहा है और सब के सब सुनने वालों की तवज्जह उसमें लवलीन हो रही है, यहाँ तक कि मस्ती और मदहोशी का आलम हो रहा है। अगर ऐसे मौक़े पर उनमें से एक शख़्स के पास किसी मित्र या नज़दीकी रिश्तेदार के अचानक सख़्त बीमार पड़ने की ख़बर पहुँचे या ऐसी कोई और वारदात हो जावे कि जिससे उसकी तवज्जह का रुख़ पलट जावे तो उस शख़्स के दिल से गाने बजाने का सारा मज़ा एकदम ग़ायब हो जावेगा। इतना ही नहीं, बल्कि अगर वह शख़्स ख़बर पा कर फ़ौरन उसके मुतअल्लिक़ मुनासिब कार्रवाई न करने पावेगा तो उसके लिए वह गाना बजाना, जो थोड़ी देर पहले परम सुखदायक था, घोर दुखदायक हो जावेगा। इस क़िस्म के और भी बहुत से दृष्टान्त दिये जा सकते हैं जिनसे साफ़ मालूम होगा कि सुख-अवस्था में हमेशा तवज्जह की धार के एकत्र होने ही के कारण सुख का अनुभव हुआ करता है। चुनांचे एक और मिसाल लीजिये :— देखने में

आता है कि बच्चों का मन सीधा सादा व नातजरुबेकार होने की वजह से सयानों की तरह संसार के पदार्थों में ज़्यादा अटक नहीं मानता है और न ही उसको दुनियवी भलाई बुराई की ज़्यादा तमीज़ होती है। इस लिए मामूली से मामूली चीज़ों में भी बच्चों की तवज्जह लग जाती है, और लकड़ी व पत्थर के बेकार टुकड़े पाकर वे मस्त व मगन हो जाते हैं। इससे ज़ाहिर है कि बच्चों की भोली वाली मगनता और ख़ुशी का कारण सिर्फ़ तवज्जह की यकसूई यानी एकत्रता ही है। अलावा इसके ख़्याल करो कि बहुत से दिलबहलाव के ऐसे खेल हैं—जैसे चौपड़, ताश, गंजफ़ा वग़ैरह—कि जिनमें अज़ख़ुद कोई लुभाने वाली बात नहीं है लेकिन उनके खेलने में जो तवज्जह की यकसूई के तजरुबे होते हैं उनकी वजह से लोगों को इन खेलों में बड़ा रस आता है। इससे भी यही निश्चित होता है कि सुख सिर्फ़ तवज्जह की यकसूई का नतीजा है। तवज्जह के यकसू होने पर मामूली सुख व हर्ष की प्राप्ति के अलावा बाज़ औक़ात मनुष्य की बुद्धि में सहज-ज्ञान (Intuition) के प्रकाश की मदद से चमत्कार भी हुआ करता है और उस अवस्था में बहुत सी गुप्त बातें बुद्धि के अन्दर प्रकाशित हो जाती हैं। सुख की अवस्थाओं के इन सब तजरुबों से जो ऊपर बयान हुए मालूम होता है कि तवज्जह की यकसूई यानी एकत्रता ही के कारण शारीरिक और मानसिक सुख का अनुभव

होता है। लेकिन इससे और नीज़ दफ़ा ५ में जो दुख की अवस्था का निर्णय हुआ उससे उस भंडार या केन्द्र के जौहर व गुणों की निस्वत कुछ पता नहीं चलता कि जिस के अन्दर से ज्ञानेन्द्रिय की सब धारें निकलती हैं। आगे चल कर हम इस मज़मून पर मुफ़स्सिल बहस करेंगे। यहाँ पर सिर्फ़ इस क़दर बयान कर देने से काम चल जावेगा कि चैतन्य-शक्ति यानी जीवात्मा का जौहर सत्, चित् और आनन्द रूप है और ज्ञानेन्द्रिय की धारें उस शक्ति की किरनियाँ हैं और चैतन्य-शक्ति की धारही का स्थूल प्रकृति यानी माद्दा और मन के साथ संयोग होने से संसार के अन्दर दुख सुख का ज़हूर होता है।

जैसे पिछली दफ़ा में हमने दुख की परिभाषा मुख़्तसिर लफ़्ज़ों में क़ायम की थी वैसे ही अब सुख की भी परिभाषा लिखते हैं:—

शरीर या मन के घाट पर अपनी ज्ञानेन्द्रिय की धारों के सिमटाव यानी एकत्रता का जो अनुभव जीव को होता है वही संसार का सुख है।

७—परम आनन्द।

दुख और सुख की परिभाषाओं पर, जो दफ़ा ५ व ६ में क़ायम की गईं, ग़ौर करने से स्पष्ट हो जाता है कि जब तक जीव का शरीर और मन से तअल्लुक़ रहेगा उस

वक़् तक उसको संसार के दुख सुख का असर ज़रूर भोगना पड़ेगा। और इस लिए परम आनन्द की प्राप्ति और दुख व क्लेश से सम्पूर्ण रूप में निवृत्ति सिर्फ़ ऐसी अवस्था में प्रवेश होने पर मुमकिन होगी कि जिसमें शरीर व मन का लेश न रहते हुए चैतन्य-शक्ति के निर्मल जौहर का प्रकाश हो।

क्या परम आनन्द की अवस्था मुमकिन भी है? और अगर मुमकिन है तो सचमुच मौजूद भी है? और अगर मौजूद है तो किस प्रकार से यानी किस साधन व उपाय की मदद से उसकी प्राप्ति हो सकती है? इन प्रश्नों का ठीक ठीक उत्तर हासिल करने के लिए लाज़िमी है कि चैतन्य-शक्ति की हक़ीक़त और उसके नियम दरियाफ़्त किये जावें।

८—देह और मन की साधारण क्रियाओं से चैतन्य-शक्ति का हाल मालूम नहीं हो सकता।

देखने में आता है कि अगर सुरत या रूह यानी जीवन-शक्ति को, जो तमाम प्राणियों और वनस्पतियों की जान है, शरीर के किसी हिस्से में बार बार बाक़ायदा रवाँ किया जावे तो वह हिस्सा मज़बूत हो जाता है। मसलन् छोटे बच्चे दूध पिला कर जब चारपाई पर लिटा दिये जाते हैं तो वे अर्से तक रोज़ाना अपने हाथ पैर मारा करते हैं। हाथ पैर मारने में वे अपनी सुरत की धार हाथ

पैरों में बार बार रवाँ करते हैं जिसका नतीजा यह होता है कि उनके हाथ पाँव में अच्छी तरह से जान आ जाती है। और यह भी देखने में आता है कि अगर बरख़िलाफ़ इसके जिस्म या रगों के किसी हिस्से में सुरत की धार का गुज़र कम हो जावे या बिलकुल बन्द हो जावे तो जिस्म या रगों का वह हिस्सा सूख जाता है या बेकार हो जाता है। अपने जिस्म को इस तरीक़े से जान देना सुरत यानी चैतन्य-शक्ति के लिए कोई अस्वाभाविक क्रिया या वेगार नहीं है, जिसे किसी और ने उसके ज़िम्मे डाल दिया हो, वल्कि बरख़िलाफ़ इसके सुरत का यह स्वाभाविक धर्म ही है, और जब से यह रचना में आई है तव से वरावर मुख़्तलिफ़ शक्लों में इस धर्म का पालन कर रही है। मनुष्य का शरीर और उसके मुतअल्लिक़ दसों इन्द्रियाँ और मन के चारों ख़वास यानी मन, चित्त, बुद्धि और अहङ्कार, कोई भी बग़ैर मुनासिब वर्ज़िश यानी कसरत के न तो ठीक तौर पर जग सकते हैं यानी चैतन्य हो सकते हैं, और न ही चुस्त व चालाक रह सकते हैं। वर्ज़िश यानी कसरत से हमारी मुराद उस क़िस्म की कार्रवाइयों से नहीं है जो अखाड़ों या स्कूलों में बच्चों से कराई जाती हैं बल्कि प्रकृति यानी कुदरत के सामान देखने पर जो हिलोरें हमारे मन के अन्दर उठती हैं और दौड़ धूप हम से बन पड़ती है वे, और

हमारे मन की बासनाएँ, और हमारी देह की ज़रूरियात, ये सब सुरत के लिए कुदरती कसरतें हैं जिनकी मदद से हमारा शरीर, मन और बुद्धि वगैरह चैतन्य हो जाते हैं। इन कसरतों का परिणाम सिर्फ़ यह होता है कि हमारी सुरत हमारे मन और शरीर के जड़ मसाले में पैवस्त हो जाती है। लेकिन मन और इन्द्रियों वगैरह के इस तौर पर चैतन्य होने से यह ख्याल नहीं करना चाहिए कि संग संग हमारी सुरत के जौहर के अन्दर भी चैतन्यता जग रही है। हमारे शरीर का चैतन्य होना और इन्द्रियों व मन, बुद्धि वगैरह का जग जाना एक बात है, और सुरत के जौहर का चैतन्य होना दूसरी बात है। इस से ज़ाहिर है कि साधारण तौर पर जो ज्ञान मनुष्य लेता है और जो कर्म वह करता है उनसे यह पता नहीं चल सकता कि हमारे अन्दर की चैतन्य-शक्ति यानी सुरत की असलियत क्या है, और शरीर में उसका निवास-स्थान कहाँ पर है, और शरीर और मन के घाटों पर किस प्रकार से उसका प्रकाश होता है। इन बातों को जानने के लिए हमको ज़रा गहरा गोता लगाना होगा।

१—मन और सुरत दो अलग अलग वस्तुएँ हैं।

मालूम होवे कि शरीर के अन्दर विचार या चिन्तवन करने के औज़ार को मन कहते हैं। यह मन अपनी

क्रिया करने के लिए सुरत की धार का वैसा ही आधीन है जैसे कि इन्द्रियाँ । क्योंकि सुरत की धारों के सिमट जाने पर, जैसा कि सुषुप्ति या मूर्छा की अवस्था में होता है, मन भी इन्द्रियों की मानिन्द बेकार हो जाता है। इससे साफ़ मालूम होता है कि मन और सुरत दो अलहदा अलहदा वस्तुएँ हैं और सुरत प्राण-शक्ति या जान के जौहर का एक केन्द्र है कि जहाँ से धारें निकल कर शरीर और मन को जान देती हैं ।

१०—प्रेत-योनि ।

प्रेत-विद्या के मुतअल्लिक़ तहक़ीक़ात करने वालों ने बहुत से ऐसे ग़ैर मामूली तजरुबात लिखे हैं कि जिनसे मालूम होता है कि देह छोड़ने पर सुरत यानी जीवात्मा का अभाव या नाश नहीं हो जाता बल्कि सुरत दूसरी अवस्थाओं में, जिनका ज़िक्र आगे आवेगा, प्रवेश कर जाती है । अगर वाक़ई ये अवस्थाएँ कोई वजूद रखती हैं तो चैतन्य-शक्ति के जौहर और नियमों की जाँच व दरियाफ़्त के सिलसिले में ये निहायत कारआमद साबित होंगी। इस लिए हम सलाह देंगे कि प्रेत-विद्या के जानकारों ने जो ग़ैरमामूली वाक़यात क़लमबन्द किये हैं उनकी इस तौर पर आज़मायश की जावे कि या तो हमेशा के लिए प्रेत-योनि को सच ही मान लिया जावे, या

हमेशा के लिए उसका निषेध ही कर दिया जावे। इस योनि की निस्बत जो कुछ कहा जाता है अगर वह सच साबित हो जावे तो उससे बहुत कुछ रोशनी चैतन्य-शक्ति के जौहर और नियमों पर पड़ेगी, और नीज़ भारी सहायता उसके भेद समझने में मिलेगी। अगर इस वक़ मान लिया जावे कि बढ़के क़ाबिल तजरुबेकारों ने प्रेत-विद्या की निस्बत जो कुछ तहक़ीक़ात की है वह सच है तो उस-से चन्द मुफ़ीदमतलब नतीजे बरामद होते हैं, मसलन् यह कि स्थूल शरीर छोड़ने पर सुरत सब से अव्वल एक सूक्ष्म शरीर धारण करती है जिसको नूरानी जिस्म कहते हैं, और यह कि उस सूक्ष्म शरीर में रहते हुए जीव के अन्दर स्थूल देह वाले राग व द्वेष कम व बेश बदस्तूर बने रहते हैं, बल्कि सूक्ष्म शरीर का रूप और रंग भी स्थूल शरीर के रूप व रंग से मिलता जुलता होता है। इन नतीजों से ज़ाहिर होता है कि स्थूल शरीर से छुटकारा पाने पर जीव की उस मानसिक प्रपंच से रिहाई नहीं हो जाती कि जिसकी वजह से उसको दुख व क्लेश भोगना पड़ता है, यानी स्थूल शरीर के छूटने पर वे सब कारण बदस्तूर बने रहते हैं कि जिनकी वजह से मन के बन्धन पैदा हुआ करते हैं और बाद में स्थूल देह देर अबेर धारण करनी पड़ती है। आगे चल कर हम तशरीह के साथ बयान करेंगे कि इन बन्धनों यानी

राग, द्वेष, लोभ, मोह वग़ैरह और संसारी बासनाओं ही की वजह से सुरत को इस स्थूल मण्डल में उतर कर स्थूल देह धारण करनी पड़ती है। इस लिए जब तक इन कारणों का मुकम्मल तौर पर सफ़ाया न किया जावेगा और इनके बजाय ऊँचे तबक़े (मण्डल) के चैतन्य यानी रूहानी केन्द्रों या भंडारों से सम्बन्ध क़ायम न होगा उस वक़्त तक जीव के संग मन और स्थूल मसाले का झगड़ा बराबर लगा रहेगा और इसकी वजह से सांसारिक दुख सुख का भोग अभोग बराबर करना पड़ेगा। इस दफ़ा में जो बयान हुआ उससे दो बड़े नतीजे बरामद होते हैं:—एक तो यह कि स्थूल देह छूट जाने पर भी प्रेत-योनि में जीव को बदस्तूर स्थूल देहधारियों की तरह दुख सुख भोगने पड़ते हैं और दूसरा यह कि स्थूल देह की मृत्यु होने पर जीव का नाश नहीं हो जाता।

११—चैतन्य-शक्ति और प्रकृति की स्थूल शक्तियों में भेद।

मालूम होवे कि चैतन्य-शक्ति प्रकृति की स्थूल शक्तियों की मिलौनी का परिणाम नहीं है। और अगर कोई ऐसा ख़्याल करे कि सुरत जड़ शक्तियों की मिलौनी का परिणाम है तो उसकी भूल प्रकृति की शक्तियों की मौजूदा हालत पर नज़र डालने से साबित हो सकती है। देखिये, संसार में जितनी भी स्थूल शक्तियाँ मुख़्तलिफ़ प्रसिद्ध रूपों में

अपना इज़्हार कर रही हैं उनमें एक भी ऐसी नहीं है कि जिसका इस मण्डल में कोई गुप्त ख़ज़ाना यानी भण्डार मौजूद न हो। अगर यह दुरुस्त है तो इस हिसाब से चैतन्य-शक्ति का भी कहीं पर भण्डार मौजूद होना चाहिए। स्थूल शक्तियों के गुप्त ख़ज़ाने मौजूद होने के सबूत में एक मिसाल पेश करते हैं। फ़र्ज़ करो कि किसी मोमबत्ती को दिया सलाई लगा कर रोशन किया जाता है। सवाल होता है कि बत्ती के रोशन होने का कारण क्या है? अगर दृष्टि सिर्फ़ जलने की क्रिया पर, जिससे कि शोला पैदा हो रहा है, रक्खी जावेगी तब तो जवाब यही होगा कि जलने की वजह से बत्ती रोशन हो रही है यानी जलने की क्रिया ही बत्ती के रोशन होने का कारण है। लेकिन यह दुरुस्त नहीं है। दरअसल बात यह है कि जलने वाले मसाले के परमाणुओं के अन्दर जो विशिष्ट-ताप यानी स्वाभाविक गुप्त अग्नि मौजूद है वह अपने आप को बड़े वेग के साथ प्रकाशित करती है और इससे बत्ती रोशन हो रही है। यही स्वाभाविक गुप्त अग्नि या हरारततबई प्रकट होने वाली अग्नि का गुप्त ख़ज़ाना यानी भण्डार है जिसके बग़ैर अग्नि का प्रकाश क़तई नामुमकिन है। मालूम होवे कि प्रकृति की दूसरी शक्तियों के लिए भी ठीक ऐसा ही इन्तिज़ाम है। और अगर चैतन्य-शक्ति पर यह उसूल लगाया जावे तो नतीजा निकलता है कि चैतन्य-शक्ति का भी इस

रचना में कहीं पर गुप्त भण्डार व मख़जन मौजूद होना चाहिए। दृष्टान्त की मदद से हरचन्द यहाँ पर चैतन्य-शक्ति के गुप्त भण्डार की मौजूदगी साबित कर दी गई, लेकिन यह सुबूत हमारा काफ़ी नहीं है, क्योंकि दृष्टान्त द्वारा क़ायम किये हुए अनुमान हमेशा प्रामाणिक नहीं होते; और जोकि हमको वैज्ञानिक रीति से तहक़ीक़ात करनी मंज़ूर है इस लिए सुबूत में हमको असल वाक़यात यानी तजरुबे की बातें पेश करनी मुनासिब हैं।

दफ़ा १० में हमने ज़रूरत इस बात की दिखलाई थी कि प्रेत-विद्या के जानने वालों ने जो बहुत सी अजीब व ग़रीब बातें बयान की हैं उनकी वैज्ञानिक लोग मुनासिब जाँच करके या तो हमेशा के लिए उनको मान लें, या रद्द कर दें। चुनांचे प्रेत-विद्या के माहिर कहते हैं कि प्रेत-योनि के होने में क़तई शुबह नहीं है। अगर सायन्स इस अम्र को तसलीम कर ले तो यह साबित करने के वास्ते कि चैतन्य-शक्ति अपने क़याम के लिए स्थूल देह की मुहताज नहीं है, यानी बग़ैर स्थूल देह के भी उसका वजूद बना रहता है, एक बड़ी पक्की और लाजवाब दलील हमारे हाथ लग जाती है। अलावा इसके अगर यह भी मान लिया जावे कि भूत प्रेत ऐसे मुक़ामात में आसानी से घुस जाते हैं कि जहाँ साधारण तीन नापों के क़ायदे के अन्दर बरतने वाला यानी स्थूल देहधारी नहीं पहुँच सकता तो नतीजा निकलेगा कि प्रेत-

योनि के जीव आकाश तत्त्व के से औसाफ़ में बरतने की क़ाबिलियत रखते हैं। और नीज़ इस तरह के बहुत से वाक़यात बयान किये जाते हैं जिनसे ज़ाहिर होता है कि ये जीव स्थूल देह को व्यापने वाली गर्मी सर्दी ज़रा भी महसूस नहीं करते। अगर यह भी दुरुस्त निकल आवे तो प्रेत-योनि में जीव की देह का आकाशिक होना पायेसुबूत को पहुँच जाता है। क्योंकि सायन्स मानता है कि आकाश तत्त्व पर गर्मी की किरनों का ज़्यादा असर नहीं होता। आकाशिक देहों की हस्ती यानी सत्ता मानने से मौजूदा कीटाणुवाद (Germ Theory) में, जिसका दावा है कि ख़ास दर्जे की हरारत यानी गर्मी के बाद कोई कीटाणु (Germ) क़ायम नहीं रह सकता, कुछ तब्दीली करनी होगी, क्योंकि जब आकाश तत्त्व पर गर्मी का ज़्यादा असर नहीं होता तो किसी भी दर्जे की गर्मी मौजूद रहते हुए आकाशिक देहधारी निहायत सहूलियत से ज़िन्दा रह सकते हैं। इस लिए यह कहना कि ख़ास दर्जे की गर्मी से आगे बढ़ने पर ज़िन्दगी का बीज यानी कीटाणु क़ायम रह ही नहीं सकता, ग़लत हो जाता है। इस सूरत में कीटाणुवाद (Germ Theory) का सिर्फ़ इस क़दर दावा ठीक रह जाता है कि ख़ास दर्जे की गर्मी से आगे बढ़ने पर स्थूल देह वाले कीटाणु ज़िन्दा नहीं रह सकते लेकिन आकाशिक और दूसरी सूक्ष्म देह वाले कीटाणुओं से

इस वाद (Theory) का कोई तअल्लुक़ नहीं रहता। ऊपर के बयान से इतना और नतीजा निकालना बेजा न होगा कि इस पृथ्वी पर जो अनेक स्थूल श्रेणी की योनियाँ देखने में आती हैं वे हमारी ज्ञानेन्द्रियों की गम्य से परे के ऐसे सूक्ष्म मण्डलों से उतर कर आई हैं कि जिनमें इस पृथ्वी के मानिन्द ज़िन्दगी का इज़्हार और योनियों की भरमार है। अगर यह भी नतीजा दुरुस्त मान लिया जावे तो उस हालत में तो मौजूदा कीटाणुवाद (Germ Theory) के एकदम पाँव उखड़ जाते हैं; क्योंकि फिर यह कहने के लिए क़तई गुंजायश नहीं रहती कि स्थूल कीटाणुओं ही से रफ़्ता रफ़्ता तरक्क़ी पाकर ऊँचे दर्जे वाली योनियाँ प्रकट हुई हैं। बरख़िलाफ़ इसके यह मानना होगा कि स्थूल कीटाणु ऊँचे दर्जे के चैतन्य मण्डलों व मख़्ज़नों से झड़ी हुई कमज़ोर और ख़फ़ीफ़ छीटें हैं। यह ख़्याल प्रकृति की शक्तियों की निस्बत जो कुछ तजरुबे में आता है उससे मेल भी खाता है, क्योंकि देखने में आता है कि पृथ्वी पर गर्मी, रोशनी वग़ैरह शक्तियाँ ऊँचे दर्जे के मख़्ज़नों ही से आ रही हैं।

कई एक सच्चे वाक़यात देखने से यह भी मालूम हुआ है कि सक्ते (समाधि) की अवस्था में मनुष्य की स्थूल क्रिया बन्द हो जाने पर उसकी दिमाग़ी और रूहानी ताक़तें बहुत ज़्यादा बढ़ जाती हैं और वह

आयन्दा होने वाली बातें और दूर दराज़ फ़ासलों के वाक़यात ठीक ठीक बयान कर देता है। इससे अनुमान होता है कि आगे बढ़ने पर यानी सुरत के ऊपर से झीने ग़िलाफ़ (कोश) उतरने से मनुष्य के अन्दर और भी ज़्यादा ऊँचे दर्जे की शक्तियाँ प्रकट होने लगेंगी और आख़ीर में सिर्फ़ निर्मल सुरत के जौहर का प्रकाश रह जावेगा। मतलब यह है कि जब सक्ते की हालत में स्थूल देह से थोड़ा सा हटाव होने पर मनुष्य के अन्दर ऊँचे दर्जे की शक्तियाँ प्रकट हो जाती हैं तो यह नामुमकिन नहीं है कि स्थूल देह से परे जो सूक्ष्म यानी झीने पर्दे हैं उनके भी दूर होने पर उसके अन्दर ज़्यादा ऊँचे दर्जे की शक्तियाँ जाग उठें और अगर सुरत के ऊपर से सब के सब पर्दे पूरे तौर से हटा दिये जावें तो ज़ाहिर है कि उस हालत में सिर्फ़ सुरत का बेग़िलाफ़ इज़हार रह जावेगा, और इस बेग़िलाफ़ अवस्था में सुरत निर्मल ज्ञान, सत्ता और आनन्द का एक केन्द्र यानी मख़ज़न दरसेगी।

अगर हम थोड़ी देर के लिए चैतन्य-शक्ति की जानिब से ख़्याल हटा कर प्रकृति की शक्तियों की तरफ़ तवज्जह दें तो मालूम होगा कि उन सब का वजूद महज़ उन पर्दों की हस्ती (सत्ता) पर मौक़ूफ़ है जिनकी मारफ़त वे अपना इज़हार करती हैं क्योंकि जब किसी शक्ति के पर्दे को हटा लिया जाता है

तो हरचन्द वह शक्ति नष्ट तो नहीं हो जाती लेकिन उसका वह स्वरूप जो पर्दे की मौजूदगी में क़ायम था फ़ौरन् ग़ायब हो जाता है । नमूने के तौर पर रासायनिक क्रिया (Chemical Action) की मिसाल को लो। यह क्रिया, जैसा कि सब किसी को मालूम है, परमाणुओं या ज़र्रों की अदला बदली का परिणाम है। अब अगर रचना के परमाणुओं और ज़र्रों वाले मण्डलों से परे कोई लोक मौजूद हो, जिसमें सृष्टि परमाणुओं से रहित हो, तो रासायनिक क्रिया, जैसी कि इस देश यानी परमाणुओं वाले मण्डल में देखने में आती है, उस लोक में हरगिज़ मुमकिन न होगी; क्योंकि जब वहाँ परमाणु ही नहीं हैं तो अदला बदली किसकी होगी और जब परमाणुओं की अदला बदली न होगी तो उसका परिणाम यानी रासायनिक क्रिया कैसे मुमकिन हो सकती है। अब दूसरी मिसाल बिजली की लो। अगर यह सच है कि बिजली-शक्ति किसी पर्दे के द्वारा अपना इज़हार करती है तो यह मानना होगा कि एक घाट तो ऐसा होना चाहिए कि जहाँ से उतर कर यह शक्ति काम करती है और दूसरा घाट ऐसा होना चाहिए कि जिसपर उतर कर यह काम करती है। अगर कोई कहे कि नहीं, बिजली के ये दो घाट अलग अलग नहीं हैं बल्कि एक ही हैं तो ऐसा कहना ग़लत होगा, क्योंकि अगर

ये घाट अलग अलग न हों तो निवास के घाट पर बिजली का हर वक़्त प्रकाश यानी इज़हार रहना चाहिए और बिजली की गुप्त अवस्था क़तई न होनी चाहिए। लेकिन यह तजरुबे के बिलकुल ख़िलाफ़ है, क्योंकि बिजली की गुप्त और प्रकट दोनों अवस्थाएँ देखने में आती हैं। इस लिए बिजली-शक्ति के ये दो घाट एक दूसरे से अलग मानने होंगे और उनमें परस्पर सम्बन्ध लम्बाई, चौड़ाई वग़ैरह नापों के बाहमी रिश्ते का सा मानना होगा यानी जिस तरह से कोई दो नाप बावजूद अलग अलग होने के एक दूसरे से मिले हुए भी रहते हैं इसी तरह बिजली के ये दो घाट अलग अलग रहते हुए आपस में मिले हुए भी हैं। इन दो में से एक को ऊँचा घाट और दूसरे को नीचा घाट कह सकते हैं। जब बिजली-शक्ति ऊँचे घाट से नीचे घाट पर उतरी हुई होगी तो यह नीचे का घाट चैतन्य यानी कारकुन होगा और जब वह इससे हटी हुई होगी तो यह घाट अचेत यानी बेकार होगा। अगर बिजली-शक्ति के सिलसिले में यह नीचे का घाट आकाश तत्त्व माना जावे तो लाज़िमी तौर पर नतीजा निकलता है कि बिजली हर स्थान में व्यापक नहीं है बल्कि सिर्फ़ अपने निवास-स्थान ही के अन्दर महदूद है। यहाँ पर यह जतला देना ज़रूरी मालूम होता है कि तमाम रचना सिर्फ़ तीन प्रसिद्ध नापों ही की हद के अन्दर ख़तम

नहीं है। अलबत्ता मनुष्य को जो दृष्टि व बुद्धि मिली है उनकी मारफ़त उसको सिर्फ़ तीन ही नापों का ज्ञान होता है यानी हर एक वस्तु जो मनुष्य के ज्ञान में आती है वह तीन नाप वाली होती है। रेखागणित (Geometry) में बतलाया जाता है कि रेखा या लकीर एक नाप वाली वस्तु है और चतुष्कोण दो नाप वाली वस्तु है और सब ठोस चीज़ें तीन नाप वाली वस्तुएँ हैं। लेकिन लकीर और चतुष्कोण सिर्फ़ ख़्याली वस्तुएँ हैं और तीन नाप में से एक या दो को ख़्याल में रख कर उनका अनुमान कर लिया जाता है। अब अगर कोई ऐसी योनि हो कि जिसके जीवों की बुद्धि सिर्फ़ दो नाप वाली वस्तुओं का ज्ञान ले सकती हो तो उस योनि को ठोस यानी तीन नाप वाली वस्तुओं का कभी ज्ञान न हो सकेगा। ठीक इसी तरह मनुष्यों को, जिनकी दृष्टि व बुद्धि तीन नाप की वस्तुओं का ज्ञान ले सकती है, तीन नाप से परे का कोई ज्ञान नहीं हो सकता। लेकिन प्रसिद्ध तीन नाप के अलावा और भी कई नाप हैं। इस लिए मौजूदा दृष्टि व बुद्धि की मदद से जो अनुमान रचना की निस्बत मन ने कर रक्खा है उसको बदलना होगा और यह मानने के लिए तैयार होना होगा कि रचना में ऐसे ऐसे मण्डल मौजूद हैं कि जो नज़राई देने वाले लोकों से कहीं ज़्यादा फैलाव वाले

और सूक्ष्म हैं और जो हमारी निगाह में आने वाली हर वस्तु के अन्दर बाहर व्यापक व मुहीत (परिवेष्टक) हैं और जिनका हमको इस वक़्त कोई ज्ञान यानी इल्म हासिल नहीं है। अलावा इसके बहुतसे वाक़यात इस क़िस्म के मनुष्यों के तजरुबे में आते हैं कि जिनसे तीन नाप की हद्द से परे क्रियाओं का होना साफ़ मालूम होता है। इस पुस्तक के तीसरे यानी रचना भाग में हम इस मज़मून की और ज़्यादा तशरीह करेंगे।

अगर प्रकृति की दूसरी शक्तियों की भी छान बीन की जावे तो आसानी से मालूम हो सकता है कि पर्दे में तब्दीली होने से इनके मौजूदा रूपों में भी तब्दीली हो जाती है। चुनांचे तीसरी मिसाल हरारत या ताप की लो। यह कम व बेश मानी हुई बात है कि हरारत या ताप का गुज़र होने से आकाश तत्त्व में गर्मी नहीं आती है इस लिए यह कहना बेजा न होगा कि गर्मी या ताप की अवस्था पैदा करने वाला मसाला आकाश तत्त्व से कोई अलहदा वस्तु है और बलिहाज़ गर्मी की अवस्था के इन दोनों में आपस में ज़्यादा सम्बन्ध नहीं है। अगर इनमें काफ़ी सम्बन्ध होता तो दोनों ही के ऊपर गर्मी का असर आता। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि हरारत या गर्मी की अवस्था आकाश तत्त्व सम्बन्धी अवस्था नहीं है और आकाश तत्त्व के अयन (Ions) गर्मी के इज़हार में कोई हिस्सा

नहीं लेते। स्थूल प्रकृति यानी माद्दा की और सूरतों यानी जल, पृथ्वी वगैरह पर अलबत्ता गर्मी का असर होता है। हमारा यह ख्याल है कि गर्मी की अवस्था प्रकृति के अणुओं यानी माद्दा के ज़र्रों की उस विभक्त (अलहदा अलहदा-पन की) दशा का नाम है जो प्रकृति के साधारण स्थूल (पृथ्वी, जल, वायु) अवस्था और अयन अवस्था के बीच की है। इस लिए जो कारण माद्दा यानी प्रकृति के परमाणुओं (Atoms) को विभक्त करके अयन अवस्था में तब्दील करता है वही गर्मी की अवस्था पैदा करता है और यह लाज़िमी नहीं है कि विभक्त करने वाला कारण खुद गर्मी ही हो। शक्ति अपनी हर हालत में परमाणुओं को पृथक् करने की समर्थता रखती है, इस लिए ज्योंही उसकी धारों का परमाणुओं के मण्डल से गुज़र होता है आप से आप गर्मी का इज़हार हो जाता है। चुनांचे बिजली जो निहायत बलवती है गरमी से बिलकुल रहित होती है, लेकिन जब इसका इज़हार परमाणुओं के घाट पर होता है तो फ़ौरन गर्मी उत्पन्न हो जाती है। इससे ज़ाहिर है कि परमाणुओं की ख़ास विभक्त दशा ही के कारण गर्मी की अवस्था ज़हूर में आती है और अगर परमाणुओं की यह विभक्त दशा किसी तरह से ग़ायब कर दी जावे तो ग़र्मी की अवस्था आप से आप ग़ायब हो जावेगी। पस इन सब वजूहात से साबित है कि प्रकृति की जितनी

भी शक्तियाँ हैं उनके मौजूदा रूपों का वजूद उन पर्दों की मौजूदगी ही पर क़ायम है कि जिनकी मारफ़त वे अपना इज़हार किया करती हैं और पर्दे हटा लेने पर इनका पर्दों द्वारा प्रकट रूप फ़ौरन् ग़ायब हो जाता है ।

१२—पुराने ज़माने के पाँच मूल तत्त्व ।

परमाणुओं की जिस विभक्त दशा का ऊपर वर्णन हुआ पुराने ज़माने में उस अवस्था को प्राप्त प्रकृति को बुज़ुर्ग लोग अग्नि तत्त्व कहते थे । इस तरह पर बाक़ी के और चार तत्त्व भी प्रकृति की दूसरी चार (ठोस, तरल, वायव्य और आकाशीय) अवस्थाओं के नाम थे । लोगों का यह ख़्याल ग़लत है कि साधारण मिट्टी और पीने के जल वग़ैरह को वे लोग इन नामों से पुकारते थे । बरख़िलाफ़ इसके जैसा कि बयान किया गया प्रकृति यानी माद्दे की ठोस, तरल वग़ैरह अवस्थाओं को ही मूल तत्त्व कहा जाता था यानी प्राचीन बुज़ुर्गों का मतलब पाँच मूल तत्त्वों से उन पाँच अवस्थाओं को प्राप्त प्रकृति से था जो निहायत उत्तम वैज्ञानिक रीति से दर्जे बदर्जे क़ायम हैं ।

१३—सुरत यानी चैतन्य-शक्ति ही आदि-शक्ति है ।

अब हम लौट कर चैतन्य-शक्ति की तरफ़ आते हैं और उसकी परीक्षा शुरू करते हैं । मुनासिब होगा कि

जो अमल पर्दे यानी गिलाफ़ दूर करने का प्रकृति की शक्तियों पर लगाया गया था वह चैतन्य-शक्ति पर भी लगा कर देखा जावे कि ऐसा करने से चैतन्य-शक्ति का क्या हाल होता है। इसके लिए मौत और सक्ते या मूर्छा वग़ैरह की अवस्थाओं की जाँच करना मुनासिब होगा क्योंकि इनमें से पहली यानी मौत की अवस्था में स्थूल शरीर का पर्दा बिलकुल अलहदा हो जाता है और बाक़ी की अवस्थाओं में यह बेकार रहता है। मनुष्य के अन्दर मामूली तौर पर सुरत के चार ख़वास देखने में आते हैं:– अव्वल ज्ञान लेना, दूसरे दुख सुख का अनुभव करना, तीसरे संकल्प विकल्प यानी ख़्यालात उठाना व दूसरी मानसिक क्रियाएँ करना और चौथे ताक़त या जान देना, जिसकी मदद से खाना हज़म हो कर शरीर तैयार होता है। लेकिन ये चारों ख़वास प्रेत-योनि के अन्दर भी दिखलाई पड़ते हैं और सक्ते की हालत हो जाने पर भी देखने में आते हैं बल्कि स्थूल देह की क्रिया हटने या बन्द होने पर अलावा इन ख़वास के क़ायम रहने के मनुष्य के अन्दर ज्ञान लेने की ऊँचे दर्जे की शक्तियाँ और आगामी यानी होनहार बातों के जानने व साधारण मनुष्य-गति से परे के घाट में प्रवेश करने वग़ैरह की ताक़तें जाग उठती हैं। इससे लाज़िमी तौर पर नतीजा निकलता है कि प्रकृति की शक्तियों के दस्तूर के ख़िलाफ़ चैतन्य-

शक्ति के ग़िलाफ़ यानी पर्दे दूर होने पर उसके सब के सब ख़वास बराबर क़ायम रहते हैं । इस लेख में प्रेत-योनि का जो हमने ज़िक्र किया है उससे यह नहीं समझना चाहिए कि देह छोड़ने पर सभी जीव प्रेत-योनि को प्राप्त होते हैं । इस पुस्तक के तीसरे भाग के दफ़ा ११४ में हम बयान करेंगे कि देह छोड़ते वक़्त जीव पर क्या हालत गुज़रती है और अनेक दर्जों के जीव जो इस रचना में विचर रहे हैं उनके लिए मौत के बाद का इन्तिज़ाम किन नियमों के अनुसार होता है । यहाँ पर प्रेत-योनि का ज़िक्र सिर्फ़ इस ग़रज़ से किया गया है कि प्रत्यक्ष सबूत पेश करके यह साबित किया जावे कि स्थूल ग़िलाफ़ों के अलहदा होने पर सुरत के निज ख़वास न सिर्फ़ बदस्तूर क़ायम रहते हैं बल्कि उनका इज़्हार ज़्यादा बेग के साथ होने लगता है ।

पीछे दफ़ा ६ में बयान किया गया है कि हमारा मन एक ऐसा औज़ार है कि जिसके द्वारा हम अपनी मुख़्तलिफ़ मानसिक क्रियाएँ करते हैं । जब मन को मानसिक क्रिया करने का औज़ार कहा तो मानना होगा कि मन भी एक पर्दा ही है जिसकी मारफ़त मानसिक क्रियाओं का इज़्हार होता है । दफ़ा २१ में आगे चल कर हम दिखलावेंगे कि चैतन्य-शक्ति कैसे मन की मदद के बग़ैर अपने निज ख़वास का इज़्हार कर सकती है । इस वक़्त

सिर्फ़ इस क़दर जतला देना काफ़ी होगा कि सुरत के ऊपर से दर्जे बदर्जे स्थूल व सूक्ष्म पर्दे हटने पर इसके निज ख़वास ज़्यादा ही ज़्यादा रोशन होते जाते हैं और अगर इसके ऊपर से तमाम के तमाम पर्दे स्थूल व सूक्ष्म दूर कर दिये जावें तो आख़ीर में सुरत यानी चैतन्य-शक्ति शुद्धस्वरूप हो जावेगी और उस अवस्था में यह शक्ति आदि-शक्ति, ज्ञान और आनन्द का मख़ज़न यानी स्रोत नमूदार होगी।

अगर ऊपर की सब दलीलें दुरुस्त हैं तो नतीजा निकलता है कि प्रकृति की तमाम शक्तियों का वजूद चैतन्य-शक्ति के आधार ही पर क़ायम है और इस नतीजे की दुरुस्ती जानवरों व वनस्पतियों के बीजों के उगने व परवरिश पाने की निस्बत जो क़ुदरत में इन्तिज़ाम है उस पर निगाह डालने से साबित होती है। चुनांचे देखने में आता है कि जब तक सुरत यानी रूह का किसी देह के अन्दर निवास रहता है उस वक़्त तक सब तत्त्व और प्रकृति की शक्तियाँ बाहम (परस्पर) मेल से काम करती हैं और उस देह के क़ायम रहने और बढ़ने में मददगार रहती हैं, लेकिन जिस दम सुरत देह से अलहदा हो जाती है, सब का सब कारख़ाना उलट जाता है और वे शक्तियाँ और तत्त्व तोड़ फोड़ की कार्रवाई शुरू कर देते हैं और अन्त में जहाँ से वे आये थे वहाँ लौट जाते हैं। अगर सुरत अंश की निस्बत यह उसूल दुरुस्त

है कि उसकी स्थूल देह का वजूद सुरत अंश की मदद से क़ायम होता है और उसीके आसरे क़ायम रहता है तो उसके अंशी यानी सुरत के भण्डार सत्-करतार की निस्बत इस उसूल का दुरुस्त होना और भी ज़्यादा लाज़िमी ठहरता है और इससे साबित होता है कि उस सत्-करतार ही की चैतन्य धारों के प्रताप से यह तमाम रचना रूपवान हुई है और इसके क़याम और इन्तिज़ाम के लिए अटल और दानाई में मुकम्मल नियम उसी आदि कारण ने क़ायम किये हैं।

१४—सुरत का निज भण्डार।

यह पीछे बयान कर आये हैं कि सुरत सत्, चित् और आनन्द रूप है। अब हम चाहते हैं कि यहाँ पर संसार के उन आला से आला यानी हद दर्जे के आनन्द वग़ैरह की ख़्याली तसवीर पेश करें जो जीव के तजरुबे में आ सकते हैं, क्योंकि इसकी मदद से चैतन्य-शक्ति के आदि और निज भण्डार यानी सच्चे और परम समर्थ कुल्ल-मालिक की अवस्था का किसी क़दर अनुमान हो सकेगा (हरचन्द यह अनुमान निहायत ओछा और स्थूल होगा)। हम विचार सकते हैं कि परम सुहावन रूपकों के ख़्याल में आने, महा प्रकाशवान और तीक्ष्ण बुद्धि के चमकने, अत्यन्त मनोहर राग के अलापने, परम

सुन्दर रूप के दरसने और दूसरी इन्द्रियों के मुतअल्लिक़ आला दर्जे के रस प्राप्त होने पर, जिनकी वजह से इन्सान हद दर्जे का सरशार और अज़ख़ुदरफ़्ता हो जाता है, हमारे अन्दर क्या हालत होती है। अब अगर इन्सान के वजूद में मुक़ीम सुरत अंश के अन्दर, जो कि निहायत ही कम हक़ीक़त किरण चैतन्य-शक्ति की है और अंशी निज-भण्डार के मुक़ाबिले में जिसकी कोई हैसियत नहीं है, क़ाबिलियत इस क़दर मग्न व रत होने की मौजूद है तो अंशी चैतन्य-भण्डार के परम आनन्द, परम ज्ञान और परम सत्ता की कैफ़ियत का क्या वार पार हो सकता है। वह चैतन्य-भण्डार कुल्ल-मालिक का धाम है और उस-में परम शक्ति, परम आनन्द और परम सुख ही का राज्य है और किसी तरह के रद्द व बदल व क्षीणता का वहाँ पर दख़ल नहीं है और वह धाम अमर व अविनाशी है। कुल्ल-मालिक और उसके धाम का रचना के और स्थानों और उनके बासियों से क्या सम्बन्ध है यह आगे चल कर तफ़सील के साथ बयान करेंगे। इस वक़्त सिर्फ़ इस क़दर जतलाना चाहते हैं कि हरचन्द कुल्ल-मालिक की किरनियाँ हर जगह मौजूद हैं लेकिन उसका निज धाम एक अलग ही धाम है और वह मन और माया के मण्डलों से परे वाक़े है। मन और माया के मण्डल कुल्ल-मालिक के धाम से अलहदा बतलाने पर अगर कोई

एतराज़ करे कि वह मालिक अनन्त व अपार नहीं रहता, तो हम सवाल करते हैं कि आकाश के अन्दर बादल का एक टुकड़ा मौजूद होने से क्या आकाश की अनन्तता व अपारता जाती रहती है। (मुलाहिज़ा करो दफ़ा ६९ भाग तीसरा)

१५—परमार्थ के उद्देश्य की प्राप्ति ।

ऊपर की दफ़ा से पता चल जाता है कि इस पुस्तक के शुरू में परमार्थ का जो उद्देश्य क़ायम किया गया था उसकी प्राप्ति कब और कहाँ पहुँचने पर हो सकती है, क्योंकि यह दरियाफ़्त हो गया है कि सुरत जब सच्चे कुल्ल-मालिक के निर्मल चैतन्य-धाम में दाख़िल होगी तो अजर और अमर हो जावेगी और सब प्रकार के दुख व क्लेश से छुटकारा पा कर कुल्ल-मालिक के दर्शन के परम आनन्द में सदा मग्न व सरशार रहेगी।

१६—सुरत और उसका भण्डार ।

यह मालूम होने पर कि किस गति के मिलने यानी किस देश में पहुँचने से परमार्थ के उद्देश्य की प्राप्ति जीव के लिए मुमकिन है, यह दरियाफ़्त करना ज़रूरी हो जाता है कि कुल्ल-मालिक का वह देश कहाँ पर वाक़ै है और सुरत अंश यानी पंथी का मौजूदा हालत में क़याम किस जगह पर है; क्योंकि बग़ैर इसके जो भी जतन या

उपाय तजवीज़ होंगे वे मुहमल यानी अनिश्चित होंगे और उनके बन पड़ने व न बन पड़ने की निस्बत कोई राय क़ायम नहीं की जा सकेगी। इस लिए पहुँचना कहाँ है और चलना कहाँ से होगा, अब इन्हीं दो बातों की निस्बत तहक़ीक़ात करते हैं।

यह बयान किया जा चुका है कि चैतन्य-शक्ति ही इस रचना में आदि-शक्ति (Prime Energy) का मखज़न यानी सोत है और प्रकृति की सब शक्तियाँ इसीके आसरे क़ायम हैं। ऐसी सूरत में यह ख़्याल करना ग़लत न होगा कि चैतन्य-शक्ति में और प्रकृति की शक्तियों में बहुत सी सिफ़तें मिलती जुलती मौजूद होंगी और यह भी मानना ग़लत न होगा कि प्रकृति की शक्तियों के मुआफ़िक़ चैतन्य-शक्ति में उसके निज भण्डार के ख़वास का असर मौजूद रहता है और जब चैतन्य-शक्ति की धार किसी मुक़ाम पर एकत्र हो कर कोई केन्द्र या नुक़्ता (Focus) क़ायम करती है तो उस मुक़ाम पर दशा आदि-भण्डार की दशा से कुछ कुछ मुशाबह होनी चाहिए और अगर धार को एकत्र करने वाले शीशे या पर्दे का मसाला किसी तरह की रुकावट न डाले तो उस सूरत में केन्द्र की दशा और आदि-भण्डार की दशा में मुकम्मल मुशाबहत होगी। मतलब यह है कि जैसे आतिशी शीशे से गुज़रने पर सूरज की किरनियाँ बाहर एक केन्द्र (Focus) बनाती हैं और उस केन्द्र की

शक्ल सूरत और नीज़ बहुत से दूसरे अंग किरनियों के भण्डार यानी सूरज से मुशाबह रहते हैं और जिस क़दर शीशा साफ़ होता है उसी क़दर केन्द्र भी साफ़ और सूरज के ठीक मुशाबह होता है; ऐसे ही चैतन्य-शक्ति की धारों से बने हुए केन्द्र भी दरमियानी शीशे या पर्दे के बिलकुल साफ़ शफ़्फ़ाफ़ होने की सूरत में चैतन्य-शक्ति के भण्डार के मुशाबह होने चाहिएँ। लेकिन इस स्थूल सृष्टि में शीशे या पर्दे के नाक़िस होने की वजह से इस तरह की मुकम्मल मुशाबहत वाली सूरतें बिलकुल नायाब हैं। अलबत्ता मनुष्य-चोले में, जो कि पृथ्वी पर चैतन्य-अंश की सब से बढ़ कर चैतन्य अवस्था है, चैतन्य-भण्डार की बहुत कुछ नक़ल देखने में आती है। इस लिए रचना यानी आलमे कबीर का हाल जानने और उसके मुख़्तलिफ़ भागों की तक़सीम समझने और परम आनन्द का धाम तहक़ीक़ करने के लिए सब से सहल और असली तरीक़ा मनुष्य-शरीर का भेद दरियाफ़्त करना क़रार पाता है। अगर कोई यह हौसला करे कि बढ़िया आलाजात और औज़ारों की मदद से आलमे कबीर की रचना का भेद जान ले तो बिलकुल बेमसरफ होगा; क्योंकि आले औज़ार बेचारे क्या करेंगे जब कि ख़ुद हमारी ज्ञानेन्द्रियों की, जिन पर आले और औज़ार लगाए जावेंगे, इस रचना के नीचे ही दर्जे के बहुत से सूक्ष्म मण्डलों में कोई गति यानी पहुँच

नहीं है। इस लिए रचना का भेद समझने के वास्ते चैतन्य-भण्डार से आई हुई किरणरूपी सुरत-अंश का हाल दरियाफ़्त करना ही बन पड़ने वाला तरीक़ा रह जाता है।

१७—मनुष्य-योनि के तीन मुख्य विभाग।

मनुष्य के स्थूल शरीर और उसकी मानसिक क्रियाओं की जाँच करने से मालूम होता है कि मनुष्य में तीन मुख्य चीज़ें हैं:—

(१) बाहरी जामा या शरीर और उसके अन्दर क़ायम इन्द्रियाँ— ये पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश तत्त्वों की मिलौनी से और प्रकृति की उन सब जड़ शक्तियों की मदद से, जो चैतन्य-शक्ति का मुख़्तलिफ़ पर्दों की मारफ़त इज़हार होने से उत्पन्न होती हैं, तैयार हुई हैं।

(२) मन— इसकी बैठक अन्तःकरण में है जिसके चार अङ्ग हैं:—

अव्वल मन, जिससे अन्तर में ख़्यालात पैदा होते हैं।

दूसरा चित्त या तवज्जह की धारें, जिनके द्वारा ख़्यालात मुख़्तलिफ़ वस्तुओं की जानिब मुख़ातिब किये जाते हैं और उनके संग जोड़े जाते हैं।

तीसरा बुद्धि, जिसके द्वारा मनुष्य को कुल बातों का बोध होता है यानी समझ आती है और जो तवज्जह की धार के एकत्र होने से प्रकट होने वाला प्रकाश है।

चौथा अहङ्कार, जिससे मैं व तू की तमीज़ क़ायम होती है ।

(३) सुरत यानी चैतन्य-शक्ति– यह पहली दो चीज़ों यानी शरीर और मन को जान देती है और इसकी सहायता के बग़ैर वे दोनों बेकार रहते हैं ।

१८–मनुष्य-शरीर में छः चक्र ।

ऊपर की दफ़ा में बयान किये हुए तीन मुख्य विभागों के अलावा, जिनको आलमे सग़ीर के तीन बड़े दर्जे कहना चाहिए, पहले विभाग यानी शरीर के अन्दर छः उपभाग देखने में आते हैं जिनको षट्-चक्र कहते हैं और जिनकी तफ़सील यह है:–

(१) गुदाचक्र यानी मूलाधार– इसका काम फ़ुज़ला यानी मल ख़ारिज करना है ।

(२) इन्द्रियचक्र–इसका काम औलाद पैदा करना यानी ऐसे बीज का बनाना है जो तरक्क़ी पा कर आख़ीर में मनुष्य-चोला बन जावे ।

(३) नाभिचक्र–इसका काम खाना हज़म करना और तमाम शरीर की परवरिश करना है ।

(४) हृदयचक्र–यह छाती की हड्डी के निचले सिरे के क़रीब, जिसको कौड़ी का मुक़ाम कहते हैं, वाक़े है। इसका काम तमाम शरीर का बंदोबस्त करना है ।

संकल्प विकल्प सब इसी स्थान से पैदा होते हैं। रंज व खुशी और उम्मीद व खौफ वग़ैरह का असर इसी मुक़ाम पर होता है। अक्सर ऐसा हुआ है कि दिल की हरकत और नब्ज़ की चाल बन्द हो जाने पर यह चक्र अपनी क्रिया बदस्तूर करता रहा और दुख सुख वग़ैरह का अनुभव और ज्ञानेन्द्रियों व कर्मेन्द्रियों की क्रिया भी कुछ देर तक बदस्तूर जारी रही लेकिन जब इस चक्र पर कोई ऐसी चोट लग गई कि जिससे इसकी क्रिया बिलकुल रुक गई तो शरीर का सब का सब कारखाना मानसिक क्रियाओं के समेत क़तई बन्द हो गया।

(५) कण्ठचक्र—इसका काम सूक्ष्म प्राण का रवाँ यानी चालू रखना है।

(६) आज्ञाचक्र—जो दोनों आँखों के मध्यस्थान में नाक की जड़ से क़रीब एक इंच अन्दर की जानिब वाक़ै है और सुरत यानी रूह की नशिस्त या बैठक का मुक़ाम है।

नीचे के चार चक्रों की क्रियाएँ कम व बेश प्रकट हैं और हर कोई उनको समझता है लेकिन ऊपर के दो चक्रों की क्रियाएँ सिर्फ़ उन खास शग़लों या साधनों की कमाई करने से जानी और परखी जा सकती हैं जिनका आगे चल कर ज़िक्र किया जावेगा। इन साधनों की कमाई

के दौरान में वे सब सुरत के खिँचाव की हालतें, जो मृत्यु से पहले और मृत्यु होने पर जीव पर आती हैं, होश व हवास क़ायम रहते हुए दर्जे बदर्जे अभ्यासी पर गुज़रती हैं और उस वक़्त जो तजरुबे प्राप्त होते हैं उनके द्वारा हमारे ऊपर के लेख की दुरुस्ती की काफ़ी व शाफ़ी अमली जाँच हो सकती है । आयन्दा चल कर अगर वैज्ञानिक लोग ऐसी तरकीबें निकाल लेवें कि जिनके ज़रिये से मरते हुए इन्सान के जिस्म में ज़िन्दा और मुर्दा हिस्सों के बाहमी फ़र्क़ की तमीज़ हो जावे तो उनकी मारफ़त भी हमारे ऊपर के लेख की तसदीक़ हो सकती है और ग़ालिबन इस प्रकार की तसदीक़ वैज्ञानिक दृष्टि से ज़्यादा प्रामाणिक होगी ।

१९—ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय की धारें ।

स्थूल शरीर, इन्द्रियों और छः चक्रों का सब काम दो मुख्य धारों की मारफ़त चलता है जिनका हाल मुख़्तसर तौर पर नीचे लिखा जाता है ।

पहली अन्तर्मुखी धार—जो नक़्श बाहर से ज्ञानेन्द्रियों पर पड़ते हैं उनको यह धार अन्दर पहुँचाती है और शरीर के पालन पोषण व बढ़ने के लिए जान भी इसी धार की मारफ़त मिलती है । यह सुरत की धार है और अन्तर्मुखी और आकर्षक है । इसका इज़हार खास कर दो

रूपों में होता है, जिनमें से एक को बोधनात्मक (Sensory) और दूसरे को रचनात्मक (Structural) कहते हैं। बोधनात्मक का मतलब बोधन यानी ज्ञान कराने वाला और रचनात्मक का मतलब शरीर रचने या तैयार करने वाला है। अव्वल क़िस्म का इज़हार मानसिक क्रियाओं वाले सब जानदारों के अन्दर देखने में आता है। ये क्रियाएँ रगों और दूसरी सूक्ष्म नालियों की मारफ़त हुआ करती हैं। सुरत-धार का बोधनात्मक अङ्ग रचनात्मक अङ्ग के मुक़ाबले में ऊँचा दर्जा रखता है। इस पुस्तक के रचना भाग में इस अङ्ग के मुतअल्लिक़ हम मुफ़स्सल ज़िक्र करेंगे। रचनात्मक अङ्ग अगर्चे नीचा दर्जा रखता है ताहम रचना के काम के लिए यह निहायत ज़रूरी है। आगे चल कर रचना के बयान में इन दोनों अङ्गों में जो परस्पर सम्बन्ध है उसका भी मुफ़स्सल बयान करेंगे। जानदारों के अन्दर दूसरा अङ्ग पहले अङ्ग के आसरे ही काम करता है क्योंकि उनके स्थूल और सूक्ष्म घाटों से बोधनात्मक अङ्ग बिलकुल जाते रहने पर रचनात्मक अङ्ग का भी काम बन्द हो जाता है और आख़िरकार शरीर मुर्दा हो जाता है।

दूसरी बहिर्मुखी धार—इसका काम मन के अन्दर इरादा क़ायम करना (इच्छा उठाना), देह और इन्द्रियों का चलाना, फ़ुज़्ले का ख़ारिज करना और संहार-क्रिया

करना है। मनुष्य-शरीर में सब बहिर्मुखी इन्तिज़ाम—शारीरिक व मानसिक—इसी धार की मारफ़त होता है। यह धार मन से प्रकट होती है। बनस्पति-योनि में इरादे यानी इच्छा की क्रिया का बिलकुल अभाव रहता है और देह का चलाना सिर्फ़ शरीरवृद्धि यानी जिस्म के बढ़ने की शक्ल में दिखाई देता है मगर बाक़ी के दो खवास यानी फुज़ला निकालने और संहार करने के काम इस योनि में जानदारों के मुक़ाबले में अगर ज़्यादा नहीं तो बराबर प्रबल ज़रूर रहते हैं। मन, जो कारकुन यानी चलायमान होने पर सब मानसिक क्रियाओं में शामिल होता है, बनस्पति-योनि में सोया रहता है और ऐसे ही सुरत भी बलिहाज़ बोधनात्मक क्रियाओं के इस योनि में अचेत रहती है। यह बहिर्मुखी धार भी सुरत-धार के रचनात्मक अङ्ग की तरह उसके बोधनात्मक अङ्ग के आश्रित रहती है क्योंकि इसके पूरे तौर पर खिँच जाने से बहिर्मुखी धार का भी सब काम बन्द हो जाता है।

ऊपर के लेख से ज़ाहिर है कि सुरत और मन दोनों की धारों के बाहम मिल कर काम करने से मनुष्य-शरीर और उसके छः चक्र तैयार हुए हैं और सुरत मन के पर्दे के द्वारा शरीर के अन्दर ताक़त, जान और चैतन्य खवास बहम पहुँचाती है।

२०—ब्रह्माण्डी मन का देश और उसके छः उपभाग।

मन के ख़्यालात और राग द्वेष का हमारे शरीर पर भारी असर पड़ता है यानी हरचन्द ख़्यालात और राग द्वेष मन के अन्दर व्यापते हैं लेकिन शरीर पर भी उनका भारी प्रभाव पड़ता है। इसके समझाने के लिए हम एक दृष्टान्त देते हैं। ख़्याल करो कि कोई चिड़चिड़े मिज़ाज वाला शख़्स है जो छोटी छोटी बातों पर वक़्त बे-वक़्त क्रोध में आ जाता है। क्रोधवश होने पर उसके चेहरे की नसें ख़ास तौर पर खिँच जाती हैं और चूँकि क्रोध अङ्ग उसके अन्दर बार बार प्रकट होता है इसलिए नसें बार बार एक ही तौर पर खिँचती हैं। बार बार खिँचाव होने से चेहरे की नसों का तनाव मुस्तक़िल तौर पर क़ायम हो जाता है; यहाँ तक कि उसकी औलाद के अन्दर भी वह अङ्ग पहुँच जाता है। इस दृष्टान्त की बुनियाद पर कहा जा सकता है कि मनुष्य के मन के अन्दर जो भाव प्रबल होता है उसका अक्स उसके शरीर पर ज़ाहिर हुआ करता है और उसके बीज की मारफ़त ऐसे भाव उसकी नसल के अन्दर प्रवेश कर जाते हैं। लेकिन अगर यह उसूल मनुष्य के अंशरूप मन व सुरत के घाटों पर थोड़ी देर व्यापने वाली अवस्थाओं की निस्बत दुरुस्त है तो आलमे कबीर के घाटों और मन व सुरत के सब केन्द्रों की निस्बत भी दुरुस्त होना चाहिए। इस

लिए इस उसूल से और मनुष्य-शरीर की निस्बत जो भेद पीछे दरियाफ़्त हुआ उसकी रू से नतीजा निकलता है कि आलमे कबीर में मनुष्य-शरीर के छः चक्रों के मुताबिक़ छः स्थान मौजूद हैं और उनके परे सुरत के भण्डार से मिला हुआ ब्रह्माण्डी मन का एक भारी देश है, जिसमें मनुष्य-शरीर के अन्दर निवासी अंशरूप मन के स्थानों के मुवाफ़िक़ छः स्थान क़ायम हैं।

सन्तमत में ब्रह्माण्डी मन के इस देश को ब्रह्माण्ड कहते हैं, जिसके लफ़्ज़ी मानी ब्रह्म यानी ब्रह्माण्डी मन का अण्डाकार देश है। इस ब्रह्माण्ड देश में परब्रह्मपद (ब्रह्म से परे का मण्डल) भी शामिल है। बग़ैर इस पद के शामिल किये ब्रह्माण्ड के छः उपभाग पूरे नहीं होते और ऐसी सूरत में मनुष्य-शरीर के छः चक्रों और ब्रह्माण्ड के स्थानों में (जिन-की कि छः चक्र छाया हैं) पूरी मुताबिक़त नहीं होती।

दफ़ा १८ में यह बयान हुआ था कि मनुष्य-शरीर का छठा चक्र सुरत की बैठक का स्थान है और पाँचवें चक्र में सूक्ष्म प्राण का और चौथे चक्र में मन का निवास है। इन मुक़ामों पर और नीज़ बाक़ी के और चक्रों के मुक़ामों पर जो रगों के केन्द्र (Nerve Centres) दिखाई देते हैं वे सब स्थूल मसाले से बने हैं लेकिन शक्ति के केन्द्र (Force Centres), जो उन चक्रों के मुतअल्लिक़ हैं, निहायत सूक्ष्म हैं और उनका रचना यानी आलमे

कबीर के अन्दर अपने सम्बन्धी सूक्ष्म मण्डलों से बराबर तअल्लुक़ यानी मेल रहता है और यह भी देखने में आता है कि इन रगों के केन्द्रों में सुरत की ताक़त मन के पर्दे की मारफ़त आती है क्योंकि चौथे चक्र की (जो कि मन की बैठक का स्थान है) क्रिया बन्द होने पर तमाम शरीर की कार्रवाई मुल्तवी हो जाती है। इससे ज़ाहिर है कि छः चक्रों की कार्रवाई सुरत और मन दोनों मिलकर करते हैं और ब्रह्माण्ड के छः उपभागों का भी यही हाल है। इस बयान की रू से ब्रह्माण्ड देश में ब्रह्माण्डी मन से मिला हुआ कोई भारी सुरत का केन्द्र होना चाहिए जिसकी मदद से ब्रह्माण्डी मन ब्रह्माण्ड की सम्हाल करता है। वैदिक धर्म या वेदान्त-फ़िलॉसफ़ी को इस केन्द्र की निस्बत इसके वजूद की हस्ती के सिवाय और कुछ तहक़ीक़ मालूम नहीं है। चुनांचे इसने "नेति", "नेति" यानी "यह नहीं है", "यह नहीं है" कह कर ही इसकी तरफ़ इशारा किया है। सन्तमत में इसीको परब्रह्मपद कहते हैं मगर मालूम होवे कि यह पद ब्रह्म से ऐसा ही अलहदा है जैसा कि हमारी सुरत का केन्द्र हमारे मन से अलहदा है और इन दोनों का आपस में सम्बन्ध भी उसी तरह पर है जैसा कि हमारी सुरत का हमारे मन के साथ है। एतराज किया जा सकता है कि जब इन दोनों (ब्रह्म और परब्रह्म) पदों को अलग अलग कहा जाता है तो इन-

में बाहमी सम्बन्ध कैसे हो सकता है। जवाब में हम पूछते हैं कि दुनिया की हर चीज़ के अन्दर तीन नापों में बाहमी तफ़ावत व मेल दोनों मौजूद हैं या नहीं। मसलन् मोटाई का नाप और चौड़ाई का नाप दोनों अलग अलग चीज़ें हैं लेकिन मोटाई और चौड़ाई दोनों हमेशा इकट्ठी ही देखने में आती हैं यानी जहाँ पर मोटाई है वहाँ चौड़ाई भी है और जहाँ पर चौड़ाई है वहाँ पर मोटाई भी है और दोनों का आपस में सम्बन्ध उनके बाहम मिलने के मुक़ाम पर होता है लेकिन इस सम्बन्ध की मदद से एक नाप में बरतते हुए दूसरे नाप का कुछ ज्ञान नहीं हो सकता। यही वजह है कि मामूली तीन नापों के घाट पर जो कुछ असर उनके परे से आता है उसके ज़रिये से हरचन्द परे के घाटों की हस्ती यानी मौजूदगी साबित होती है लेकिन उन परे के घाटों का कुछ हाल मालूम नहीं होता और यही वजह है कि वैदिक धर्म को ब्रह्मपद से मिले हुए सुरत के इस भारी केन्द्र यानी परब्रह्मपद की निस्बत कुछ ज्ञान नहीं हुआ क्योंकि जहाँ तक इस धर्म के भेद भाव से मालूम होता है इसमें केवल ब्रह्मपद ही तक का ज्ञान मौजूद है। इस पुस्तक के रचना भाग में परब्रह्मपद का मुफ़स्सल ज़िक्र आवेगा। यहाँ पर हमने वैदिक धर्म और वेदान्त के सिद्धान्त का हवाला सिर्फ़ लफ़्ज़ 'ब्रह्माण्ड' की निस्बत अपना मतलब साफ़ करने

की ग़रज़ से दिया है यानी यह बतलाने के लिए कि हम इस लफ़्ज़ को वैदिक धर्म की निस्बत ज़्यादा वसी मानी में इस्तेमाल करते हैं और ब्रह्माण्ड देश के अन्दर परब्रह्मपद को भी शामिल करते हैं और वैदिक धर्म की तरह ब्रह्मपद ही पर इसको ख़त्म नहीं करते। राधास्वामी-मत की शिक्षा के बमूजिब, जो कबीर साहब जगजीवन साहब वग़ैरह सब सन्तों के मत के अन्तरी भेद से मुताबिक़त रखती है, ब्रह्माण्ड देश के ऊपर के तीन स्थान सुन्न, त्रिकुटी और सहसदलकँवल कहलाते हैं। अव्वल स्थान यानी सुन्न के धनी को अक्षर कहते हैं यानी जो क्षय या नाश को प्राप्त नहीं होता। इस अक्षर का ब्रह्माण्डी मन यानी ब्रह्म के सब से ऊँचे दर्जे के रूप से, जिसको पुरुष कहा जाता है, तअल्लुक़ है। पुरुष (ब्रह्म) ने अक्षर से शक्ति पाकर यहाँ पर प्रकृति का मथन किया और ब्रह्माण्ड देश की रचना की। चूँकि इन स्थानों और इनके धनियों की निस्वत मुफ़स्सल ज़िक्र रचना भाग में किया जावेगा इस लिए इस जगह पर इनकी शरह नहीं की जाती, सिर्फ़ त्रिकुटी और सहसदलकँवल के धनियों के नाम और मनुष्य-शरीर के अन्दर इन स्थानों से मुताबिक़त रखने वाले चक्रों के नाम बयान करते हैं। त्रिकुटी के धनी को ब्रह्म कहते हैं और सहसदलकँवल के धनी को निरञ्जन कहते हैं। इस तौर से ब्रह्म के तीन रूप ठहरते हैं

यानी एक अव्याकृत जो सुन्न में है, दूसरा हिरण्यगर्भ जो त्रिकुटी में है और तीसरा विराट् जो सहसदलकँवल में है। जैसे तीन रूप ब्रह्म के हैं वैसे ही तीन रूप जीव के भी हैं जो जाग्रत, स्वप्न व सुषुप्ति या सक्ते की अवस्थाओं में प्रकट होते हैं। चूँकि सुषुप्ति-अवस्था में जीव का रूप आम तौर पर प्रकट नहीं होता इस लिए हमने सुषुप्ति के संग सक्ते की ग़ैरमामूली अवस्था का हवाला दिया है क्योंकि इस अवस्था में जीव का रूप प्रकट यानी चैतन्य हुआ करता है और यह अवस्था सुषुप्ति-अवस्था से परे की है। जीव के इन तीन रूपों को विश्व, तैजस और प्राज्ञ कहते हैं। मनुष्य की सुरत यानी आत्मा और उसकी बैठक का स्थान जीव के इन रूपों से बिलकुल अलहदा चीजें हैं, हरचन्द इन रूपों में सत्ता उन्हीं से आती है। मनुष्य-शरीर के ऊपर के तीन चक्र अलबत्ता इन तीन रूपों से तअल्लुक़ रखते हैं यानी हृदय का तअल्लुक़ विश्व से, कण्ठ का तैजस से और छठे चक्र का प्राज्ञ से है। ब्रह्माण्डी मन के देश के तीन नीचे के स्थान इन तीन सत्त्व, रज, तम गुणों के अलहदा अलहदा केन्द्र या स्थान हैं। तमोगुण का काम मल यानी फ़ुज़्ले का निकालना है। शास्त्रों में इसको 'शिव' कहा गया है और यह संहार-शक्ति का केन्द्र है। रजोगुण का काम मसाले का जज़्ब यानी इकट्ठा करना और बाद में उत्पत्ति करना है। शास्त्रों

में इसको 'ब्रह्मा' कहा गया है। तीसरे गुण यानी सत्त्वगुण का काम पालन पोषण करना है। शास्त्रों में इसको 'विष्णु' कहा गया है। यह गुण पहले दो गुणों को ज्ञान और शक्ति देता है और उनकी क्रियाओं को तुला हुआ रखता है। इन तीनों गुणों की छाया या नक़ल यहाँ पर जानदारों और ग़ैरजानदारों दोनों के अन्दर देखने में आती है। ग़ैरजानदार चीज़ों में जो मिलाप-शक्ति (Cohesive Force) मुख़्तलिफ़ मूल तत्त्वों और उनकी मिलौनी से बने हुए पदार्थों के रूपों को क़ायम रखती है वही ग़ैरजानदार चीज़ों का सत्त्वगुण है। मतलब यह है कि मूल तत्त्व, जो गिनती में पाँच हैं, सब अलग अलग रूप रखते हैं और उनके बाहम मिलने से जो अनेक मिश्रित पदार्थ (Compounds) तैयार होते हैं उनके रूप भी अलहदा अलहदा हैं। जो शक्ति प्रकृति के परमाणुओं को इन सब अलहदा अलहदा रूपों में ठहराये हुए है और जिसको मिलाप-शक्ति कहते हैं वह इस संसार की ग़ैरजान-दार चीज़ों के अन्दर काम करने वाला सत्त्वगुण है और संसार में मौजूदा रूपों के संहार होने की जो कार्रवाई हर वक़्त जारी है वह तमोगुण का इज़हार है और आकाश के अयनों का वह प्रवाह जिससे अनेक नये शरीरों के परमाणु और अणु (Atoms and Molecules) दोबारह तैयार होते हैं रजोगुण का इज़हार है। बनस्पतियों और

जानदारों के अन्दर इन गुणों की छाया और भी प्रकट तौर पर दिखाई देती है । चूँकि गैरजानदार चीजों के अन्दर चैतन्य खवास रखने वाली सुरत गुप्त रूप में रहती है इस लिए इन चीजों के अन्दर ब्रह्माण्ड के ऊँचे दर्जे वाले तीन रूपों की नक़ल का इज़हार देखने में नहीं आता क्योंकि ऊपर के तीन रूपों का इज़हार सुरत की चैतन्य-अवस्था ही में हो सकता है । जानदारों के अन्दर गुदा, इन्द्री और नाभि चक्रों में तीनों गुणों की कार्रवाई का इज़हार साफ़ साफ़ दिखाई देता है और बनस्पतियों के अन्दर फूल पत्ते व बक्कल के झाड़ने, बीज के पैदा करने और शरीर की बाढ़ के क़ायम रखने की क्रियाएँ इन्हीं गुणों का जरा हलकी शकल में इज़हार हैं । हमारे ख्याल में ऊपर के बयान से यह साफ़ हो जाता है कि ब्रह्माण्ड के छः स्थानों में और मनुष्य-शरीर के छः चक्रों में बाहमी मुताबिक़त मुकम्मल तौर पर है इस लिए अब हम निर्मल चैतन्य-देश की तलाश के लिए, जो हमारी परमार्थी तहक़ीक़ात का मुख्य उद्देश्य या निशाना है, क़दम आगे बढ़ाते हैं ।

२१—निर्मल चैतन्य-देश ।

यह तो मालूम हो चुका है कि मनुष्य का मन उस-की सुरत के आधीन है और मन को चैतन्यता और शक्ति

अपनी क्रियाएँ करने के लिए सुरत ही से मिलती हैं और उसका सुरत के साथ बन्धन है। जो हाल मनुष्य के मन का है वही हाल ब्रह्माण्डी मन का भी है। हमारे इस विचार से हरचन्द सुरत और मन के अन्दरूनी तअल्लुक़ पर बहुत कुछ रोशनी पड़ जाती है लेकिन यह वाज़ह नहीं होता कि निर्मल चैतन्य-देश के स्थान इस रचना में कहाँ पर वाक़े हैं इस लिए यह बात दरियाफ़्त करने के लिए हम इस मज़मून की तहक़ीक़ात दूसरे ढंग से करते हैं।

दफ़ा १३ में यह दिखलाया गया था कि स्थूल शरीर के (उसके सूक्ष्म रूपों के समेत) अलहदा होने पर सुरत यानी जीवात्मा के सब ख़वास ज़्यादा ताक़तवर हो जाते हैं और बहुत सी नई शक्तियाँ भी जाग उठती हैं और दफ़ा ९ में हमने यह दिखलाया था कि मन सुरत का एक औज़ार है जिसकी मारफ़त सुरत अपनी चैतन्य क्रियाएँ करती है और मन से सुरत की धार के खिँच जाने पर यह बिलकुल बेकार हो जाता है। इससे नतीजा निकलता है कि मनुष्य का मन भी सुरत के लिए एक वैसा ही पर्दा है जैसा कि स्थूल-शरीर। इस लिए सुरत के ऊपर से मन का पर्दा उतरने पर वैसेही नतीजे ज़हूर में आने चाहिएँ जैसे स्थूल शरीर का पर्दा हटने की निस्बत ऊपर बयान किये गये हैं यानी मन का पर्दा हटने

पर ख़ालिस रूहानी ख़वास यानी निर्मल चैतन्य-अङ्ग (मानसिक अङ्ग जिनके सिर्फ़ आभास या छाया हैं) प्रकट होंगे और इन ख़वास या अङ्गों की पहुँच मन की निस्बत कहीं ज़्यादा होगी और सुरत की उस हालत की हर एक क्रिया के अन्दर चैतन्य-शक्ति के तीन निज ख़वास यानी सत्ता, चैतन्यता और आनन्द की कैफ़ियत ज़रूर नुमायाँ होगी और उसके अन्दर दुख व क्लेश का नाम व निशान भी न होगा। अब अगर इस दलील को ब्रह्माण्ड पर घटा कर देखा जावे तो नतीजा निकलता है कि सुरत के भण्डार के ऊपर से ब्रह्माण्डी मन का पर्दा दूर करने पर हमको निर्मल चैतन्य-देश यानी हमारी तहक़ीक़ात का निशाना मिल जावेगा। मगर इस नतीजे से हमारी पूरी मतलबबरारी नहीं होती क्योंकि इससे यह मालूम नहीं होता कि ब्रह्म क्यों पैदा किया गया और क्यों उसका सुरत के भण्डार के सङ्ग सम्बन्ध क़ायम किया गया और क्यों अब उसको सुरत के भण्डार से अलहदा किया जावे। इन बातों का मुफ़स्सल बयान तो रचना भाग में किया जावेगा। यहाँ पर मुख़्तसर तौर पर इतना ही जतलावेंगे कि निर्मल चैतन्य-देश, जो ब्रह्माण्ड के परे वाक़े है, छः उपभागों में मुनक़सिम है और इसी तक़सीम की वजह से निर्मल चैतन्य-धार के ब्रह्माण्ड देश में उतरने पर ब्रह्माण्ड के अन्दर इसी नमूने के छः स्थान ज़ाहिर हुए।

२२—मनुष्य-शरीर (आलमे सग़ीर) और रचना (आलमे कबीर) का परस्पर मेल।

मनुष्य-शरीर के अन्दर ऐसे छिद्र या सूराख़ बने हैं जिनकी मारफ़त शरीर का रचना से तअल्लुक़ यानी मेल होता है। इस क्रिया में ज़्यादातर खेल छिद्रों के अन्दर व्यापक चैतन्य यानी ज्ञानेन्द्रिय की धार का रहता है। यह क्रिया किस प्रकार से होती है और मेल होने पर मनुष्य को संसार का ज्ञान किस रीति से होता है अब इसकी तशरीह करते हैं। पहले त्वचा-इन्द्रिय को लेते हैं। इस इन्द्रिय का औज़ार यानी द्वारा मनुष्य के स्थूल शरीर का मसाला है (शरीर के मसाले के अन्दर हड्डी, चमड़ा, खाल, रग, नस वग़ैरह सब शामिल हैं)। जब इस पर कोई असर पहुँचता है तो हमको ख़ुशगवार या नाख़ुशगवार स्पर्श का ज्ञान होता है। बाहर से असर आने पर इसके मसामों यानी छिद्रों के अन्दर जो ज्ञानेन्द्रिय की धारें व्यापक हैं वे इस असर को ज्ञाता तक पहुँचा देती हैं। अगर ये छिद्र बन्द कर दिये जावें या इनसे ज्ञानेन्द्रिय की धारें हटा ली जावें तो फिर मनुष्य को स्पर्श का कुछ ज्ञान नहीं हो सकता। जो हाल त्वचा-इन्द्रिय का है वही हाल दूसरी इन्द्रियों का भी है यानी हर एक इन्द्रिय का अपना अपना ख़ास औज़ार या

द्वारा है और उसके विषय से मिलता जुलता मसाला उस औज़ार के अन्दर मौजूद है और ज्ञानेन्द्रिय की धारें उस अन्दरूनी मसाले से मेल किये हुए हैं। अब दर्शन-इन्द्रिय यानी आँख को लेते हैं। आँख के अन्दर की रग (Optic Nerve) में जो रोशनी मौजूद है वही दर्शन-इन्द्रिय का ख़ास मसाला है जिसकी मारफ़त बाहर के प्रकाश से मेल हो कर उसका ज्ञान हासिल होता है। इस बयान की सराहत (स्पष्टता) के लिए हम दर्शन-इन्द्रिय पर बाहरी प्रकाश का जो असर पड़ता है उसकी जाँच करते हैं। बाहरी प्रकाश अव्वल अक्षिमुकुर यानी आँख के लेंज़ (Lens) से गुज़र कर आँख के पर्दे (Retina) पर बाहर की चीज़ों का प्रतिबिम्ब यानी अक्स डालता है। बाद में इसका ज्ञान आँख की रग (Optic Nerve) और उसके अन्दर मौजूद ज्ञानेन्द्रिय की धारों की मारफ़त द्रष्टा तक पहुँचता है। यह रग चमकीली है और इसके अन्दर रोशनी मौजूद है। इस रोशनी ही की मारफ़त ज्ञानेन्द्रिय का बाहर के प्रकाश के साथ मेल होता है जिसके बाद ज्ञानेन्द्रिय की धारें दर्शनक्रिया को पूरा कर देती हैं। दर्शन-इन्द्रिय की निस्बत जो कुछ बयान हुआ वह दूसरी इन्द्रियों की क्रियाओं की निस्बत भी मुनासिब रद्द व बदल के साथ देखने में आता है (देखो दफ़ा ६७ भाग तीसरा)। इससे साबित होता है कि आलमे कबीर का ज्ञान हासिल

होने के लिए यह लाज़िम होना चाहिए कि सुरत की धार का आलमे कबीर से मिलते जुलते मसाले और शक्तियों के साथ, जो मनुष्य-शरीर के छिद्रों के अन्दर मौजूद हैं, मेल हो। चुनांचे मनुष्य-शरीर के चक्रों का उनसे मुताबिक़त रखने वाले आलमे कबीर के मुख़्तलिफ़ स्थानों के साथ मेल इसी प्रकार होता है। लेकिन यह मेल क़ायम करने के लिए ख़ास तरह के साधन की ज़रूरत है क्योंकि साधन ही से चक्रों के अन्तरी ख़वास जागते हैं और वे चक्र इस क़ाबिल होते हैं कि उनका बाहरी स्थानों से मेल हो सके। आलमे कबीर में रचना के सब से नीचे स्थान के धनी का नाम 'गणेश' है जो शिव यानी संहार-शक्ति का पुत्र है। अगर इस स्थान से मुताबिक़त रखने वाले मनुष्य-शरीर के सब से नीचे चक्र के अन्दरूनी छिद्र और उसके ख़वास को जगाया जावे तो गणेश और उसके स्थान से मेल क़ायम हो जावेगा और अभ्यासी के अन्दर गणेश के ख़वास और शक्तियाँ किसी क़दर आ जावेंगी। इसी तरीक़े पर शरीर के दूसरे पाँच चक्रों का भी आलमे कबीर के पाँच स्थानों के साथ मेल क़ायम किया जा सकता है। यह सृष्टि, जो हमको आँखों से दिखलाई देती है और जिसमें सूर्य, नक्षत्र, तारागण वग़ैरह शामिल हैं, छः उपभागों में मुनक़सिम है और ये उपभाग मनुष्य-शरीर के छः चक्रों से मुताबिक़त रखते हैं। इस सृष्टि के

परे ब्रह्माण्ड देश वाक़े है मगर स्थूल इन्द्रियों या उनके सम्बन्धी आला औज़ारों के ज़रिये से उसका कोई इल्म हासिल नहीं किया जा सकता। ब्रह्माण्डी मन के देश के स्थानों और निर्मल चैतन्य-देश के मुक़ामों की तशरीह इस पुस्तक के तीसरे भाग में की जावेगी इस लिए इन-की तफ़सील में न जाते हुए हम फ़िलहाल यह बयान करेंगे कि ब्रह्माण्ड और निर्मल चैतन्य-देश के स्थानों के साथ किस तरीक़े से मेल क़ायम हो सकता है।

२३–दिमाग़ के ज़िम्मे क्या क्या काम हैं।

मनुष्य-शरीर में दिमाग़ एक निहायत ही अद्भुत अङ्ग यानी अज़्व रक्खा गया है लेकिन जो सेवाएँ दिमाग़ के मुख़्तलिफ़ भागों के सुपुर्द हैं अभी तक पूरे तौर पर लोगों की समझ में नहीं आई हैं। यह दुरुस्त है कि इसके अन्दर ऐसे अलग अलग भाग क़ायम किये गये हैं जिनसे शरीर के नीचे हिस्सों के मुतअल्लिक़ मुख़्तलिफ़ काम सरंजाम पाते हैं, मसलन् एक केन्द्र वाक्-शक्ति का है और एक केन्द्र चलने फिरने की क्रिया कराने वाला है, वग़ैरह वग़ैरह। लेकिन बावजूद इस दरियाफ़्त के दिमाग़ के ज़िम्मे जो काम सुपुर्द हैं उनकी निस्बत हमको महज़ ऊपरी ज्ञान हासिल है जो बलिहाज़ इस अजीब व ग़रीब औज़ार की अन्दरूनी हिकमत के निहायत

ओछा है। इसकी नीचे के बयान से पूरी तसदीक़ हो जावेगी। फ़र्ज़ करो कि कोई शख़्स सक्ते की हालत में खिँच गया है या क्लोरोफ़ार्म सुँघाने से बेहोश हो गया है। इन दोनों सूरतों में दिमाग़ के अन्दर का भूरे और नीज़ सफ़ेद रंग का मसाला, जिससे मनुष्य-शरीर के छः चक्र पैदा हुए मालूम होते हैं, स्थूल शरीर की तरह शिथिल हो जाता है। इससे मालूम होता है कि सुरत की बैठक का मुक़ाम दिमाग़ के मसाले के अन्दर क़ायम नहीं है बल्कि दिमाग़ के मसाले के घाट के बजाय दूसरे किसी घाट पर क़ायम है। अलावा इसके यह भी नतीजा निकलता है कि ज्ञान लेने की क्रिया (Sensory Action) का घाट भी दिमाग़ के मसाले के घाट से अलहदा है। नीचे दर्जे के जानवरों में दिमाग़ का इस्तेमाल दर्जे बदर्जे कम होता चला जाता है और यहाँ तक नौबत आ जाती है कि एक दर्जे में जानवर अपनी ज़िन्दगी बसर करने के लिए दिमाग़ से क़तई बेपरवाह हो जाता है और इस दर्जे से उतर कर नीचे की योनियों में दिमाग़ का नाम व निशान तक न रहते हुए ख़ुराक का हज़म करना और ज़िन्दगी की दूसरी क्रियाएँ बदस्तूर जारी रहती हैं। बनस्पतियों के रगें और चक्र भी नहीं होते लेकिन फिर भी उनके शरीर का पालन पोषण और बाढ़ बराबर जारी रहती है। इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि रगों,

चक्रों और दिमाग़ (जिसको रगों की शक्ति का भण्डार कहना चाहिए) के ज़िम्मे शरीर का पालन पोषण करना नहीं है बल्कि किसी दूसरे ही ज़रूरी मतलब के लिए ये तीनों रचे गये हैं । मालूम होवे कि ये दरअसल चैतन्य काम करने के लिए रचे गये हैं और ज्ञान लेना (Perception) और इरादा यानी इच्छा करना (Volition) इनके कामों की मुख्य क़िस्में हैं । लेकिन ज्ञान लेने और इरादा करने की शक्तियाँ अपने काम के लिए हमेशा रगों वग़ैरह के आधीन नहीं रहती हैं । चुनांचे दफ़ा १० में दिखलाया गया है कि प्रेत-योनि के जीव बिला रगों वग़ैरह की मौजूदगी के ही ज्ञान भी लेते हैं और इच्छा भी करते हैं । अलावा इसके सक्ते की हालत में रगों वग़ैरह का काम बन्द हो जाने पर बाज़ औक़ात इन्सान के अन्दर ग़ैर-मामूली ताक़तें जाग जाती हैं । इससे भी ऊपर के बयान की तसदीक़ यानी पुष्टि होती है । इन ताक़तों के जागने से मालूम होता है कि मनुष्य-शरीर के अन्दर इस क़िस्म की शक्तियाँ गुप्त हैं जो मुनासिब साधन करने पर अभ्यासी के अन्दर प्रेत-योनि और उससे ऊँचे दर्जे की योनियों के ख़वास पैदा कर सकती हैं, मसलन् दूसरे के मन का हाल जान लेना और ऐसी जगहों से चीजें निकाल लाना जहाँ इन्सान के स्थूल शरीर की पहुँच नहीं है, वग़ैरह वग़ैरह । और नीज़ यह नतीजा निकलता है कि इन्सान के शरीर के

अन्दर जो चैतन्य इन्तिज़ाम रक्खा गया है वह आम लोगों के ख़्याल व वहम की निस्बत बहुत ज़्यादा गंभीर है।

मनुष्य-शरीर के अन्दर (जिसमें रगमण्डल भी शामिल है) मामूली तौर पर तीन काम होते हैं यानी ज़िन्दगी या चैतन्यता का बहम पहुँचाना, चैतन्यता का क़ायम रखना और संसार से असर या संस्कार लेकर उनके अनुसार क्रिया करना। इस तक़सीम के अन्दर मनुष्य-जीवन की सब की सब मामूली शारीरिक और मानसिक अवस्थाएँ आ जाती हैं। इन तीन क्रियाओं के जो घाट हैं उनकी तह में रगमण्डल के अन्दर कई एक निहायत सूक्ष्म घाट मौजूद हैं और हर चक्र के सब से अन्दरूनी हिस्से का अपने सूक्ष्म घाट के साथ तअल्लुक़ है। जब चक्रों के द्वारा इन सूक्ष्म घाटों पर असर पहुँचता है तो फ़ौरन् बाहर यानी आलमे कबीर में इनसे मुताबिक़त रखने वाले मण्डलों के साथ मेल क़ायम हो जाता है और ऐसा होने पर उन मण्डलों के धनियों की शक्तियाँ अभ्यासी के अन्दर जाग जाती हैं। इसी तरह दिमाग़ के अन्दर भी, जिससे मनुष्य-शरीर के नीचे के सब चक्र उत्पन्न हुए हैं, सूक्ष्म घाट मौजूद हैं लेकिन उन सूक्ष्म घाटों का इस नज़राई देने वाले जगत से कोई वास्ता नहीं है। उनका सम्बन्ध रचना के ऊँचे दर्जे यानी ब्रह्माण्डी मन और सुरत के भण्डार यानी कुल्ल-मालिक

के देशों से है। दिमाग़ के उन घाटों की गुप्त शक्तियाँ जगा लेने पर ब्रह्मपुरुष और सच्चे मालिक के साथ मेल यानी रिश्ता क़ायम किया जा सकता है और इसी वजह से मनुष्य के दिमाग़ की इस क़दर भारी महिमा की जाती है। अब यह दिखलाते हैं कि ये सूक्ष्म और ऊँचे दर्जे के घाट दिमाग़ के अन्दर कहाँ पर वाक़े हैं।

२४–दिमाग़ और उसके अन्दर के छिद्र।

दिमाग़ के दो हिस्सों के बीच में जो दर्ज़ यानी शिगाफ़ है उसमें बारह छिद्र हैं, इन्हीं की मारफ़त ब्रह्माण्ड और निर्मल चैतन्य-देश के छः छः दर्जों के साथ मेल किया जा सकता है। दिमाग़ के भूरे रंग के मसाले के अन्दर ब्रह्माण्ड के मण्डलों से मेल कराने वाले छः छिद्र हैं और सफ़ेद रंग के मसाले के अन्दर भी निर्मल चैतन्य-देश के मण्डलों से मेल कराने वाले छः छिद्र मौजूद हैं। चूँकि दिमाग़ के इन दोनों रंग के मसाले की कोई ख़ास महिमा नहीं है बल्कि असल महिमा उन अन्दरूनी मुक़ामों की है जो उन छिद्रों के अन्दर वाक़े हैं और जिनकी मारफ़त मनुष्य-शरीर का ब्रह्माण्ड और निर्मल चैतन्य-मण्डलों से तअल्लुक़ होता है इस लिए उन मुक़ामों की निस्बत तहक़ीक़ात करना हमारे लिए निहायत ज़रूरी है। यहाँ पर एक दृष्टान्त देकर अपने मतलब

को ज़्यादा साफ़ कर देते हैं। हरचन्द यह दृष्टान्त ज़रा स्थूल है लेकिन इससे मतलब समझने में ज़रूर मदद मिलेगी। फ़र्ज़ करो कि कोई अँधेरा कमरा है जिसकी किसी दीवार में एक छोटा सा सूराख़ वाक़ै है और उसके द्वारा अँधेरे कमरे में सूरज की किरण आ रही है। ख़्याल करना चाहिए कि दीवार का सूराख़ दीवार के मसाले से नहीं बना है बल्कि वह दीवार के अन्दर वाक़ै है और दीवार के उस हिस्से में दीवार का मसाला न होने ही से बना है। अब अगर कोई शख़्स, जो कमरे के अन्दर दाख़िल कर दिया गया है, यह इरादा करे कि वह सूरज की किरणों को देखे या सूक्ष्म बन कर और किरणों पर सवार होकर कमरे से बाहर निकल आवे तो उसको सूराख़ के मुँह पर आना होगा। इसी तौर पर अगर कोई शख़्स ऊँचे मण्डलों से मेल किया चाहता है और मनुष्य-शरीर की अँधेरी कोठरी से निकल कर ब्रह्माण्ड देश और उसके परे के मण्डलों में पहुँचा चाहता है तो उसको भी दिमाग़ के अन्दर वाक़ै सूराख़ों के अन्दरूनी मुक़ामों की तलाश करनी होगी।

हम तसलीम करते हैं कि दिमाग़ की निस्बत ये चन्द बातें मजबूरन् शब्द-प्रमाण के तौर पर पेश की गई हैं लेकिन हमारा तकिया कोरी बातों ही के

ऊपर नहीं है । अगर कोई शख़्स उन साधनों का, जो दिमाग़ के अन्दर वाक़ै मुक़ामों के जगाने के लिए मुक़र्रर किये गये हैं, कुछ अर्से तक अभ्यास करे तो उसको अज़ख़ुद ऊपर के बयान की मुकम्मल तौर पर तसदीक़ हो जावेगी ।

२५—साधन करने से चैतन्यता बढ़ जाती है ।

यहाँ पर यह जतला देना ज़रूरी मालूम होता है कि ऊँचे चैतन्य मण्डलों से मेल क़ायम करने के साधनों की कमाई से अभ्यासी की अन्दरूनी ताक़त यानी चैतन्यता बहुत ज़्यादा बढ़ जाती है और नीज़ ऊँचे मण्डलों की चैतन्यता यानी रूहानियत उसके अन्दर आ जाती है जिससे उसके शरीर को भारी फ़ायदा हासिल होता है और यहाँ तक हो जाता है कि अभ्यास के समय जब वह अन्तर्मुख यानी समाधि में होता है तो उस वक़्त उसकी सुरत के भास ही से उसके शरीर की सब कार्रवाई सहूलियत के साथ चलती रहती है । जैसे कि सूरज का भास हरचन्द सूरज का प्रकाश नहीं होता लेकिन इन्सान के बनाये हुए जितने भी प्रकाश हैं उन सब से कहीं बढ़ कर रोशन होता है ऐसे ही अभ्यासी की सुरत का भास साधारण मनुष्यों की सुरत की धार से कहीं ज़्यादा बलवान और चैतन्य होता है जिससे साधन

करने के समय अभ्यासी को अन्दर और बाहर दोनों की बराबर सुधि रहती है, यहाँ तक कि मृत्यु के दर्जे तक खिँचाव हो जाने पर भी अभ्यासी बिलकुल बाहोश रहता है। इस हालत में यानी मौत के मुक़ाम तक खिँचने पर और इसके आगे चढ़ने पर अभ्यासी का अपने जिस्म से तअल्लुक़ कम व बेश उसी तौर का रहता है जैसा कि भूत प्रेत का अपने मामूल के शरीर के साथ होता है।

भाग दूसरा

बयान सुरत के जगाने और उसे अन्तर में चढ़ाने के साधनों का ।

२६—सुरत के जगाने की ज़रूरत ।

आलमे सग़ीर और आलमे कबीर की बाहम मुताबिक़त की निस्बत जो कुछ तहक़ीक़ात हम करना चाहते थे वह हो चुकी है और हालतमौजूदा में सुरत की बैठक कहाँ पर है और उसको किस मण्डल में पहुँचने पर परम और अविनाशी आनन्द प्राप्त हो सकता है इन बातों का भी पता लगा लिया गया है । अब दरियाफ़्त-तलब यह रह जाता है कि वे साधन और उपाय क्या हैं जिनको अमल में लाने से सुरत बीच के यानी रास्ते के मण्डलों से पार हो कर उस परम और अविनाशी आनन्द के मण्डल में दख़ल पा सकती है । चुनांचे अब उन साधनों ही का वर्णन करते हैं ।

इस सफ़र को इख़्तियार करने के लिए सब से अव्वल यह लाज़िमी मालूम होता है कि सुरत की अन्तरी शक्तियाँ जगाई जावें क्योंकि इनके जागने ही पर वह निर्मल चैतन्य-धाम तक पहुँचने के क़ाबिल हो सकेगी । चूँकि सुरत हालतमौजूदा में रचना के मायिक मण्डलों

में आकर ठहरी हुई है इस लिए जो संस्कार बाहर से जीव पर पड़ते हैं और जो फुरनाएँ इनकी वजह से जीव के अन्दर उठती हैं उन सब का तअल्लुक़ मायिक यानी नीचे दर्जे के स्थानों से रहता है इस वजह से सुरत की बहिर्मुखी यानी मन और स्थूल प्रकृति से तअल्लुक़ रखने वाली धारें प्रबल और बेगवती हो गई हैं और उसकी अन्तरी चैतन्य-शक्ति बिलकुल शिथिल या अचेत पड़ी है। जिस क़िस्म के संस्कारों के ज़रिये से सुरत की बहिर्मुखी धारें चैतन्य हो गई हैं अगर उसी क़िस्म के संस्कार सुरत की अन्तरी बैठक के मुक़ाम पर डाले जावें तो सुरत की गुप्त यानी अचेत शक्तियाँ ज़रूर ही जाग उठेंगी और ऊँचे मुक़ामों की जानिब रवाना होने के लिए जो बेग व बल दरकार है वह भी आप से आप पैदा हो जावेगा।

२७—श्रवण, दर्शन और बचन मनुष्यजीवन के ज़रूरी अङ्ग हैं।

पेश्तर इसके कि हम सुरत-शक्ति के समेटने या जगाने और ऊँचे मण्डलों में चढ़ाने के साधनों के उसूल बयान करें यह ज़रूरी मालूम होता है कि अपने मतलब को वाज़ह करने के लिए दो एक ख़ारिजी (बाहरी) बातों का तज़किरा करें।

सब कोई जानता है कि संसार के पदार्थों का ज्ञान

लेने और अपने ज्ञान या तजरुबों का इज़हार करने के लिए हम खास कर सुनने, देखने और बोलने की इन्द्रियों ही का इस्तेमाल करते हैं यानी मनुष्य-शरीर की ज़रूरियात अव्वलन् इन तीनों द्वारों ही की मारफ़त पूरी होती हैं और अगर इन तीन इन्द्रियों का इस्तेमाल बन्द हो जावे तो मनुष्य की चैतन्य यानी मानसिक ताक़तें या तो बिल-कुल ही जाती रहेंगी या इस क़दर नाकारा हो जावेंगी कि ज़िन्दगी ज़्यादा अर्से तक क़ायम न रह सकेगी क्योंकि जब आँख कान से कुछ देखा सुना ही न जावेगा तो चिन्त-वन और मनन किस बात का किया जावेगा और जब मुख से कुछ बोला ही न जावेगा तो हमारे मन का हाल किसी को क्या मालूम होगा और हमारी ज़रूरियात कैसे पूरी होंगी। ऐसी हालत में हमारी दिमाग़ी ताक़तें कैसे ज़िन्दा रह सकती हैं और हम कितने दिन तक जी सकते हैं।

हरचन्द यहाँ पर ज़िक्र सिर्फ़ स्थूल घाट यानी देह की इन्द्रियों के मुतअल्लिक़ किया गया है लेकिन ये उसूल सूक्ष्म और परे के घाटों की इन्द्रियों और चैतन्य-शक्तियों के ऊपर भी आयद होते हैं यानी उन घाटों की इन्द्रियों के बेकार रहने से वहाँ की देह की चैतन्य-शक्तियाँ भी मुर्दा हो जाती हैं, मगर चूँकि उन इन्द्रियों के ज़िम्मे स्थूल शरीर के ज़िन्दा रखने के मुतअल्लिक़ कोई खास काम नहीं है इस लिए उनके शिथिल रहने से मनुष्य-जीवन में कोई

हर्ज नहीं होता। मगर चूँकि आम तौर पर मनुष्य उन इन्द्रियों को इस्तेमाल में लाने के मुतअल्लिक़ कोई बाक़ायदा साधन या कसरत नहीं करते इस लिए वे सब वेकार रहती हैं और जिस मतलब से उनको मनुष्य-शरीर के अन्दर क़ायम किया गया है वह सब फ़ौत हो रहा है। राधास्वामीमत में जो भक्ति और साधन के तरीक़े सिखलाये जाते हैं वे इन्हीं तीन ख़वास या अङ्गों को जगाने वाले अलहदा अलहदा आध्यात्मिक साधन यानी रूहानी अमल हैं। उनकी तफ़सील यह है:—अव्वल सुरत की ज़बान यानी तवज्जह की धार से चैतन्य नाम का उच्चारण करना, दूसरे चैतन्य रूप का ध्यान यानी चिन्तवन करना और तीसरे चैतन्य शब्द का तवज्जह के साथ श्रवण करना।

प्रेत-योनि के जीव स्थूल शरीर के घाट पर ज़ाहिर होने के समय तीनों क्रियाएँ बोलने, सुनने और देखने की करते हैं। इससे ज़ाहिर होता है कि इस योनि में इन क्रियाओं के करने के लिए सूक्ष्म इन्द्रियाँ मौजूद रहती हैं और इन सूक्ष्म इन्द्रियों ही की मारफ़त प्रेत-योनि को स्थूल इन्द्रियों की गम्य से परे के वाक़यात की ख़बर हो जाती है और यह भी साबित होता है कि देखने, सुनने और बोलने की क्रियाएँ स्थूल घाट ही पर ख़त्म नहीं हो जातीं बल्कि सूक्ष्म घाटों पर भी इनका इज़हार बराबर मौजूद है और वहाँ पर इनका दायरा स्थूल घाट के

मुक़ाबिले में बहुत ज़्यादा वसी है। इससे मालूम होना चाहिए कि चैतन्य-शक्ति के जगाने के मुतअल्लिक़ जो साधन हमने बयान किये हैं वे महज़ ख़्याली बातें नहीं हैं इस लिए मुनासिब है कि जिस आदर भाव के साथ वैज्ञानिक सिद्धान्तों की जाँच की जाती है उसी आदर भाव के साथ इनकी भी जाँच की जावे।

२८—रचनहार शक्तियाँ नामालूम तौर पर काम कर रही हैं।

रचना के इन्तिज़ाम के अन्दर इस बात का लिहाज़ रक्खा गया है कि तीन नापों का हर एक 'सेट' यानी जोड़ और दूसरे जोड़ों से इस तरीक़े पर अलहदा है कि एक की रचनहार शक्तियाँ दूसरों की रचनहार शक्तियों से तीव्रता और सूक्ष्मता में मुख़्तलिफ़ रहती हुई उनमें से किसी में कोई असर पैदा नहीं करतीं। अगर इस तरह का लिहाज़ न रक्खा जाता तो रचना के अन्दर मौजूदा दर्जे-वार तरतीब क़ायम न हो सकती थी और नीचे घाटों पर ऊँचे दर्जे की शक्तियों के उतर आने से वही सूरत नमूदार होती जो बिजली की धारों के रास्ते में रुकावट आने पर देखने में आती है यानी जैसे बिजली की धारों के रास्ते में रुकावट आने पर बिजली बड़े बेग के साथ अपना इज़हार करके उन रुकावटों के मसाले को जला देती है इसी तरह ऊँचे मण्डलों की शक्तियाँ नीचे मण्डलों में उतर कर (जहाँ का मसाला नीचे दर्जे

का होने की वजह से रुकावट का काम करता) बड़े बेग के साथ अपना इज़हार करतीं जिससे उन सब का नाश हो जाता। इस पुस्तक के तीसरे भाग में तीन नाप वग़ैरह के मुख़्तलिफ़ जोड़ों के बाहमी रिश्ते और तफ़रीक़ का मुफ़स्सल बयान किया जावेगा। यहाँ पर सिर्फ़ इस क़दर ज़हन-नशीन कराना चाहते हैं कि हमारी वाक़फ़ियत के दायरे से बाहर के घाटों की मारफ़त जो बहुतसी ज़बरदस्त रचनहार शक्तियाँ रचना में काम कर रही हैं उनकी हस्ती से इनकार करना नामुनासिब है। इन शक्तियों के संग संग, जैसा कि तीसरे भाग में हम दिखलावेंगे, बड़े ज़ोर शोर की धुनें हो रही हैं और अन्तर के कान यानी सुनने की सूक्ष्म इन्द्रियाँ काफ़ी तौर से जागने पर जब वे धुनें सुनाई पड़ती हैं तो उनका अभ्यासी पर बड़ा ज़बरदस्त असर होता है। वे धुनें दो प्रकार की हैं:—एक तो चैतन्य यानी रूहानी, जिनका रुख़ अन्तर्मुख है और जो आकर्षक हैं, दूसरी मायिक व मनसम्बन्धी, जिनका रुख़ चैतन्य धुनों के ख़िलाफ़ है (तशरीह के लिए देखो दफ़ा ६४)।

२१—हर शब्द के अन्दर उसके पैदा करने वाली शक्ति के ख़वास मौजूद रहते हैं।

मालूम होवे कि जितने भी शब्द इस संसार में होते हैं वे सब के सब अपने पैदा करने वाली शक्तियों के ख़वास यानी

गुण लिये रहते हैं। मिसाल के लिए बारूद या इस क़िस्म की किसी और चीज के उड़ने या फटने से जो धड़ाका पैदा होता है उस पर ग़ौर करो। जब कहीं पर कोई ऐसी चीज़ फटती है तो फ़ौरन् वहाँ पर बहुत ज़्यादा मिक़दार में गैस पैदा हो जाती है, जिससे आस पास की चीज़ों को एक दम बड़े जोर के साथ धक्का लगता है और उस धक्के का अचानकपन और उसकी तीव्रता यानी तेज़ी धड़ाके के मुख्य अङ्ग होते हैं। चुनांचे उसके संग संग जो ख़ास क़िस्म की आवाज़ जाती है उसमें ये दोनों अङ्ग साफ़ तौर पर पाये जाते हैं। अलावा इसके मनुष्य की बोली से जो शब्द पैदा होते हैं उनके अन्दर भी यह नियम देखने में आता है क्योंकि मन के अन्दर जैसी दशा वर्तमान होती है उसका असर मनुष्य के बचनों में बराबर मौजूद रहता है और जो अङ्ग जिस वक़्त मन के अन्दर प्रबल होता है उसीके मुताबिक़ ख़्यालात यानी भावों का इज़हार मनुष्य के बचनों से हुआ करता है। मतलब यह है कि मनुष्य के अन्दर जब कोई वेग क्रोध, प्रेम वग़ैरह का प्रबल होता है तो ऐसे मौक़े पर जो लफ़्ज़ वह मुख से निकालता है उनके अन्दर बराबर असर उसके मन की दशा का रहता है और उसके बचनों से जिन ख़्यालात का इज़हार होता है वे उसके मन के वेग के मुताबिक़ ही हुआ करते हैं। पशु-योनि, जिसमें

चैतन्यता नीचे दर्जे की है, आवाज़ों के ज़रिये सिर्फ़ मन के सादे भावों का इज़हार कर सकती है लेकिन मनुष्य अपने स्वर यानी लहजे को बदल कर निहायत नाज़ुक ख़्यालात और निहायत सुन्दर रूपकों का वर्णन कर सकता है, जैसा कि असाधारण बुद्धि वाले मनुष्यों के बचनों से ज़ाहिर होता है। साधारण मनुष्य भी जब उनके अन्दर जोश व जज़्बे का ग़लबा होता है ऐसा लहजा इख़्तियार करते हैं और ऐसे बोल मुख से निकालते हैं कि जिनसे उनके मन की हालत साफ़ तौर पर ज़ाहिर होती है। माता अपने बच्चे के साथ जो मीठी और घुली बातें करती है या नज़दीकी लोग किसी रिश्तेदार की मृत्यु हो जाने पर जो विलाप करते हैं या शूर बीर रणक्षेत्र में जो दहाड़ें मारते हैं उनसे साफ़ ज़ाहिर होता है कि इन्सान की बोली में उसके मन के भावों का असर ज़रूर मौजूद रहता है। अब अगर तुच्छ इन्सान के शब्द यानी आवाज़ की मारफ़त ऐसे ऐसे ज़बरदस्त असर पैदा किये जा सकते हैं तो ख़्याल किया जा सकता है कि रचना की शुरूआत के समय परम चैतन्य-शक्ति के प्रथम प्रकाश यानी अव्वल इज़हार के संग जो शब्द प्रकट हुआ उसकी मारफ़त कैसा ज़बरदस्त चैतन्य असर रचना के अन्दर ज़ाहिर हुआ होगा।

३०—चैतन्य शब्द का रुख़ अन्तर्मुख है।

आम तौर पर शक्ति के इज़हार या प्रकट होने से यह समझा जाता है कि शक्ति केन्द्र से जारी होकर किसी वृत्त यानी गिर्दे में फैलती है लेकिन ऊपर की दफ़ा में परम-शक्ति की निस्बत जो ज़िक्र हमने किया है उससे हमारा यह मतलब नहीं है बल्कि चैतन्य-शक्ति के इज़हार से हमारी मुराद उस शक्ति के गुप्त से प्रकट दशा में तब्दील हो जाने से है। चूँकि चैतन्य-शक्ति की क्रिया अन्तर्मुखी और आकर्षक है इस लिए उसके इज़हार के संग जो शब्द प्रकट हुआ उसका असर भी रचना पर अन्तर्मुखी और आकर्षक होना चाहिए और जोकि चैतन्य-शक्ति के इस प्रथम इज़हार का ठप्पा या छाप तमाम चैतन्य शब्दों पर लगी हुई है इस लिए जितने भी चैतन्य शब्द रचना में हैं उन सब के अन्दर ये दोनों ख़वास मौजूद हैं और इस वजह से उन शब्दों के सुनने से अभ्यासी की सुरत का बड़े ज़ोर के साथ खिँचाव अन्तर की जानिब होता है और इस अभ्यास के बाक़ायदा तौर पर करने से अभ्यासी की सुरत ऊँचे मण्डलों की जानिब; जहाँ से वे चैतन्य शब्द जारी होते हैं, खिँच यानी चढ़ जाती है। यही वजह है कि शब्द-अभ्यास अन्तर में

सुरत की चढ़ाई हासिल करने का साधन माना जाता है लेकिन चूँकि चैतन्य शब्द निहायत सूक्ष्म हैं इस लिए जब तक दूसरे दो साधन करके, जिनका ज़िक्र आगे किया जायगा, सुरत की गुप्त शक्तियाँ किसी क़दर जगाई न जावें उस वक़्त तक वे अच्छी तरह सुनने में नहीं आते। इसी से शब्द-अभ्यास को योगसाधन के सिलसिले में ऊपर का ज़ीना क़रार दिया गया है लेकिन इस वजह से शब्द-अभ्यास की कमाई ज़्यादा अर्से तक मुल्तवी नहीं रक्खी जाती बल्कि छः हफ़्ते या दो महीने तक नाम के सुमिरन और स्वरूप के ध्यान का साधन करने पर यह अभ्यास शुरू कर दिया जाता है। इन दो साधनों यानी चैतन्य स्वरूप के ध्यान और नाम के सुमिरन की युक्तियों का बयान नीचे किया जाता है।

३१—ध्यान के मुतअल्लिक़ ग़लतफ़हमियाँ।

मोटे तौर पर सृष्टि दो प्रकार की है यानी चैतन्य और जड़। चैतन्य सृष्टि में चूँकि मनुष्य-योनि सब से उत्तम है इस लिए यह कहा जा सकता है कि मनुष्य के स्वरूप का ध्यान करना सब से बढ़ कर चैतन्य यानी रूहानी शक्ल का ध्यान करना है, लेकिन यह दुरुस्त नहीं है। मनुष्य की चैतन्यता का प्रकाश सिर्फ़ जाग्रत अवस्था में

होता है क्योंकि सिर्फ़ इसी अवस्था में मनुष्य ज्ञान लेता है । स्वप्न अवस्था में उसकी चैतन्यता यानी ज्ञान लेने की शक्ति दिमाग़ में पड़े हुए नक़्शों के आधीन होती है और सुषुप्ति अवस्था में दाख़िल होने पर इसका बिलकुल अभाव हो जाता है, इस लिए मनुष्य के स्वरूप का ध्यान ख़ालिस रूहानी शक्ल का ध्यान न रहा बल्कि एक ऐसे स्थूल ग़िलाफ़ या शक्ल का ध्यान ठहरा जिसके अन्दर थोड़ी सी चैतन्यता और ख़फ़ीफ़ सा ज्ञान मौजूद है ।

इसी तरह अगर सच्चे मालिक को आकाशवत् व्यापक ख़्याल करके ध्यान किया जावे तो इसको भी ख़ालिस रूहानी यानी चैतन्य स्वरूप का ध्यान नहीं कह सकते क्योंकि आख़िर यह एक स्थूल वस्तु के मानसिक अनुमान ही का ध्यान तो है ।

३२—मन के भावों का असर चेहरे पर ज़रूर झलकता है ।

यह बयान करने से पहले कि असली चैतन्य स्वरूप का ध्यान कैसे किया जा सकता है हम सराहत (स्पष्टता) की ग़रज़ से एक ख़ारिजी (बाहरी) बात का ज़िक्र करना मुनासिब समझते हैं । दफ़ा २० में यह ज़िक्र किया गया था कि मन के प्रबल भावों का असर चेहरे पर झलका करता है और बार बार असर ज़ाहिर होने पर उसके निशान चेहरे पर

पुख़्ता तौर से क़ायम हो जाते हैं। मालूम होवे कि यह बात सिर्फ़ प्रबल भावों के लिए मख़सूस नहीं है बल्कि कम व बेश सभी तरह के भावों का यही क़ायदा है। इतना ज़रूर है कि आम लोगों को चेहरे से सिर्फ़ प्रबल भावों ही का पता चलता है लेकिन तजरुबेकार और क़ाबिल शख़्स दूसरों के चेहरे की तर्ज़ बनावट देख कर उनके चाल चलन और मन के अन्दर का हाल मालूम कर लेते हैं। इससे साबित होता है कि मनुष्य के चेहरे पर उसके मन के भावों का असर ज़रूर मौजूद रहता है। अब हम असल मज़मून की तरफ़ लौटते हैं।

३३—चेहरा देखने से मन पर असर पड़ता है।

जैसे किसी का बोल सुनने पर उसके मन के भावों के मुताबिक़ हमारे अन्दर भाव पैदा हो जाते हैं ऐसे ही लोगों के चेहरे की आकृति या बनावट देखने पर हमारे अन्दर उनके से ख़्याल पैदा हो जाते हैं। इसके सबूत में हम बेशुमार मिसालें पेश कर सकते हैं। चुनांचे देखो, एक प्रेमी का चेहरा देखने पर उससे प्रीति रखने वाले के अन्दर प्रेम भाव उमँड़ आता है और भाँड़ों व मसख़रों की हँसाने वाली शक्ल देखने पर हर कोई बेसाख़्ता हँस पड़ता है। इतना ही नहीं बल्कि उनकी शक्ल की याद आने पर भी लोगों को हँसी आ जाती है। मालूम होवे

कि इसी तरीक़े से मन के अन्दर परमार्थी भाव या उमंग पैदा करने की ग़रज़ से किसी चेहरे का बाक़ायदा तौर पर चिन्तवन करना अभ्यासियों की बोली में चैतन्य स्वरूप का ध्यान कहलाता है । चूँकि हमारे मन में असल परमार्थी भाव ख़ालिस चैतन्य स्वरूप ही के चिन्तवन से पैदा हो सकते हैं और दूसरे यानी मामूली स्वरूपों के ज़रिये से यह मतलब नहीं निकल सकता इस लिए सवाल होता है कि ख़ालिस चैतन्य स्वरूप किस स्वरूप को माना जावे । पेश्तर इसके कि इस सवाल का जवाब दें हम कामिल यानी पहुँचे हुए पुरुषों और उनके लक्षणों का थोड़ा सा बयान करना ज़रूरी समझते हैं क्योंकि इससे बहुत कुछ मदद जवाब के समझने में मिलेगी ।

३४—कामिल या पहुँचे हुए पुरुषों में दर्जे ।

इस पुस्तक में जहाँ आलमे सग़ीर और आलमे कबीर की बाहम मुताबिक़त का ज़िक्र आया है वहाँ पर दिखलाया गया है कि इन दोनों में मेल मनुष्य शरीर के चक्रों और उसके दिमाग़ के अन्दर क़ायम छिद्रों यानी सूराख़ों की मारफ़त होता है । जो पुरुष अपने शरीर (पिण्ड) के छः चक्रों को जगा लेता है वह तीसरे यानी मलीन माया-देश का कामिल यानी पहुँचा हुआ पुरुष समझा जाता है । वह अभी मौत के मुक़ाम के पार नहीं

पहुँचा है लेकिन स्वप्न, सुषुप्ति और सक्ते की मंज़िलों को तय कर चुका है और इस वजह से उसको इस तमाम नज़राई देने वाली सृष्टि का और उसकी सूक्ष्म अवस्थाओं का भरपूर ज्ञान हासिल है। जो पुरुष ब्रह्म यानी ब्रह्माण्डी मन के पहले स्थान पर पहुँचे हैं और जिन्होंने मृत्यु को जीत लिया है वे योगी कहलाते हैं। इसी तरह जो पुरुष ब्रह्म के दूसरे व तीसरे स्थानों यानी त्रिकुटी व सुन्न तक पहुँचे हैं उनमें से पहले योगीश्वर और दूसरे साध या महात्मा कहलाते हैं और जो पुरुष ब्रह्माण्ड के परे यानी रचना के दूसरे दर्जे के पार निर्मल चैतन्य-देश में पहुँचे हैं उनको सन्त कहते हैं और जो सन्त निर्मल चैतन्य-देश के सब से ऊँचे पद तक, जो कुल्ल-मालिक का निजधाम यानी चैतन्य-शक्ति का आदि भण्डार है, पहुँचे हैं उनको परम सन्त कहते हैं।

३५—चैतन्य-स्वरूप का ध्यान।

जितने भी तीव्र भाव मनुष्य के मन में पैदा होते हैं उन सब का कारण मन के अन्दर का बेग यानी जोश होता है लेकिन जो तेज़ से तेज़ जोश इन्सान के मन में हालतज़िन्दगी में उठ सकता है उसकी बमुक़ाबला उस क्षोभ या खलबली के, जो जीव के अन्दर देह छोड़ने पर मौत के घाट और उसके परे के स्थानों से गुज़रते वक़्त

होती है, कोई हक़ीक़त नहीं है मगर चूँकि उस वक़्त चाल अन्तर में चलती है इस लिए बाहर में उसका इजहार इस क़दर प्रबल नहीं होता जैसा कि साधारण जोश की हालतों का हुआ करता है। मौत होने से थोड़ी देर पहले पट्ठे और रगें वग़ैरह सब की सब धीरे धीरे ऐंठने लगती हैं और मौत वाक़ै होने पर अन्तर में मरोड़ी इस जोर से आती है कि इसका असर बाहर जिस्म पर साफ़ दिखलाई देता है। योगसाधन करने में भी, अलबत्ता जरा ज़्यादा आहिस्तगी के साथ, ये सब हालतें अभ्यासी पर आती हैं और इनकी वजह से अभ्यासी के शरीर की बिलकुल कायापलट हो जाती है और उसके रगमण्डल और पट्ठों वग़ैरह की बनावट बदल कर ऐसी हो जाती है कि शरीर से सुरत की धारों के अलहदा होते वक़्त यानी मौत की हालत व्यापने पर किसी तरह की रुकावट वाक़ै नहीं होती। रगों और पट्ठों की इन अन्दरूनी तब्दीलियों के निशान बाहर भी अभ्यासी के शरीर पर थोड़े बहुत नुमायाँ हो जाते हैं लेकिन ज़्यादातर उनका असर उसके सूक्ष्म शरीरों पर हुआ करता है। बाहरी निशान या चिह्न कामिल पुरुषों के ख़ास कर मस्तक पर और आँखों में नजराई देते हैं और उनका दर्शन करने पर गहरे भक्तजनों के अन्दर सुरत का सिमटाव और मेराज यानी चढ़ाई नुमायाँ

तौर से होती है। जिस कामिल पुरुष की रसाई ब्रह्माण्ड-देश में हो गई है वह इस नज़राई देने वाली सृष्टि की हद्द से पार हो गया है और वह अपनी साधारण क्रियाएँ ब्रह्माण्ड के घाटों से करता है और उसके चेहरे से गोया ब्रह्माण्ड की चैतन्यता झलकती है। इसी तरह सन्तों और परम सन्तों की सब क्रियाएँ निर्मल चैतन्य-देश की चैतन्य-धारों द्वारा हुआ करती हैं। इससे नतीजा निकलता है कि ब्रह्माण्ड में पहुँचे हुए पुरुष के स्वरूप का ध्यान ब्रह्माण्ड-देश के चैतन्य-स्वरूप का ध्यान करना है और सन्तों के स्वरूप का ध्यान निर्मल चैतन्य-देश के स्वरूप का ध्यान करना है। इसी वजह से सन्तमत में सन्त या परम सन्त के स्वरूप का और जब वे मौजूद न हों तो किसी साध या महात्मा के स्वरूप का ध्यान करना असल चैतन्य-स्वरूप का ध्यान माना जाता है। जिन लोगों के साथ हमारी प्रीति है उनकी शक्ल ख़्याल में आने पर जो असर हमारे अन्दर पैदा होता है उसका ज़िक्र दफ़ा ३३ में किया जा चुका है लेकिन पहुँचे हुए पुरुषों की शक्ल ध्यान में आने से जो असर भक्तजनों के अन्दर पड़ता है वह बहुत गहरा और तीव्र होता है, क्योंकि यह असर महज़ उनका स्वरूप ख़्याल या तसव्वर में आने की वजह से पैदा नहीं होता बल्कि चूँकि पहुँचे हुए पुरुषों की उन सब स्थानों के सूक्ष्म घाटों में रसाई रहती है कि जिनको

उन्होंने पार कर लिया है और जिन तक वे पहुँचे हैं इस लिए जब कोई भक्तजन उनके स्वरूप का ध्यान करता है तो उनको फ़ौरन् उसकी इत्तिला हो जाती है और इत्तिला मिलने पर वह अपने भक्तजन की मुनासिब सँभाल और इमदाद फ़रमाते हैं। मालूम होवे कि यह सहायता हालतध्यान में हमेशा नामालूम तौर पर हुआ करती है अलबत्ता तजरुबेकार भक्तजन सुरत की बैठक के मुक़ाम पर अपनी सुरत का गहरा सिमटाव होता देख कर उसकी परख कर लेता है। अलावा इसके कभी कभी कामिल पुरुष अपने भक्तजनों की प्रतीति दृढ़ करने और उनके अन्दर नई उमंग और प्रीति जगाने की ग़रज़ से उनको अपने नूरानी स्वरूप की झलक दिखलाने की मौज फ़रमाया करते हैं।

इसमें शक नहीं कि ब्रह्माण्ड यानी रचना के दूसरे दर्जे तक पहुँचे हुए पुरुष का ध्यान करने से भारी रूहानी फ़ायदा होता है और ध्यान करने वाले के अन्दर चैतन्यता बढ़ती है लेकिन जब तक कि निर्मल चैतन्य-देश यानी रचना के सब से ऊँचे दर्जे में पहुँचे हुए पुरुष के स्वरूप का ध्यान न किया जावेगा उस वक़्त तक अभ्यासी को उस दर्जे की चैतन्यता प्राप्त नहीं हो सकती कि वह ब्रह्माण्डी मन के लेश से आज़ाद हो जावे यानी उस वक़्त तक अभ्यासी की सुरत के संग ब्रह्माण्डी मन के मसाले

का लेश बराबर लगा रहेगा । परमार्थी यानी रूहानी तरक़्क़ी हासिल करने के लिए शुरू में निर्मल चैतन्य-देश में पहुँचे हुए पुरुष की और नीज़ उन प्रेमीजनों की, जो उसकी ज़ेरनिगरानी साधन कर रहे हैं, संग व सोहबत की भी भारी ज़रूरत है क्योंकि उस महापुरुष का ज़ाती रूहानी असर बड़ा ज़बरदस्त होता है, जिसका सतसंग के वक़्त ख़ास तौर पर इज़हार होता है। सतसंग के वक़्त प्रेमीजन गुरू महाराज को अपने घट में प्रत्यक्ष यानी विराजमान महसूस करने लगते हैं और इस लिए वे उनके संग की भारी क़दर करते हैं। आगे चल कर हम दफ़ा ५६ में सन्तों के संग की ज़रूरत और महिमा का तफ़सील के साथ बयान करेंगे।

३६—कामिल पुरुषों की चार प्रकार की गति।

मालूम होवे कि कामिल पुरुषों में ऊपर बयान किये हुए दर्जों के अलावा उनकी गति के लिहाज़ से भी भेद होता है, क्योंकि गति चार प्रकार की होती है:—अव्वल सालोक्यगति, जिसमें केवल किसी ऊँचे स्थान तक रसाई होती है। दूसरे सामीप्य-गति, जिसमें किसी स्थान के धनी यानी अधिष्ठात्री शक्ति तक रसाई होती है। तीसरे सारूप्यगति, जिसमें किसी स्थान के धनी का सा स्वरूप धारण करने की क़ुदरत

होती है और चौथे सायुज्यगति, जिसमें किसी धनी के जौहर के साथ मिल कर एक हो जाने की ताक़त रहती है । पिछली दोनों क़िस्म की गति वाले पुरुषों को, जिस स्थान तक कि वे पहुँचे हैं, वहाँ के धनी से इच्छानुसार भेद व अभेद भाव में बरतने का भी इख़्तियार रहता है ।

ऊपर की शरह से ज़ाहिर है कि किसी ऊँचे मुक़ाम तक रसाई हासिल करने के लिए अभ्यासी के वास्ते लाज़िमी है कि वह हर दर्मियानी स्थान के मुतअल्लिक़ चारों प्रकार की गति हासिल करे। चुनांचे योगी को पिण्ड यानी मलीन माया-देश के छः स्थानों और ब्रह्माण्ड यानी ब्रह्माण्डी मन के देश के तीन नीचे के स्थानों में चारों प्रकार की गति हासिल होती है ।

३७—कामिल पुरुषों के अन्दर असाधारण शक्तियाँ ।

हर कामिल पुरुष के अन्दर किसी ऊँचे स्थान में रसाई हासिल करने पर वहाँ की शक्तियाँ किसी क़दर जाग जाती हैं और जब वह वहाँ के धनी के साथ सायुज्यगति से एक हो जाता है तो उस हालत में धनी की तमाम शक्तियाँ और सिफ़तें उसके अन्दर आ जाती हैं। इस पर सवाल हो सकता है कि इस क़िस्म की शक्तियाँ प्राप्त रहते हुए कामिल पुरुष उनका दुनिया में इज़हार क्यों

नहीं करते। अगर ये इनका इज़हार करें तो सब किसी को यक़ीन आजावे कि सचमुच उनके अन्दर ऊँचे स्थान की शक्तियाँ मौजूद हैं।

३८—मोजज़े या करामात।

पेश्तर इसके कि ऊपर के सवाल का जवाब देने की कोशिश की जावे हम मुनासिब समझते हैं कि मुख़्तलिफ़ अवतारों और पैग़म्बरों वग़ैरह की निस्बत जो मोजज़े बयान किये जाते हैं उन पर सरसरी नज़र डाली जावे। मसलन् रामचन्द्र महाराज, श्रीकृष्ण, गौतम बुद्ध, हज़रत मसीह और हज़रत मुहम्मद वग़ैरह की निस्बत बहुत सी ऐसी करामात बयान की जाती हैं जिनसे साफ़ ज़ाहिर होता है कि उनके अन्दर असाधारण यानी ग़ैर मामूली शक्तियाँ मौजूद थीं। अगर इन सब करामात के अन्दर बाहम मुशाबहत रखने वाले नुक्ते या लक्षण तलाश किये जावें तो मालूम होगा कि कष्ट का निवारण करना या शरणागत भक्तों की रक्षा करना या अविश्वासी मनुष्यों को विश्वास दिलाना या उनका पराजय करना वग़ैरह ही ऐसी बातें हैं कि जो ज़्यादा तादाद की करामात के अन्दर यकसाँ देखने में आती हैं लेकिन किसी तरह की बाक़ायदगी या किसी ख़ास उसूल की पाबन्दी इन करामात के सिलसिले में मालूम नहीं पड़ती यानी

ऐसा नहीं है कि लगातार या किसी खास उसूल या नियम की पाबन्दी में ये करामात दिखलाई गई बल्कि यही देखा जाता है कि सिर्फ़ खास मौक़ों पर इन-का इज़हार किया गया और हमेशा और हरवक़्त इनसे काम ले कर ऊपर बयान की हुई अग़राज़ हासिल नहीं की गई। बरअक्स इसके अक्सर मर्तबा हज़रत मसीह व पैग़म्बर साहब व अवतारों ने खुद अपनी और अपने भक्तों की हार और अविश्वासी लोगों की जीत होने दी। इससे ज़ाहिर होता है कि रक्षा हिफ़ाज़त करने, दुख दर्द हटाने या काम काज में कामयाबी हासिल करने के लिए मोजज़े या करामात रोज़ाना इस्तेमाल के ज़रिये नहीं हो सकते। यह नतीजा हमारे लिए बड़े काम का है क्योंकि इससे हम को दफ़ा ३७ के आखीर में जो सवाल उठाया गया था उसका जवाब मिल जाता है और नीज़ हम इस क़ाबिल हो जाते हैं कि बतौर तमाशा के जो लोग ग़ैर-मामूली शक्तियाँ दिखलाया करते हैं उनकी असल हक़ीक़त बयान कर सकें।

३९—आध्यात्मिक शक्तियों के इस्तेमाल के क़ायदे।

यह बयान कर चुके हैं कि चैतन्य-शक्ति में बमुक़ाबले दूसरी शक्तियों के बड़ा फ़र्क़ यह है कि चैतन्य-शक्ति के अन्दर

सत्ता, चैतन्यता और आनन्द ख़वास मौजूद हैं और यह भी ज़ाहिर कर चुके हैं कि चैतन्य-शक्ति का सोतपोत और भण्डार, जिसको सच्चा कुल्ल-मालिक कहते हैं, परम सत्ता, परम चैतन्यता और परम आनन्द का अपार सिन्ध है। कुल्ल-मालिक में ये ख़वास मानने पर आप से आप मानना पड़ता है कि जो कुछ उसने किया है, जो कुछ वह कर रहा है और जो कुछ वह करेगा उस सब के अन्दर आला से आला दर्जे की दानिशमन्दी मौजूद होगी और उस सब में मन्शा सिवाय सब पर दया करने के दूसरी कुछ नहीं हो सकती। उसके क़ानून या नियम भी, जो वर्तमान, भूत और भविष्यत् तीनों कालों पर लगते हैं और जिनके दायरे से उस नियन्ता या सच्चे मालिक के सर्वज्ञ होने के कारण कोई भी बात बाहर नहीं रह सकती, बिलकुल मुकम्मल या निर्दोष हैं और इन्सान के बनाये हुए क़ायदे क़ानून के मुआफ़िक़ उनमें रद्द व बदल या इधर उधर होने के लिए कोई गुंजायश नहीं है। इस लिए पहुँचा हुआ पुरुष, जो कुल्ल-मालिक के इन क़ायदों से वाक़िफ़ हो गया है या जो किसी हद्द तक इनको अपने इस्तेमाल में लाता है, लाज़िमी तौर पर उनका पालन करने वाला होना चाहिए, न कि भंग करने वाला। यहाँ पर यानी इस मलीन माया-देश में चैतन्य-शक्ति का जो व्यवहार हैं अगर उस पर ख़्याल किया जावे तो मालूम होगा कि

चैतन्य-शक्ति सदा पोशीदा यानी छिपी हुई रहती है, यहाँ तक कि इन्सान की आला से आला दर्जे की बुद्धि को भी अपने अन्दर मौजूद चैतन्य-शक्ति की क्रियाओं का कुछ पता नहीं है। चैतन्य-शक्ति के केन्द्र यानी सुरत से निकल कर जो चैतन्य धारें जानदारों के अन्दर मुख़्तलिफ़ घाटों पर पहुँचती हैं उन्हीं की मारफ़त इन घाटों के ख़वास चैतन्य होते हैं और इन्सान को संसार का किसी क़दर तजरुबा और ज्ञान हासिल होता है जिसके सहारे से दुनिया का रोज़ाना काम चलता है। यह चैतन्यता, जो जानदारों के अन्दर इस तरीक़े से सुरत की धारों की मारफ़त जागती है, प्रकृति की जड़ शक्तियों के भेदों में किसी हद तक ग़ोता लगाने की भी ताक़त रखती है और इसी के ज़रिये से इन्सान नई नई मालूमात और ईजादें करता है जिनसे मनुष्य-जाति के सुख व आराम में तरक़्क़ी होती है और जिनको देख कर आम लोगों की आँखें खुलती हैं। मालूम होवे कि इन सब बातों को, जो साधारण चैतन्यता से तअल्लुक़ रखती हैं, चैतन्य-शक्ति की धारें खुद गुप्त रह कर ज़ाहिर करती हैं और इनका इज़हार करते हुए धारों का रुख़ बराबर अन्तर्मुख बना रहता है। इनके अलावा जो ग़ैरमामूली हालतें चैतन्यता की होती हैं, जैसे सक्ते या हिप्नॉटिज़्म की हालत जिन में अन्तरी प्रकाश और चैतन्य-शक्ति का कोई असाधारण

अङ्ग कभी कभी ज़ाहिर होता है, उनके दौरान में मामूल यानी वह शख़्स जिस पर हिप्नॉटिज़्म की नींद या सक्ते की हालत तारी है, बेहोश रहता है और उसका अपने ऊपर कोई क़ाबू नहीं रहता और उसकी सब कार्रवाई या तो आमिल यानी हिप्नॉटिज़्म करने वाले की मर्ज़ी के मुताबिक़ हुआ करती है या बेठिकाने होती है। अलावा इसके यह भी होता है कि बहुत सी बातें, जो मामूल इन हालतों में बयान करता है, ग़लत साबित हो जाती हैं, जिससे ज़ाहिर होता है कि इन ग़ैरमामूली हालतों में जागने वाली असाधारण शक्तियाँ बहुत ही कम पैमाने पर दुनियवी अग़राज़ हासिल करने के लिए इस्तेमाल हो सकती हैं।

ऊपर के बयान से सिद्ध होता है कि अन्तरी चैतन्यता या रूहानी ताक़तें ऐसे स्थूल संसारी कामों के सरंजाम देने के लिए नहीं हैं जो प्रकृति की शक्तियों की मारफ़त किये जा सकते हैं बल्कि इनके ज़िम्मे क़ुदरत के इन्तिज़ाम में कोई और ही सेवाएँ रक्खी गई हैं। इसके साथ साथ यह भी दरियाफ़्त होता है कि गुप्त रूहानी ताक़तें सिर्फ़ उन्हीं हालतों में जागती हैं और इस्तेमाल में आती हैं जब शरीर की क्रियाएँ पूरे तौर पर और मन की क्रियाएँ किसी हद्द तक बन्द या शिथिल हो जावें और इनके इस्तेमाल करने वाले की मर्ज़ी

किसी दूसरे की मर्ज़ी के आधीन हो जावे । अब अगर इन दोनों बातों को कामिल पुरुषों पर घटा कर देखा जावे तो नतीजा निकलता है कि किसी ऊँचे मण्डल या लोक में रसाई और ऊँचे दर्जे की रूहानी शक्तियाँ हासिल करने के लिए उनके वास्ते यह एक लाज़िमी शर्त होनी चाहिए कि वे अपनी मर्ज़ी को उस स्थान के धनी की मर्ज़ी के क़तई आधीन करें और ऐसी सूरत में दूसरा नतीजा यह निकलता है कि कामिल पुरुष उन सब क़ायदों की पूरी पाबन्दी करें जिन पर धनी अपने स्थान में खुद कारबंद है और धनी की ताक़तों के प्रकट करने की ग़रज़ से जो कुछ वे करें उसके लिए धनी की आज्ञा होनी चाहिए । कामिल पुरुष के लिए यह इजाज़त नहीं है कि अपनी मर्ज़ी और खुशी के मुताबिक़ जब चाहे उन क़ायदों को तोड़ कर स्वार्थी ज़रूरतों के पूरा करने के लिए ऊँचे दर्जे की शक्तियों को इस्तेमाल में लावे ।

४०—मोजज़ों में भेद ।

बाज़ आदमी इस क़िस्म के मिलते हैं कि जिनके अन्दर किसी क़दर रूहानी ताक़त तो जगी हुई है लेकिन वे किसी दर्जे के पहुँचे हुए पुरुष नहीं हैं और न ही वे पहुँचे हुए पुरुषों की ज़िम्मेवारियों से वाक़िफ़ हैं । ऐसे लोग अपनी रूहानी ताक़त का जान बूझ

कर दिखावा किया करते हैं और शोबदाबाज़ी की ग़रज़ से उसका नामुनासिब इस्तेमाल करते हैं। इस क़िस्म के तमाशों से हरचन्द अविश्वासियों के हृदय में परमार्थ और रूहानियत की जानिब किसी क़दर शौक़ जाग जाता है लेकिन ये तमाशे एक चीज़ हैं और सच्चे पैग़म्बरों और अवतारों ने जो चमत्कार दिखलाये वे दूसरी चीज़ हैं। अव्वल तो उन महापुरुषों ने चमत्कारों का इज़हार बहुत ही कम मौक़ों पर किया और जब कभी किया तो उस वक़्त ख़ास मन्शा यह रही कि उनके ज़रिये से उन अन्तरी स्थानों की मौजूदगी साबित करें, जिनका भेद वे बयान करते थे और नीज़ यह कि मनुष्यों के अन्दर रूहानियत की तरक़्क़ी हो ताकि वे अन्तरी अभ्यास करके उन ऊँचे स्थानों में रसाई हासिल करें। अलावा इसके ऐसे चमत्कार सिर्फ़ उन लोगों को दिखलाये गये जिनके अन्दर किसी क़दर रूहानियत मौजूद थी यानी जो लोग अन्तरी अभ्यास करने और ऊँचे स्थानों में रसाई हासिल करने के किसी क़दर अधिकारी थे।

४१–पैग़म्बरों और अवतारों के लिए मुसीबतों का सामना।

चैतन्य-शक्ति के स्वाभाविक नियम यानी ज़ाती उसूल के बिरुद्ध होने की वजह से मोजज़ों का इज़हार साधारण

मनुष्य-गति के घाट पर, ज़ो भोग विलास की बासनाओं से सना हुआ है, नहीं हो सकता था । यही वजह है कि जब जब पैग़म्बरों और अवतारों ने मजबूर होकर संसारी ज़रूरतों के पूरा करने के निमित्त अपनी ग़ैब की शक्तियों का इस्तेमाल किया तब तब उनको मुसीबतों का सामना करना पड़ा । उन्होंने अविश्वासियों को विश्वास दिलाने के लिए भी ख़ास कर साधारण तरीक़ों ही का इस्तेमाल किया यानी दलील अक़्ली व उपदेश व आचरण की शुद्धि ही की मारफ़त अपने आशय या मत का प्रचार किया और मोजज़ात से बहुत ही कम काम लिया ।

४२—परचे ।

मोजज़ों के अलावा अलबत्ता एक और तरीक़ा है जो ऐन क़ुदरती है और जिसकी मारफ़त उन महापुरुषों ने भक्तों और शिष्यों पर अपनी असाधारण शक्तियों का इज़हार किया । हमारा मतलब उन बार बार वाक़े होने वाले इत्तिफ़ाक़ात यानी आकस्मिक घटनाओं से है जिनका कारण मामूली तौर पर मनुष्य के ख़्याल में नहीं आता और जिनके ज़ैल में निहायत ग़ैरमामूली नतीजे ज़हूर में आया करते हैं और ऐसी सूरतें पैदा हो जाती हैं कि जिनकी निस्बत पहले से किसी को शान व गुमान भी नहीं हो सकता । मालूम होवे कि ये इत्तिफ़ाक़ात या आकस्मिक घटनाएँ, जैसा कि आम तौर पर ख़्याल किया

जाता है, बेउसूल यानी बेठिकाने बातें नहीं होतीं बल्कि जैसा हम आगे चल कर दिखलावेंगे ये भी क़ुदरती यानी नियमानुसार होने वाली बातों की तरह ख़ास क़ायदों के मुताबिक़ ही ज़हूर में आती हैं और जोकि आम तौर पर रोज़ाना ज़िन्दगी में इनके क़ायदों का इस्तेमाल जारी है इस लिए इनके अमल में लाने से ऊँचे दर्जे के किसी क़ायदे या नियम का उल्लङ्घन नहीं होता और इसी वजह से सच्चे साध, सन्त, महात्मा अपने शिष्यों को ख़ास कर परमार्थी नफ़ा पहुँचाने की ग़रज़ से इनके क़ायदों का जब तब इस्तेमाल करते हैं। चुनांचे शिष्यों की ऐसी मुश्किलें और कठिनाइयाँ, जिनको वे निहायत दुश्वार या अपने बस से बाहर की समझते हैं, साधना के ज़माने में अक्सर औक़ात अचानक ग़ायब हो जाती हैं और उस वक़्त इस क़िस्म की आकस्मिक बातें ज़हूर में आती हैं कि जिनके अन्दर उनको गुरू महाराज की दया का हाथ साफ़ नज़र आई देता है। इस क़िस्म के परचे बार बार मिलने से शिष्यों के दिल से गुरू महाराज की असाधारण शक्तियों की निस्बत सब शङ्काएँ दूर हो जाती हैं और शुकरगुज़ारी का अङ्ग लिए हुए सच्चा विश्वास उनके चरणों में क़ायम हो जाता है। मालूम होवे कि इस क़िस्म की दया सिर्फ़ तभी होती है जब शिष्य की सुरत की चढ़ाई के सिलसिले में कोई मुश्किलें

या कठिनाइयाँ वाक़े हों और सच्चे परमार्थ की रीति के विरुद्ध यानी ख़िलाफ़ संसारी बासनाओं के पूरा करने के लिए हरगिज़ नहीं होती। अगर कोई इस क़िस्म की संसारी दिक़्क़त पेश आ रही है कि जिससे शिष्य के लिए अभ्यास का बनना नामुमकिन हो रहा है तो वह हटा दी जाती है या हलकी कर दी जाती है लेकिन स्वार्थ से मुतअल्लिक़ निरी संसारी बासनाओं के पूरा करने के लिए कोई सहायता नहीं दी जाती। फ़ारसी ज़बान में किसी महात्मा ने कहा है:-

"तालिबाने दुनिया मक़हूर अन्द, तालिबाने उक़बा मज़दूर अन्द, तालिबाने मौला मसरूर अन्द।"

यानी दुनिया के चाहने वाले मालिक के क़हर या नाराज़गी के भागी होते हैं और मरने के बाद बहिश्त वग़ैरह के चाहने वाले मज़दूरे होते हैं और सच्चे मालिक के चाहने वाले परम आनन्द के भागी होते हैं।

४३—कामिल पुरुषों और अवतारों में फ़र्क़।

ऊपर की दफ़ात में कामिल पुरुषों की ताक़तों और कार्रवाइयों का ज़िक्र करते हुए जो बयान अवतारों और पैग़म्बरों के मोजज़ों व ग़ैरमामूली चमत्कारों का हुआ है उससे भ्रम हो सकता है कि कामिल पुरुषों और

अवतारों वग़ैरह में कोई फ़र्क़ नहीं होता, लेकिन यह सही नहीं है । हरचन्द अन्त में यानी सायुज्यगति हासिल होने पर कामिल पुरुष के अन्दर जिस स्थान तक उसने रसाई हासिल की है वहाँ के अवतार या पैग़म्बर की सी क़रीब क़रीब सभी शक्तियाँ आ जाती हैं, लेकिन उन पुरुषों में और अवतारों व पैग़म्बरों में बड़ा फ़र्क़ रहता है । मोटे तौर पर फ़र्क़ यह होता है कि अवतार या पैग़म्बर के अन्दर तो ऊँचे दर्जे की शक्तियाँ जन्म ही से मौजूद रहती हैं और पहुँचे हुए पुरुष के अन्दर वे शक्तियाँ साधन करके ऊँचे स्थानों में रसाई होने पर जागती हैं ।

४४—अवतार ।

अवतारों की निस्बत जो एक भारी ग़लतफ़हमी लोगों में फैल रही है उसको यहाँ पर दूर कर देना नामुनासिब न होगा यानी यह ख़्याल किया जाता है कि जब इन्सान एक महदूद चीज़ है तो यह यक़ीन करना निहायत लग़्व यानी असङ्गत या कम अज़ कम बईदुलअक़्ल (लोकमतविरुद्ध) ठहरता है कि कोई ऐसा धनी, जिसके अन्दर लामहदूद या भारी शक्तियाँ मौजूद हैं, अपने तईं मनुष्य-शरीर के कूज़े में बन्द करेगा लेकिन नीचे की दलीलों पर ग़ौर करने से इस ख़्याल की ग़लती साबित हो जावेगी। यह बयान हो चुका है कि जिस वक़्त किसी कामिल पुरुष की

सुरत मौत के मुक़ाम से गुज़रकर ब्रह्माण्डी मन के स्थानों या निर्मल चैतन्य-मण्डलों में (जैसी सूरत हो) प्रवेश करती है उस वक़्त उसकी चैतन्यता का आभास ही अपने शरीर की मामूली क्रियाओं के अंजाम देने के लिए काफ़ी होता है और सुरत की धारों का शरीर के साथ तअल्लुक़ क़ायम रहने की वजह से उसकी रूहानी गति यानी अन्दरूनी चाल में कोई हर्ज वाक़ै नहीं होता। अब अगर कामिल पुरुषों की निस्बत इस तरह का ख़्याल दुरुस्त हो सकता है तो अवतारों की निस्बत यह और भी ज़्यादा मज़बूती के साथ सही होना चाहिए। चुनांचे धनी तो अपने धाम में रहता हुआ अपने धाम की सँभाल बदस्तूर करता रहता है लेकिन सीधी उससे निकली हुई किरनियाँ मनुष्य-रूप धारण कर लेती हैं और इसीको धनी का अवतार धारण करना कहते हैं। यह अवतारस्वरूप धनी की ख़ास प्रेरणा से इस क़िस्म की कार्रवाइयाँ अमल में लाता है जिनसे अवतार धारण करने की ग़रज़ सरंजाम पावे। जैसे बाज़ दरियाओं के उस हिस्से में, जो समुद्र से मिला होता है और जिसमें ज्वार का पानी आया करता है, ज्वारभाटा आने पर समुद्र से पानी आता और जाता है, हरचन्द पानी का आना जाना दरिया ही के अन्दर हुआ करता है लेकिन ये दोनों क्रियाएँ ज्वारभाटे की हिलोर का ही अङ्ग होती हैं और

समुद्र तो जहाँ का तहाँ ही बना रहता है लेकिन उसकी हिलोरें दरिया में ज्वारभाटे के पानी के आने जाने का इन्तिज़ाम किया करती हैं।

४५–अवतार की आमद से संसार को भारी लाभ पहुँचता है।

सवाल हो सकता है कि वह कौन सी ज़रूरत व ग़रज़ है जिसके पूरा करने के लिए संसार में अवतार की आमद होती है, चुनांचे अब इसी का जवाब देते हैं। यह बयान हो चुका है कि रचना में, जो एक सर्वज्ञ पुरुष ने सजाई है, कोई भी चीज़ बेठिकाने या इत्तिफ़ाक़िया नहीं है और रचना और इसके निवासियों के लिए जो भी अवस्थाएँ रवा रक्खी गई हैं उन सब के अन्दर दया से भरे हुए क़ायदे क़ानून काम कर रहे हैं, इस लिए ज़ाहिरा कष्ट और क्लेश की हालतों के अन्दर भी, हरचन्द वे निहायत दुखदायी और अक्सर हृदय-विदारक होती हैं और सख्त बेरहमी उनसे टपकती है, बराबर मसलहत अन्त में लाभ पहुँचाने की मौजूद रहती है क्योंकि ये हालतें आखिर उस सर्वज्ञ यानी आलिमे कुल व अक़्ले कुल सच्चे मालिक ही के किसी क़ायदे क़ानून का ज़हूरा तो हैं और जब यह मान लिया गया कि रचना का आदि यानी मूल कारण एक सर्वज्ञ पुरुष है

तो इसके अन्दर सदा के लिए दुख भोगने की सूरत की मौजूदगी अयुक्त यानी लग़्व हो जाती है और जब ऐसी अवस्थाओं तक के अन्दर, जो कुल्ल-मालिक के परम आनन्दमय जौहर के विरुद्ध मालूम होती हैं, मसलहत लाभ की मौजूद है तो संसार में अवतारों की आमद के अन्दर, जो खुद परम आनन्दमय जौहर के अन्दर मौज उठने के कारण होती है, कमाल दर्जे की दया व मेहर मुतसव्वर होनी चाहिए।

४६–संसार में कलाधारी पुरुषों के द्वारा ही सब सुख का सामान और ज्ञान प्रकट होता है।

तहज़ीबयाफ़्ता लोगों के सब के सब सुख और भोग बिलास, उनके वे सब आले औज़ार व सामान, जिनसे दुख दूर होते हैं और दूर रहते हैं या जिनसे सौदागरी व व्यापार की तरक़्क़ी होती है; उनकी वे सब मालूमात व ईजादात, जिनसे सृष्टि के अन्दरूनी इन्तिज़ाम व क़ायदा क़ानून की मनुष्य को किसी क़दर झलक मिलती है (हरचन्द वह झलक महज़ जुज़्वी यानी अल्प होती है); वे तमाम रूपक व नाज़ुक ख़्यालात व फ़ाज़िलाना तस्नीफ़ात, जिनके ज़रिये से बुद्धि को शान्तिमय सुख प्राप्त होता है और वे सब क़ायदे क़ानून, जिनका ख़ास मतलब विरोध को दूर करके दुनिया के काम काज के लिए सहूलियत और प्रेम की सूरत पैदा

करना है, सभी का ज़हूर इस पृथ्वी पर कलाधारी यानी ख़ास तरह के संस्कार वाली सुरतों की आमद ही से हुआ है और मालूम होता है कि मुख्तलिफ़ क़ौमों की उन्नति और अवनति यानी तरक़्क़ी व तनज़्ज़ुली और उनकी तहज़ीब यानी उनमें इन्सानियत का बढ़ाव घटाव इस क़िस्म की सुरतों ही की मौजूदगी और अदममौजूदगी के हिसाब से होता रहा है। इस लिए यह कह सकते हैं कि सब के सब इल्म व फ़न का ज़हूर, जो पिछले ज़माने में इस संसार में प्रकट हुए, अब हो रहे हैं या आयन्दा होंगे, मुनासिब दिमाग़ी क़ाबिलियत वाली संस्कारी सुरतों के द्वारा ही मुमकिन है।

४७–परमार्थ का सब ज्ञान पैग़म्बरों और अवतारों द्वारा प्रकट हुआ।

जिस तरह मुख्तलिफ़ वक़्तों पर मुख्तलिफ़ संस्कारी सुरतें संसार में आती हैं और इल्म व फ़न का प्रकाश करती हैं इसी तरह मुनासिब वक़्तों पर पैग़म्बर और अवतार भी तशरीफ़ लाते हैं और समयानुसार जीवों को परमार्थी फ़ैज़ फ़ायदा पहुँचाते हैं। वे उस वक़्त अपने निज धाम का यानी जहाँ से वे आते हैं भेद प्रकट फ़रमाते हैं और सब जीवों को उपदेश उस साधन की कमाई का करते हैं जिससे जीव उनके निजधाम में रसाई हासिल

कर सकें। जिस ज़माने में जीव सीधे सादे और श्रद्धावान् थे, महापुरुषों का स्वच्छ जीवन और पाक रहनी गहनी ही इस क़ाबिल थी कि जिसको देखकर जीवों के हृदय में उनका उपदेश जगह कर लेता था, चुनांचे जो अन्तरी भेद यानी साधन की युक्तियाँ उन्होंने बयान कीं उनको लोगों ने बिला किसी हुज्जत व शक के अङ्गीकार कर लिया और उनकी कमाई करके परमार्थी यानी रूहानी लाभ भी उठाया। साधन की कमाई में, चाहे वह किसी दर्जे की हो, वे सब रुकावटें और मुश्किलें, जिनका हम आगे जिक्र करेंगे, जीवों को हमेशा पेश आती रहीं, इस वक़्त भी आती हैं और आयन्दा भी आती रहेंगी। सच्चे गुरू की मदद से, जो हर सच्चे मत या मज़हब के शुरू में हमेशा अवतार या पैग़म्बर हुए और उनके बाद अगर किसी गुरुमुख ने (यानी ऐसे शिष्य ने जिसने उनके सतसंग में रहकर युक्ति की कमाई पूरे तौर पर कर ली थी) उनकी रूहानी कार्रवाई जारी रक्खी तो उसकी सहायता से, उन मुश्किलों को जीतना कोई कठिन काम न था, लेकिन जब इस क़िस्म के महापुरुष नापैद (दुर्लभ) हो गये तो उनकी संगतों में सिर्फ़ ज़ाहिरी रस्मियात का बजालाना बाक़ी रह गया और अन्तर में तरक़्क़ी करना क़रीब क़रीब बन्द हो गया। साधन की कमाई से हमारा मतलब यहाँ पर अन्तर में स्वप्न, सुषुप्ति, सक्ते और मौत की

हालतों से गुज़रकर ऊँचे मण्डलों में चढ़ाई से है। इस अन्तरी चढ़ाई में हर नई मंज़िल पर अभ्यासी के निचली मंज़िल वाले मन, बुद्धि वग़ैरह लय हो जाते हैं और वहाँ की ये शक्तियाँ जगाने यानी चैतन्य करने के लिए उसको किसी सहायक यानी मददगार पुरुष की वैसी ही ज़रूरत है जैसी कि नन्हे बच्चे को यहाँ पर परवरिश पाने के लिए माता की ज़रूरत होती है।

४८—तहक़ीक़ात के लिए नये शौक़ का जागना।

इसमें शुबह नहीं कि पिछले वक़्तों में अवतार और पैग़म्बर अन्तरी रोशनी की मदद से अपने प्रकट किये हुए भेद को दलीलों के ज़रिये पायेसुबूत तक पहुँचा सकते थे लेकिन वह ज़माना इसके लिए तैयार न था, इस वजह से उन्होंने जीवों को विश्वास दिलाने की ख़ातिर अन्तरी रास्ता व स्थानों का भेद बयान करने के अलावा और कोई कोशिश नहीं की। लेकिन आज कल के ज़माने में बड़े ज़ोर के साथ हवा बदल रही है और संसार भर की यही माँग हो रही है कि हर बात अमली जामे में और ठीक ठीक नाप व तौल के साथ बयान होनी चाहिए और हर मुआमले के सुबूत के लिए, चाहे वह परमार्थी हो या स्वार्थी, अक़्ली दलीलें पेश होनी चाहिएँ। मालूम होवे कि लोगों की इस क़िस्म की माँग व चाह

परमार्थी जिज्ञासा की रीति के विरुद्ध नहीं है बल्कि बरखिलाफ़ इसके इस चाह की वजह से अन्तरी भेद ऐसी शक्ल में पेश किया जा सकेगा कि जिसको समझ कर मनुष्यों के शुबहे हमेशा के लिए दूर हो जावेंगे और वाजह हो कि आम लोगों के मन ने यह ढंग योंही यानी महज़ इत्तिफ़ाक़ से इख़्तियार नहीं कर लिया है बल्कि दर असल यह नतीजा उनके उस दिली शौक़ का है जो उनके अन्दर सदास्थायी लाभ के दिलाने वाले सब से ऊँचे भेद के जानने के लिए मौजूद है।

४९–प्रचलित मतों के अवतार व पैग़म्बर।

आगे चल कर दिखलाया गया है कि वे सब अवतार व पैग़म्बर, जिनका पीछे ज़िक्र हुआ, रचना के दूसरे बड़े दर्जे यानी ब्रह्माण्डी मन या ब्रह्म के देश से आये थे और यह बयान हो चुका है कि उस ब्रह्म और उसके देश को जान व ताक़त सच्चे कुल्ल-मालिक यानी चैतन्य-शक्ति के निज सोतपोत और भण्डार से प्राप्त होती है और मृत्यु के समय जो दशा रद्द व बदल की मनुष्य के मन को व्यापती है उसी प्रकार की ब्रह्म और उसके देश को भी व्यापती है इस लिए ज़ाहिर है कि ब्रह्म के देश में पहुँचने पर अगर्चे अरसा दराज़ के लिए जीव को भारी रूहानी फ़ायदा हासिल होता है लेकिन परम और अविनाशी आनन्द प्राप्त नहीं

होता और न ही उसका हर तरह के रद्द व बदल व मृत्यु से हमेशा के लिए छुटकारा होता है और चूँकि मनुष्य के मन की तरह ब्रह्मांडी मन की रुजूआत यानी वृत्ति अपने देश में बहिर्मुखी है इस लिए अन्तर्मुखी चैतन्य-धारों की मदद से जब सुरत ब्रह्माण्ड के परे यानी निर्मल चैतन्य-धाम की तरफ़ चढ़ती है तो ब्रह्माण्डी मन की वृत्तियाँ स्वाभाविक तौर पर विरोध करती हैं। अलावा इसके जैसें मनुष्य का मन चौबीस घण्टे अपने ही सुख के कामों में लगा रहता है इसी तरह ब्रह्माण्डी मन भी अपनी ही ज़ात के मुतअल्लिक़ इन्तिज़ाम में मसरूफ़ रहता है और जैसे मनुष्य के मन को निर्मल चैतन्य-देश का कोई ख़्याल नहीं आता वैसे ही उसकी भी तवज्जह उस तरफ़ क़तई नहीं जाती। जब ब्रह्माण्डी मन का यह हाल है तो उसके हुक्म से प्रकट होने वाले अवतारों और पैग़म्बरों का भी ऐसा ही हाल होना चाहिए। चुनांचे उन महापुरुषों ने सिर्फ़ ब्रह्माण्डी मन के देश तक की रसाई के लिए इन्तिज़ाम फ़रमाया और वह भी ऐसे तरीक़े से कि सिर्फ़ वे जीव, जो ख़ुद उनके चरणों में लगे या जो उनके गुरुमुख शिष्यों की शरण में आये, उनके उपदेश से अमली फ़ायदा उठा सके और जो लोग उनके बाद उनके मत के अनुयायी बने, उनको ज़िन्दगीभर में जो असल रूहानी तरक़्क़ी प्राप्त हुई

वह न ही के बराबर थी। मरने के बाद वे सब लोग अपने शुभाशुभ कर्मों के अनुसार ऊचे या नीचे देशों में दाख़िल हुए लेकिन ब्रह्माण्डी मन के देश यानी ब्रह्माण्ड में उनको बास नहीं मिला क्योंकि मन की धारों का बहिर्मुखी झुकाव पूरे तौर पर नाश हुए बग़ैर कोई जीव ब्रह्माण्ड में क़दम रखने का अधिकारी नहीं होता। ऐसे ही ब्रह्माण्डी मन की बहिर्मुखी वृत्तियों की पूरी तरह सफ़ाई हुए बग़ैर कोई सुरत निर्मल चैतन्य-देश में प्रवेश करने के क़ाबिल नहीं होती। वृत्तियों की इस सफ़ाई की मिसाल प्रकृति यानी माद्दा के अन्दर होने वाली उन तब्दीलियों से दी जा सकती है जो उसके ठोस से अयन अवस्था में बदलने पर वाक़ै होती हैं यानी अव्वल तो परमाणुओं को वह मिलाप-अङ्ग छोड़ना पड़ता है कि जिसकी वजह से माद्दा की ठोस अवस्था क़ायम है और इसके बाद जब माद्दा की दूसरी यानी जलवत् तरल अवस्था हो जाती है तो इस अवस्था वाली चिकनी पकड़ छोड़नी होती है और फ़िर वज़न यानी गुरुत्व पैदा करने वाली पृथ्वी की आ-कर्षण-शक्ति ख़ारिज करनी पड़ती है और बाद में परमाणुओं के रगड़ के साथ पृथक् होने पर प्रकट होने वाली दशा, जो गर्मी या ताप की अवस्था है, पार करनी होती है। इसके बाद परमाणु फूटकर अयन-अवस्था को प्राप्त होते

हैं। ख़्याल रहे कि हर तब्दीली में यानी एक अवस्था से दूसरी में दाख़िल होने पर परमाणुओं की आज़ादी और ताक़त बढ़ती चली जाती है।

५०—अवतारों और पैग़म्बरों के ब्रह्माण्ड से आने का सुबूत।

ऊपर यह बयान किया गया कि प्रचलित मतों के अवतार व पैग़म्बर इस लोक में यानी पृथ्वी पर ब्रह्माण्डी मन के स्थानों से आये। इसका सुबूत उन महापुरुषों की प्रकट की हुई पवित्र पुस्तकों में मौजूद है क्योंकि जो अन्तरी भेद उन पुस्तकों में वर्णन किये गये हैं उनसे आत्मविद्या जानने वालों को साफ़ मालूम होता है कि उन महापुरुषों की मंज़िले मक़सूद यानी उनका निशाना रचना के दूसरे दर्जे के अन्दर वाक़े है। साधारण मनुष्य अलबत्ता इन बातों के समझने में लाचार हैं इस लिए उनको मुख़्तलिफ़ प्रचलित मतों के सिद्धान्तों यानी पहुँचने की मंज़िलों में कोई फ़र्क़ मालूम नहीं होता और बहुत सी ऐसी बातें, जो आम लोगों को ज़ाहिरा असम्भव या हँसी के लायक़ मालूम होती हैं, वाक़िफ़कारों के लिए अन्तरी मुक़ामात और सुरत की चढ़ाई का भेद बयान करती हैं। मसलन् कहा जाता है कि मुहम्मद साहब अपने मशहूर बुर्राक़ घोड़े पर सवार होकर आकाश में चढ़ गये और चढ़ाई के दौरान में उन्होंने शक़्क़ुलक़मर किया

यानी चन्द्र के दो टुकड़े कर डाले । ये बातें साधारण मनुष्यों को, जो अन्तरी भेद की पारिभाषिक बोली से नावाक़िफ़ हैं और जिन्होंने अन्तरी साधन के मुतअल्लिक़ कोई शिक्षा नहीं पाई है, महज़ गप्प यानी मिथ्या वचन मालूम होंगी लेकिन किसी आध्यात्मिक विद्यालय के छात्र यानी विद्यार्थी को इनके दूसरे ही अर्थ दरसते हैं । वह समझता है कि बुर्राक़ घोड़े से मतलब, जिस पर पैग़म्बर साहब सवार हुए थे, रचना के तीसरे भाग यानी पिण्ड देश की सब से ऊँचे दर्जे वाली बिजली-शक्ति से है और चूँकि यह शक्ति इस देश के तमाम स्थूल पदार्थों की जान यानी रूह के तौर पर है इस लिए इसी धार पर सवार होकर चलने से ऊँचे चढ़ाई हो सकती है । इस धार का मखज़न यानी स्रोत चन्द्रस्थान में वाक़ै है । चन्द्र से यहाँ पर मतलब पृथ्वी के उपग्रह चाँद से नहीं है । वह चन्द्रस्थान पृथ्वी पर चमकने वाले सूरज के परे वाक़ै है और मनुष्य-शरीर के छठे चक्र यानी सुरत की बैठक के मुक़ाम से मुताबिक़त रखता है । इस मुक़ाम के परे जाने के लिए ज़रूरी है कि यह केन्द्र यानी चक्र बेधा जावे । जब पैग़म्बर साहब इस चक्र को बेधकर पार हो गये तो आध्यात्मिक बोली में यह कहा जा सकता है कि उन्होंने चन्द्र के दो टुकड़े कर दिये । बाद में पैग़म्बर साहब को दूर से एक जगमगाती हुई लाट यानी

लौ का दर्शन हुआ जिसको वैदिक धर्म में ज्योति कहा गया है और जो मायासबल ब्रह्म की अर्द्धाङ्गिनी है। मुहम्मद साहब पर तमाम हुक्म और इलहाम इसी स्थान से नाजिल हुए और उनके उपदेश की मंज़िले मक़सूद यहीं पर खत्म हो जाती है।

५१—जीवोद्धार ।

चूँकि ज्ञेय वस्तु के साथ चैतन्य-धार का तअल्लुक़ क़ायम होने ही पर हर क़िस्म के ज्ञान की प्राप्ति होती है इस लिए किसी धनी के जौहर और उसके धाम की रचना का हाल या तो खुद उसी को मालूम हो सकता है या उससे ऊपर के मुक़ाम के धनी को हो सकता है इसी वजह से जब किसी धनी को ज़रूरी और मुनासिब मालूम होता है कि अपने से नीचे स्थानों के बासियों को अपने धाम में बासा देवे तो उस धाम का भेद बतलाने और उसमें पहुँचने की युक्ति सिखलाने के लिए अव्वल उसको खुद अवतार धारण करना पड़ता है। लेकिन इस क़िस्म के अवतार कम होते हैं और जब उनकी आमद होती है तो निहायत गुप्त से गुप्त भेद प्रकट कर दिये जाते हैं और जो जीव उनके चरणों में लगते हैं वे अन्तर में जल्द भारी तरक़्क़ी हासिल करते हैं। ऐसे अवतार के चोला छोड़ने पर जीवोद्धार की कार्रवाई

उनका गुरुमुख जारी रखता है और जिस दर्जे की रसाई गुरुमुख ने हासिल की है उसी दर्जे का फ़ैज़ फ़ायदा उसकी मारफ़त जीवों को पहुँचता है। अगर गुरुमुख की रसाई दर्जे अव्वल की है यानी उसने धनी के जौहर के साथ सायुज्यगति हासिल कर ली है तो उस हालत में उसकी मारफ़त अवतार स्वरूप के समान ही फ़ैज़ फ़ायदा साधन करने वालों को प्राप्त होता है।

५२—अवतारों की आमद से पहले तैयारी।

कभी कभी यह मुनासिब होता है कि किसी धनी के अवतार धारण करने से कुछ पहले बतौर रास्ता तैयार करने के धनी का जुज़्वी भेद बयान कर दिया जावे और इसके लिए धनी के जौहर से उत्पन्न किसी सुरत को, जिसको उसका निज पुत्र या उसके धाम की सुरत कहना चाहिए, बल देकर इस लोक में उतारा जाता है। वाज़ह हो कि न सिर्फ़ रचना के दूसरे दर्जे यानी ब्रह्माण्ड-देश का भेद संसार में इस तरीक़े से प्रकट किया गया है बल्कि निर्मल चैतन्य-देश के स्थानों का भी भेद इसी क़ायदे से प्रकट हुआ है और सन्त यानी ऐसे कामिल पुरुष, जिनको निर्मल चैतन्य-देश में सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, या सायुज्य गति हासिल थी और जो उस देश के मुख़्तलिफ़ स्थानों के धनियों की अंश यानी निज पुत्र थे, इस सिल-

सिले में संसार में आये और शुरूआत कबीर साहब की तशरीफ़आवरी से हुई। उनके बाज़ शब्दों से निहायत साफ़ तौर पर ज़ाहिर होता है कि वे उस सब से ऊँचे धाम से तशरीफ़ लाये थे जो अलख और अगम के परे है और जिसको राधास्वामी-धाम कहते हैं। कबीर साहब सच्चे कुल्ल-मालिक राधास्वामी के निज पुत्र थे और वे अपने सच्चे परम पिता के जलीलुल्क़दर फ़रमान संसार में पहुँचाने की ग़रज़ से बतौर पेशख़ेमा के तशरीफ़ लाये। चुनांचे उन्होंने इशारे में नीचे लिखी हुई कड़ी के अन्दर इन बातों का ज़िक्र किया है:—

"कहैं कबीर हम धुर घर के भेदी लाये हुकुम हज़ूरी।"

यानी कबीर साहब, जो धुर घर यानी सब से ऊँची मंज़िल के भेद से वाक़िफ़ हैं, कहते हैं कि वे हुज़ूर यानी सच्चे मालिक के फ़रमान लेकर आये हैं।

कबीर साहब के पीछें मुख़्तलिफ़ वक़्फ़ों के बाद दूसरे सन्त संसार में तशरीफ़ लाये, जैसे गुरू नानक साहब, जगजीवन साहब, पलटूदास, तुलसी साहब हाथरस वाले (इनको और कवि तुलसीदास जी को, जो रामायण के रचयिता थे, एक नहीं समझना चाहिए)। इनके अलावा और भी कई एक महापुरुष, जो उनसे थोड़ा नीचा दर्जा रखते थे, संसार में प्रकट हुए, जैसे ग़रीबदास जी,

सतगुरु और सत्संग को बयान की है। सतनाम के मानी सच्चा नाम है और मंशा यह है कि सच्चे यानी चैतन्य-नाम का अन्तर में श्रवण या उच्चारण किया जावे। सतगुरु के मानी सच्चा गुरू है और मुराद ऐसे कामिल पुरुष से है जिनको निर्मल चैतन्य देश तक रसाई हासिल है और जो अपने शिष्य को उस देश तक ले जा सकता है। गुरू नानक साहब ने सच्चे गुरू की पहचान की निस्बत फ़रमाया है :—

"घर में घर दिखलाय दे सो सतगुरु पुरुष सुजान।
पंच शब्द धुनकार धुन बाजैं शब्द निशान।"

यानी जो कामिल पुरुष घर के अन्दर घर दिखला सकता है वही वाक़िफ़कार सच्चा गुरू है। पाँच अलहदा अलहदा स्थानों से पाँच अलहदा अलहदा शब्दों की झन्कारें उठ रही हैं।

सतसंग के मानी सच्चे संग या सोहबत के हैं और चूँकि सतगुरु जगत में निर्मल चैतन्य जौहर के, जो अबिनाशी होने के कारण असल सत्य वस्तु है, जीते जागते स्वरूप होते हैं इस लिए उनकी सोहबत में उठना बैठना बाहरी सतसंग कहलाता है और अन्तर में चैतन्य धार का संग अन्तरी सतसंग कहलाता है जिसमें अन्तरी चैतन्य शब्दों को सुनना होता है या अन्तर में चैतन्य नामों का उच्चारण करना होता है। अलावा इसके चूँकि सतगुरु को अपने शिष्यों के चैतन्य घाटों में रसाई हासिल रहती है इस लिए उनके बिला माँगे या प्रेम व श्रद्धा से सतगुरु-स्वरूप का चिन्तवन करने पर या उनकी दया व मेहर की मन में याद करने पर अगर उनके दर्शन अन्तर में प्राप्त हों तो यह भी अन्तरी सतसंग कहलाता है।

५४—राधास्वामी दयाल की तशरीफ़आवरी।

जब उन सन्तों और कामिल पुरुषों ने जिनका पीछे ज़िक्र हुआ जीवों के उद्धार के सिलसिले में क़दम आगे बढ़ाने के लिए ज़मीन को तैयार कर दिया तब सब से ऊँचे चैतन्य-धाम के धनी यानी हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने अवतार धारण फ़रमाया। आपके तशरीफ़ लाने पर सन्तों के मत के उसूल और

उसकी शिक्षाएँ और साधन की युक्तियाँ, जो पहले से ज़ाहिर हो चुकी थीं, निहायत सादी शक्ल में प्रकट की गईं और अभ्यास ऐसा आसान कर दिया गया कि हर एक इन्सान–पुरुष हो या स्त्री, बूढ़ा हो या जवान–आसानी और कामयाबी के साथ उसकी कमाई कर सकता है बशर्तेकि वह दुनियवी व्यवहार व खान पान के मुतअल्लिक़ चन्द सादे क़ायदों की पाबन्दी करना मंजूर करे।

आज तक किसी की समझ में नहीं आया था कि रचना किस तरतीब से और किस मतलब से रूपवान हुई और न ही सन्तों ने इसकी ज़्यादा तशरीह की थी लेकिन रधास्वामी दयाल ने इस भेद को निहायत मुकम्मल शक्ल में खोल कर सुनाया और नीज़ सब से ऊँचे धाम का शब्द यानी निज नाम, जो पिछले सन्तों ने ज़ाहिर नहीं किया था, प्रकट फ़रमाया और अपने कलाम की सचाई साबित करने की ग़रज़ से सतसंग आम में, जो आपकी सदारत में रोज़मर्रा हुआ करता था, अद्भुत बचन फ़रमाये और बचनों में इस क़िस्म की अक़्ली दलीलों यानी युक्तियों से काम लिया जो न्याय यानी इल्मसन्तिक़ के नियमों के ऐन मुताबिक़ थीं और आम तौर पर तजरुबे में आने वाली बातों से दृष्टान्त देकर और अभ्यास के अन्दरूनी तजरुबात की मदद से

उन युक्तियों की तसदीक़ फ़रमाई। इस पुस्तक के अन्दर हुज़ूर राधास्वामी दयाल के प्रकट किये हुए भेद का वैज्ञानिक रीति से जो वर्णन किया गया है वह उन अमृत-बचनों ही के आधार पर है।

५५—आध्यात्मिक साधन के लिए वक्त-गुरू की ज़रूरत।

सन्त और कामिल पुरुष चोला छोड़ते वक्त अपनी चैतन्यता को उन सब घाटों से, जिनके साथ संसार में तशरीफ़ लाने से इसका तअल्लुक़ क़ायम होता है, हटाकर अपने निज धाम में जा समाते हैं मगर उनकी संसार से रवानगी साधारण मनुष्यों की तरह नहीं होती। उनको इसकी निस्बत पहले से इत्तिला रहती है और इसका मौक़ा तब आता है जब वह मौज या ग़रज़ जिसके निमित्त उनकी संसार में तशरीफ़आवरी हुई थी पूरी हो चुकती है। जब तक ये महापुरुष देह में बिराजते हैं उस वक्त तक उनकी चैतन्यता ऐसी ज़बरदस्त रहती है कि हर एक वस्तु जो उनके स्पर्श में आती है किसी क़दर चैतन्य असर अपने अन्दर ले लेती है और जो चीज़ें इस तौर से प्रसाद हो जाती हैं उनको छूने या इस्तेमाल में लाने वालों को परमार्थी लाभ पहुँचता है लेकिन जिस धाम से वे आये थे वहाँ के धनी की शक्ति का इज़हार उनके गुप्त होने पर संसार में

बंद हो जाता है। चूँकि यह क़ायदा है कि रचना के किसी मण्डल से मख़सूस चैतन्य उससे नीचे मण्डल में सिर्फ़ रिस या झिर कर आ सकता है जिससे ऊपर के चैतन्य का सिर्फ़ ख़फ़ीफ़ जुज़ नीचे उतर पाता है इस लिए सन्त या दूसरे महापुरुष संसार से वापस होजाने पर इस क़ायदे के ख़िलाफ़ यहाँ के जीवों को उस तरह की रूहानी इमदाद नहीं पहुँचाते जैसी कि वे अपने क़याम के दौरान में पहुँचाते थे। प्रेत-योनि के जीव अलबत्ता, जो मृत्यु के कारण स्थूल शरीर की क़ैद से छूट जाते हैं और जिनके अन्दर संसारी बासनाएँ व बन्धन बदस्तूर मज़बूत बने रहते हैं, अपने सूक्ष्म मण्डल से (जो पृथ्वी से मिला हुआ है और पृथ्वी के आकाश मण्डल में क़ायम है) उतरकर उन मित्रों और रिश्तेदारों से अक्सर मुलाक़ात किया करते हैं जिनके साथ उनकी प्रीति होती है और इसके अलावा भी, कभी अच्छी कभी बुरी ग़रज़ से, दुनिया के मामलात में दख़ल दिया करते हैं, लेकिन साध, सन्त, महात्मा, जिनकी संसार और उसके पदार्थों में कोई आसक्ति नहीं है और जो सिर्फ़ अपने धनी की आज्ञा से जीवों को फ़ैज़ फ़ायदा पहुँचाने की ग़रज़ से संसार में चरण पधारकर क़याम फ़रमाते हैं, जब अपने निज धाम में लौट जाते हैं तो फिर संसार के कारोबार से कोई सम्बन्ध नहीं

रखते । यही वजह है कि जिससे अन्तरी अभ्यास बन पड़ने के लिए सब सन्तों ने आम तौर पर और राधास्वामी दयाल के अवतार ने ख़ास तौर पर निहायत ज़ोर वक़्त-गुरू की ज़रूरत पर दिया है । आत्मविद्या एक निहायत नाज़ुक और करनी से तअल्लुक़ रखने वाला विषय है, जिसमें ऐसे अन्तरी घाटों पर बाक़ायदा रोज़ाना अभ्यास करना होता है जिनसे अभ्यासी बिलकुल नावाक़िफ़ है, इस लिए महज़ साध, सन्तों की बाणी का पढ़ लेना अभ्यास बन पड़ने के लिए काफ़ी नहीं है । अभ्यास कामयाबी के साथ तभी बन सकता है जब सतगुरु की मदद अन्तर और बाहर दम दम पर मिलती रहे । असल में सारे फ़साद की जड़ अहङ्कार है । अहङ्कार से यहाँ हमारी मुराद तकब्बुर और मान बड़ाई के ख़्यालों से नहीं है बल्कि हँगता यानी आपा ठानने से है यानी यह ख़्याल करना कि जो कुछ स्वार्थ परमार्थ के मुतअल्लिक़ हो रहा है वह कर्ता यानी कार्य्य करने वाले की ही क़ाबिलियत या शक्ति का परिणाम है और उस भण्डार का कोई लिहाज़ न रखना जहाँ से उस कर्ता ने क़ाबिलियत या शक्ति हासिल की है । जब तक यह अङ्ग जीव के अन्दर बना रहता है उसकी सुरत के लिए ऊँचे स्थानों में प्रवेश करना नामुमकिन रहता है क्योंकि उस वक़्त तक वह अपने मन के आपे ही के गिर्द घूमता रहता

है और उसी को अपना असल स्वरूप यानी निज आपा समझता है जिससे कोई असल अन्तरी तरक़्क़ी हासिल नहीं हो सकती। मालूम होवे कि शिष्य की इस कठिन रुकावट को सिर्फ़ गुरू महाराज ही, जो अपनी सब क्रियाएँ इस आपे से परे के घाटों से करते हैं, दूर कर सकते हैं। वे इस तरह की दया शिष्य पर बिला उसकी माँग के ऐसे मौक़ों पर फ़रमाते हैं जब वह अपनी हर तरह की कोशिश निष्फल देखकर निराश और अधीर होने लगता है। साधन की कमाई के सिलसिले में इस क़िस्म के तजरुबे बार बार होने पर शिष्य के ख़्यालात और स्वभाव रफ़्ता रफ़्ता बदलने लगते हैं। उसके मन में अपनी क़ाबिलियत व लियाक़त का घमण्ड टूट कर, सच्ची दीनता पैदा हो जाती है और वह दया व मदद की बख़्शिश के लिए वक़्तन् फ़वक़्तन् अपनी दृष्टि व तवज्जह ऊँचे स्थानों की तरफ़ मुख़ातिब करता है जिसका बार बार मुहावरा होने पर उसके मन का घाट बदल जाता है। कुछ अरसे बाद जब उसके अन्दर ऊँचे घाट की शक्तियाँ किसी क़दर जाग जाती हैं और नई आज़ादी, नये आनन्द और नई दृष्टि के तजरुबे प्राप्त होते हैं तो मारे ख़ुशी के उसका दिल बाग़ बाग़ हो जाता है और अहङ्कार के अन्तर्गत जो फ़साद जमा और छिपा है उसको साक्षात् दरसने लगता है और नीज़ भक्ति की

महिमा और उसके रस व आनन्द का उसको ठीक ठीक पता चल जाता है। मालूम होवे कि ऐसी निर्मल और सच्ची भक्ति, जो भक्तजन को तेज़ी के साथ उसके भगवन्त की जानिब ले जाने वाली है, सिर्फ़ प्रत्यक्ष-गुरू की ही मदद से जाग सकती है। ऐसे प्रेमीजन जिन्होंने भक्ति में किसी क़दर तरक़्क़ी हासिल की है दूसरे भाइयों की, जो उनसे तरक़्क़ी में पीछे हैं, इतनी मदद कर सकते हैं कि अपने अन्तरी तजरुबों का हाल सुनाकर और अपनी रहनी गहनी के असर से उनके विश्वास और भक्ति के शौक़ को किसी क़दर दृढ़ कर दें, लेकिन किसी की सुरत का मामूली बैठक के मुक़ाम से हटकर ऊँचे स्थानों में चढ़ना केवल वक़्त-गुरू की मौजूदगी ही में हो सकता है। इसका यह मतलब नहीं है कि शिष्य हर वक़्त ही वक़्त-गुरू के चरणों में हाज़िर रहे बल्कि मंशा सिर्फ़ सतगुरु वक़्त के संसार में मौजूद रहने से है क्योंकि जब तक सतगुरु देहस्वरूप में विराजमान रहते हैं उनकी चैतन्यता सब ऊँचे घाटों पर कारकुन रहती है और वे अपने शिष्य को दूर फ़ासले पर रहते हुए भी रूहानी यानी परमार्थी मदद पहुँचा सकते हैं। यह जो सब के सब मत, ख़्वाह ब्रह्माण्ड से ख़्वाह निर्मल चैतन्य-देश से तअल्लुक़ रखने वाले; आजकल अधोगति को प्राप्त हो रहे हैं और सब के

अन्दर अन्तरी चाल का चलना बिलकुल बन्द हो गया है इसका कारण केवल सच्चे गुरुओं का अभाव ही है। वाज़ह हो कि अन्तर में चाल लगातार तभी जारी रह सकती है जब एक के बाद दूसरे गुरू लगातार या जल्द जल्द थोड़े वक़्फ़ों के बाद प्रकट होते रहें। एक वक़्त-गुरू के गुप्त होने और दूसरे के प्रकट होने के दरमियान जो समय गुज़रेगा उसके दौरान में वह चैतन्यता, जो शिष्य हासिल कर चुके हैं, पुष्ट और पोढ़ होती रहेगी ताकि दूसरे सन्त सतगुरु के प्रकट होने पर इस बुनियाद पर आयन्दा तरक़्क़ी का सिलसिला जारी हो जावे।

५६—सतसंग।

सतगुरु वक़्त की सदारत में जिस रीति से उपासना यानी सतसंग किया जाता है यहाँ पर उसकी किसी क़दर शरह कर देना बेजा न होगा। यह उपासना या सत-संग दरअसल शिक्षा देने का एक प्रबन्ध है जिसकी मारफ़त जीवों को अन्तरी अभ्यास और आत्म-विद्या के मुतअल्लिक़ अमली तालीम दी जाती है।

सन्त सतगुरु, जो अधिष्ठाता यानी कराने वाले सब कार्रवाई के होते हैं, ऊँची जगह पर विराजते हैं ताकि सब हाज़िरीन सतसंग उनके बचन आसानी से सुन सकें। मर्द व औरत दोनों सतसंग के वक़्त हाज़िर रहते हैं

लेकिन स्त्रियाँ मर्दों से बिलकुल अलग बैठती हैं और उनके लिए पर्दे का पूरा इन्तिज़ाम रहता है। बाहरी लोग बिला ख़ास इजाज़त के सतसंग में शरीक नहीं हो सकते मगर जो लोग आध्यात्मिक साधन सीखने की ग़रज़ से सन्तमत के उसूल समझना चाहें उनको आम तौर पर इजाज़त दे दी जाती है। ख़ास वजह बाहरी लोगों को मना करने की यह है कि अक्सर औक़ात सतसंग के दौरान में शब्द-अभ्यास किया जाता है और यह अभ्यास ग़ैर लोगों की मौजूदगी में नहीं किया जा सकता।

सब से अव्वल मङ्गलाचरण का पाठ होता है जिसको सब सतसंगी मिलकर गाते हैं। मङ्गलाचरण में वर्णन हुज़ूर राधास्वामी दयाल की उस अपार बख़्शिश का किया गया है जो उन्होंने मुक्ति का सच्चा मार्ग प्रकट करके जीवों पर फ़रमाई और नीज़ गुणानुवाद उनकी उस गहरी दया का है जो वे सदा अपने शरणागत बच्चों पर निर्मल चैतन्य-धाम की तरफ़ (जो परम आनन्द का अविनाशी स्थान है) अन्तरी चाल चलने में फ़रमाते हैं। सब से आख़ीर में इसी तौर पर एक बिनती का पाठ किया जाता है मगर मङ्गलाचरण से बिनती का मज़मून मुख़्तलिफ़ है। इसमें यह प्रार्थना की गई है कि मालिक दयाल अपने तमाम कमज़ोर और भूलनहार बच्चों की पूरी सहायता फ़रमावें क्योंकि

बग़ैर उनकी सहायता के सच्चे उद्धार की कार्रवाई करने में जीव क़तई लाचार है और नीज़ यह बिनय है कि जीवों के हृदय में सच्चा प्रेम कुल्ल-मालिक के चरण-कमल के लिए जागे क्योंकि बग़ैर हासिल होने इन दोनों बख़्शिशों के कुल्ल-मालिक के दर्शन की प्राप्ति और उसके परम पवित्र निज-धाम में बास मिलना हरगिज़ मुमकिन नहीं है।

बीच के वक़्त यानी मङ्गलाचरण व बिनती के दरमियान सन्तों की बाणी का (जो नज़्म व नस्र दोनों में है) नियम से पाठ होता है और जब बाणी में कोई कठिन यानी सहज से समझ में न आने वाला बचन आ जाता है तो सन्त सतगुरु उसका अर्थ बयान फ़रमाते हैं या ख़ास चर्चा यानी उपदेश उस बचन के मज़मून पर करते हैं। इसके अलावा अक्सर और भी उपदेश होते हैं जिनमें या तो सन्तमत के उसूलों की या अभ्यास के मुतअल्लिक़ बातों की युक्तिपूर्वक और वैज्ञानिक रीति से व्याख्या की जाती हैं। जितने वक़्त तक बाणी का पाठ जारी रहता है सब सतसंगी बराबर संग संग जहाँ तक बन पड़ता है अन्तरी साधन में—ख़ास कर ध्यान की कार्रवाई में—मसरूफ़ रहते हैं क्योंकि उस वक़्त सन्त सतगुरु की मौजूदगी से और बाणी के अनुभवी मज़मून की मदद से सतसंगियों को कमाल सहूलियत इस अभ्यास के लिए मिलती है। इसके साथ ही

साथ कार्रवाई मन की निर्मलता व चित्त की शुद्धता की भी जारी रहती है। तमाम बुराइयों की जड़ अज्ञान है जिसके बुद्धि पर छाये रहने से मनुष्य को बुरे कर्मों व ख़राब वासनाओं की बुराई दीख नहीं पड़ती है। साध, सन्त के संमुख होने से यह अज्ञानता किसी क़दर दूर हो जाती है और उनके परम पवित्र दर्शन ही से बाज़ औक़ात शिष्यों को अपनी कोर कसर दरसने लगती है और उसकी निस्बत दिल में सच्चा और गहरा पछतावा पैदा हो जाता है लेकिन यह अन्तरी सफ़ाई ज़्यादातर सन्त सतगुरु के अमृत-बचनों से हासिल होती है। अलावा इस फ़ायदे के उनके बचनों से हाज़िरीन को अपने अन्दर सच्ची निर्णय-शक्ति जगाने के लिए आला तरबियत मिलती है जिससे वे रफ़्ता रफ़्ता इस क़ाबिल हो जाते हैं कि सहज में अपने मन की चाल को पूरे तौर से निहारने लगें और निरख परख करके अपने मन की हर कार्रवाई के अन्तर के अन्तर सन्तों की शिक्षा के विरुद्ध जो कोई वासना छिपी हो उसको छाँट सकें। सतसंग की कैफ़ियत, सन्त सतगुरु के दर्शन और उनके अमृत-बचनों का सतसंगियों के परमार्थी अङ्ग पर भी भारी असर पड़ता है और ज्यों ज्यों कोई प्रेमीजन अभ्यास में तरक़्क़ी करता जाता है त्यों त्यों सतसंग में शरीक होने पर उसके अन्तर में इस दर्जे का प्रेम जागने लगता है कि उसको संसार

के सब भोग बिलास तुच्छ नजराईं पड़ने लगते हैं और सतसंग के वक़्त शुरू से अख़ीर तक वह एकदम मस्त व सरशार रहता है। कबीर साहब ने नीचे लिखी हुई कड़ी में इसी कैफ़ियत का ज़िक्र फ़रमाया है:—

"मूरख जन कोइ मरम न जाने सतसंग में अम्मृत बरसे।"

यानी मूर्ख लोग भेद से वाक़िफ़ नहीं हैं, सतसंग में अमृत की बर्षा हुआ करती है।

५७—प्रसाद।

बाज़ औक़ात सतसंग शुरू होने से पहले प्रेमी सतसंगी सन्त सतगुरु को हार पहनाते हैं और उनके स्पर्श किये हुए हार कुल जमाअत में तबर्रुक के तौर पर तक़सीम किये जाते हैं। इसी तरीक़े पर बाज़ औक़ात मिठाई वग़ैरह भी सन्त सतगुरु के स्पर्श करने पर तक़सीम की जाती हैं और ये चीजें सतसंग का प्रसाद (Sacrament) समझी जाती हैं मगर चूँकि तादाद हाज़िरीन सतसंग की दिन बदिन तरक़्क़ी पर है और इन कार्रवाइयों के सरंजाम देने के लिए बहुत समय दरकार होता है इस लिए इनका रिवाज कमी पर है। अगर तरक़्क़ी का सिलसिला इसी तौर पर जारी रहा और हाज़िरीन सतसंग की तादाद सैकड़ों व हज़ारों पर पहुँचने लगी तो इनको बिलकुल बन्द करना होगा।

५८—प्रसादी, चरणामृत, आरती व बन्दगी।

सन्त सतगुरु अपने निकटवर्ती शिष्यों पर कभी कभी प्रसादी की भी दया फ़रमाते हैं जिसके उसूल का बयान हम अभी आगे चलकर करेंगे। सतगुरु के बचे हुए भोजन, उनके इस्तेमाल किये हुए कपड़े और उनके चरणामृत की निस्बत ख़्याल किया जाता है कि ये सब चीज़ें भारी रूहानियत लिये रहती हैं इस लिए जिन शिष्यों को ये चीज़ें प्राप्त हो जाती हैं वे इनको रूहानी फ़ायदे के ख़्याल से इस्तेमाल में लाते हैं। बाज़ मौक़ों पर सतसंगियों को सन्त सतगुरु के चरणों पर मत्था टेकने की भी इजाज़त मिल जाती है ताकि जो चैतन्य धार सन्त सतगुरु के चरणों से जारी है उसको वे अपने अन्दर ले सकें लेकिन इस तरीक़े से बन्दगी करने की इजाज़त थोड़े ही आदमियों को दी जाती है। मालूम होवे कि प्रसादी की चीज़ों का इस्तेमाल करना या बन्दगी करना सतसंग की कार्रवाई का जुज़ यानी अङ्ग नहीं हैं। कभी कभी सतसंगियों को सन्त सतगुरु के साथ दृष्टि जोड़ने की इजाज़त दी जाती है और उस वक़्त सन्त सतगुरु भी अपनी दृष्टि उनकी आँखों व पेशानी की तरफ़ डालते हैं। ऐसे मौक़े पर साथ ही साथ इस क़िस्म के शब्दों का पाठ होता है जिनमें सुरत की निज धाम की तरफ़ अन्तरी चढ़ाई का बयान दर्ज है या

गहरे प्रेम व तड़प और सच्ची दीनता व शरण की उन दशाओं का जिक्र है जो अन्तरी चढ़ाई के दौरान में सतसंगी के ऊपर आती हैं। सतसंगी इस पाठ के वक़ सतगुरु की दृष्टि की मदद से ध्यान का साधन किया करते हैं। ऐसे मौक़ों पर सुरत का सिमटाव अन्तर में बड़े ज़ोर के साथ होता है जिससे अभ्यास करने वालों का मन निहायत सरशार हो जाता है। जब किसी सतसंगी के अन्दर सिमटाव बरदाश्त से ज्यादा हो जाता है तो उसकी आँखें आप से आप बन्द हो जाती हैं लेकिन अन्तर में वह बराबर बेदार व बाहोश रहता है और हिप्नॉटिज़्म के मामूल की तरह वह अपने आपे को बिसार नहीं देता है। इस साधन के दौरान में, जिस को सन्तमत की बोली में आरती कहते हैं, जो मदद सतसंगी को मिलती है वह क़रीबन् उसी तरह की होती है जैसी कि एक नौआमोज़ बच्चे को माँ या धाय चलना सिखलाते वक़्त दिया करती है। आरती की कार्रवाई से जो असर सतसंगी के ऊपर पड़ता है उसको हिप्नॉटिज़्म के अमल का सा असर ख़्याल करना बिलकुल ग़लत होगा क्योंकि आरती की मारफ़त जो मदद सतगुरु की तरफ़ से दी जाती है उसकी ग़रज़ यह होती है कि सतसंगी के होश हवास और स्वतन्त्रता क़ायम रहते हुए उसकी सुरत की सोई हुई शक्तियाँ जागें और यह

मतलब नहीं होता कि मेस्मरिज़्म के अमल के मुआफ़िक़ उसकी रूह की ज़ाती ताक़तों की मारफ़त उससे आमिल की इच्छाओं व वासनाओं में बरताव कराया जावे। मतलब यह है कि मेस्मरिज़्म वग़ैरह के अमल में तो यह होता है कि मामूल बिलकुल बेहोश और परतन्त्र हो कर आमिल की मरज़ी के मुआफ़िक़ काम करता है और ख़्याज़ात उठाता है लेकिन आरती के वक़्त सतसंगी बिलकुल बाहोश व बाइख़्तियार रहता है और जैसे बच्चा माता की उंगली का सहारा लेकर अपने जिस्म में चलने फिरने की ताक़त जगाता है वैसे ही सतसंगी भी सन्त सतगुरु की दृष्टि की मदद से अपनी सुरत की गुप्त शक्तियाँ चैतन्य करता है।

जैसा कि हमने इस दफ़ा के शुरू में वादा किया था अब प्रसादी के चारों तरीक़ों के उसूल का बयान करते हैं जिसमें स्पर्श से हार वग़ैरह के प्रसाद होने के उसूल की भी तशरीह हो जावेगी।

देखने में आता है कि छूने पर जानदारों के जिस्म के अन्दरूनी मसाले का असर छूने वाले के जिस्म में दाख़िल हो जाता है। मसलन् बहुत से कीड़े मकोड़े इस क़िस्म के हैं कि जिनके छूने से उनके अन्दर के ज़हर का असर छूने वाले में प्रवेश कर जाता है जिससे बाज़

औक़ात लोगों के जिस्म पर छाले पड़ जाते हैं। मालूम होवे कि यह ख़ासियत सिर्फ़ कीड़ों मकोड़ों ही के लिए मख़सूस नहीं है बल्कि किसी दर्जे तक सभी जानदारों में पाई जाती है इससे साबित होता है कि हर शरीर की ज़ाती रूहानियत शरीर के द्वारा अपने तुख़्म यानी बीज के मुतअल्लिक़ ख़ास असर दूसरे शरीर के अन्दर पहुँचा सकती है। चुनांचे प्रसादी की मारफ़त भी इसी तरीक़े से असर पहुँचता है लेकिन जैसे स्थूल घाट यानी शरीर का असर स्थूल घाट पर महसूस होता है वैसे ही प्रसादी का रूहानी असर चैतन्य यानी रूहानी घाट पर मालूम होता है। जिस भक्तजन के अन्दर रूहानी ताक़त किसी क़दर जग गई है वह प्रसादी की हुई चीज़ के इस्तेमाल में आते ही फ़ौरन् उसके रूहानी असर को महसूस करने लगता है, चाहे उसको यह मालूम भी न हो कि वह चीज़ प्रसादी की हुई है। अलावा इसके अगर यह बात दुरुस्त है कि हिप्नॉटिज़्म का अमल होने पर मामूल के लिए किसी शख़्स के साथ उसकी इस्तेमाल की हुई चीज़ की मदद से तअल्लुक़ क़ायम करना आसान हो जाता है तो इससे भी हमारे उसूल की तसदीक़ होती है। चुनांचे शिकारी कुत्ते भी कम व बेश इसी तरीक़े से मदद पाकर अपने शिकार का पता लगा लेते हैं यानी शिकार का जानवर रास्ते में कुछ छोड़ता चला जाता है (जिसे

गन्ध कहते हैं) और शिकारी कुत्ते उसकी मदद से शिकार का खोज लगा लेते हैं।

चूँकि बिजली शक्ति, जिसको सब तत्त्वों की जान कह सकते हैं, चैतन्य-शक्ति से बमुक़ाबिले और सब चीज़ों के बहुत ज्यादा मुताबिक़त रखती है इस लिए चैतन्य-शक्ति के मुतअल्लिक़ उसूलों की ताईद में इस शक्ति की मिसाल का पेश करना बेजा न होगा। चुनांचे देखने में आता है कि जिन चीज़ों में बिजली भरी होती है उनको स्पर्श करने पर स्पर्श करने वाली चीज़ के अन्दर बिजली आ जाती है और इस आने वाली बिजली की मिक़दार पहली चीज के अन्दर मौजूद बिजली की तेज़ी (Intensity) के हिसाब से हुआ करती है। इस उसूल के मुताबिक़ साध, सन्त भी, जिनके शरीर के अन्दर निहायत ऊँचे घाट की चैतन्यता बकसरत भरी होती है, स्पर्श में आने वाली चीज़ों के अन्दर अपनी रूहानियत भर सकते हैं। वाज़ह हो कि इस दलील पर ग़ौर करते वक़्त निगाह दृष्टान्त के सिर्फ़ इसी एक अङ्ग पर रखनी मुनासिब है कि स्पर्श के ज़रिये एक चीज के अन्दर की शक्ति दूसरी चीज़ के अन्दर आ जाती है। अगर बरखिलाफ़ इसके दूसरे अङ्गों को शामिल करने की कोशिश की जावेगी तो ख़्वाह मख़्वाह की पेचीदगियाँ और खिलाफ़ सूरतें दरमियान में आ जावेंगी।

५९—चैतन्य-नाम का उच्चारण या सुमिरन ।

अब रूहानी ताक़त यानी चैतन्यता जगाने की तीसरी युक्ति का बयान शुरू करते हैं । यह तीसरी युक्ति चैतन्य-नाम का सुमिरन है जिसका अर्थ सादे लफ़्ज़ों में पवित्र-नाम का अन्तर में उच्चारण है । आम लोगों का ख़्याल है कि मन ही मन में बिनती प्रार्थना पेश करना और अन्तर में पवित्र-नाम का सुमिरन करना एक ही बात है लेकिन, जैसा कि नीचे की तशरीह से मालूम होगा, यह ख़्याल ग़लत है । जिस क़िस्म के पवित्र-नाम का हम ज़िक्र कर रहे हैं उस क़िस्म के नामों का सुमिरन इस लिए नहीं किया जाता कि उनके शब्दार्थ की मारफ़त अपनी मनोबासना सिद्ध की जावे बल्कि यह ख़्याल किया जाता है कि उनमें से किसी नाम का ख़ास तरीक़े से फ़क़त उच्चारण ही करने पर दिली मुराद पूरी हो जाती है । इस क़िस्म के पवित्र-नामों को पारिभाषिक बोली में 'मन्त्र' कहते हैं । इनमें बाज़ ऐसे नाम होते हैं कि जिनका अन्तर में सुमिरन करने से, जप के पूरा होने पर, इन्सान के अन्दर इस तरह की ताक़त पैदा हो जाती है कि वह अपने से तअल्लुक़ में आने वाले सब लोगों के ख़्यालात और ख़्वाहिशात को बस में कर लेता है । इन नामों को 'वशीकरण-मन्त्र' कहते हैं । इनके अलावा बाज़ ऐसे नाम होते हैं कि जिन-

के अन्दर संहार यानी नाश की शक्ति मौजूद है और लोग कहते हैं कि उनकी सिद्धि हासिल हो जाने पर इन्सान निहायत आसानी के साथ किसी भी चीज़ को नाश या मग़लूब कर सकता है।

६०—पवित्र-नामों के अन्दर शक्ति की हक़ीक़त।

पवित्र-नामों के अन्दर जिस तरह की शक्ति रहती है अब उसका बयान करते हैं। इस पुस्तक के पहले भाग में हमने यह दिखलाने की कोशिश की थी कि मनुष्य-शरीर का अन्दरूनी इन्तिज़ाम कोई इत्तिफ़ाक़िया मुआमला नहीं है बल्कि यह रचना के इन्तिज़ाम की बुनियाद पर क़ायम है और इस सिलसिले में बयान किया था कि आलमे सग़ीर के मुख्य भाग और उपभाग आलमे कबीर के मुख्य भागों और उपभागों के मुताबिक़ हैं और मनुष्य-शरीर के चक्रों के अन्दर जो छिद्र हैं उनके द्वारा इनका बाहम मेल होता है यानी दूसरे लफ़्ज़ों में मनुष्य-शरीर के चक्र आलमे कबीर के स्थानों का एक छोटा नमूना हैं। इस बयान से नतीजा निकलता है कि बाहर रचना में जिन शक्तियों की धारें काम कर रही हैं वे मनुष्य-शरीर के अन्दर भी छोटे पैमाने पर मौजूद हैं। अलावा इसके हम पीछे यह भी मुफ़स्सल तौर पर ज़ाहिर कर चुके हैं कि इन सब धारों

से, जिनको शक्ति की कारकुन अंशें (Kinetic Force-emanations) कहना चाहिए, थरांहट पैदा होकर शब्दों की गुंजार हो रही है जो हर जगह और हर सिम्त में सुनी जा सकती है बशर्तेकि चैतन्य श्रवण-शक्ति को, जो अब गुप्त है, जगा लिया जावे। सब आवाज़ों के अन्दर एक स्वर रहता है जिसका दार व मदार थरांहट के कम्पों पर रहता है और यह क़ायदा है कि एक आवाज़ दूसरी आवाज़ से, जिसका स्वर उसके स्वर से मिलता है, फ़ौरन् मिल जाती है और स्वर एक न होने की हालत में उससे टकराया करती है। इस क़ायदे की रू से, जिसको स्वर-सम्मेलन का नियम (Law of Harmony) कहते हैं, मज़कूरा-बाला शब्द भी दूसरे स्वर मिलने वाले शब्दों के साथ मिल जाते हैं और अलहदा स्वर रखने वाले शब्दों से टकराया करते हैं। हर एक मण्डल या स्थान एक एक मरकज़ी (केन्द्रिक) शक्ति के आसरे क़ायम है जिसको उस स्थान का धनी कहते हैं। वह धनी उस स्थान की शक्ति या जान का भण्डार यानी केन्द्र होता है और उससे उत्पन्न हो कर शक्ति की धारें स्थान के अन्दर फैलती हैं, जिनके संग ख़ास तरह की गुंजार यानी आवाज़ें भी शामिल रहती हैं। हमारे शरीर के मुख़्तलिफ़ चक्रों के अन्दर भी बाहर के स्थानों के मुताबिक़ मुख़्तलिफ़ धारें मौजूद हैं मगर ये धारें चक्रों में उस तरह कारकुन नहीं हैं

जैसे कि धनियों की धारें अपने स्थानों में कारकुन हैं। जहाँ तक स्थूल शरीर की सँभाल का वास्ता है वहाँ तक तो ये धारें धनियों की धारों के मुआफ़िक़ चन्द क्रियाएँ करती हैं लेकिन उनके चैतन्य ख़वास, जैसे ज्ञान लेना, समझना बूझना और बन्दोबस्त करना वग़ैरह, आम तौर पर गुप्त या अचेत हालत में हैं। अब ख़्याल करो कि अगर किसी चक्र पर कोई ऐसा शब्द या नाम उच्चारण किया जावे, जो मनुष्य की बोली में उस चक्र से मुताल्लिक़ रखने वाले बाहरी स्थान के केन्द्र या धनी से प्रकट होने वाले शब्द की नक़ल हो, तो इस अमल से जो थर्राहट चक्र के अन्दर पैदा होगी वह कुछ अर्से बाद अभ्यास दुरुस्ती से बन पड़ने पर बाहरी स्थान के शब्द के अन्दर मौजूद थर्राहट के समान होने लगेगी और समानता भरपूर होने पर दोनों शब्दों का स्वर मिलकर उनमें एकता हो जावेगी और स्वर मिल जाने से जैसे किसी बाजे के बजने पर ट्यूनिंग फ़ोर्क (Tuning Fork) का आला, जिसका स्वर बाजे से मिला है, आप से आप बोला करता है यानी 'आस' दिया करता है वैसे ही एक थर्राहट के पैदा होने पर दूसरी फ़ौरन् आप से आप जारी हो जावेगी। जब यह सूरत हो गई तो धनी के चैतन्य ख़वास और अन्तरी शक्तियाँ अभ्यासी के अन्दर आप से आप जग जाती हैं और उस-

के लिए मुमकिन हो जाता है कि इच्छानुसार पवित्र-नाम का अपने अन्तर में उच्चारण करके धनी की उस ज़बरदस्त शक्ति को, जो उसके धाम के अन्दर उसकी मातहती में काम कर रही है, हरकत में ले आवे। इसी अमल को पारिभाषिक बोली में मन्त्र-सिद्धि या पवित्र-नाम के अन्दर की शक्ति का सिद्ध कर लेना कहते हैं। अन्तर में नाम का उच्चारण अर्से दराज़ तक कम व बेश बे-असर और महज़ ऊपरी रहता है क्योंकि हमारी सब वृत्तियाँ बहिर्मुखी होने के कारण नाम के उच्चारण से असल स्वर वाला तार छिड़ने नहीं पाता। ये बहिर्मुख वृत्तियाँ अभ्यास के वक़्त तरह तरह की गुनावनें और शक्लें पैदा करती रहती हैं जिनसे तवज्जह का बिखार हो कर अभ्यास में भारी विघ्न वाक़े होता है और नाम का उच्चारण यानी सुमिरन जैसा कि चाहिए फलदायक नहीं होने पाता और अभ्यासी के अन्दर साधन के वक़्त भारी संग्राम की कैफ़ियत पैदा हो जाती है। जब तक ये वृत्तियाँ कम व बेश पराजित नहीं हो जातीं उस वक़्त तक किसी चक्र के अन्दर धारों का जगाना यानी चैतन्य करना नामुमकिन रहता है। चूँकि हमारी बहिर्मुख या मायिक वृत्तियाँ जन्म से लेकर चौबीसों घण्टे बार बार मुहाविरा किये जाने से जग कर पुष्ट हो गई हैं इस लिए चन्द दिन, चन्द महीने या चन्द साल थोड़ा सा साधन करने से इनका

पराजित हो जाना मुमकिन नहीं है । अलावा इसके बहुधा साधन करने वाले लोगों को पवित्र-नामों के अन्तरी सुमिरन करने की ठीक ठीक युक्ति भी मालूम नहीं होती और अगर बेचारे किसी तरह ठीक विधि से साधन कर भी पाते हैं तो उनको सलाह व मदद देने वाला कोई नहीं मिलता। इसी वजह से आम लोगों में यह ख़्याल फैल गया है कि अब पवित्र-नामों के अन्दर पहले की सी शक्ति नहीं रही है, लेकिन यह ख़्याल दुरुस्त नहीं है। नामों के अन्दर पहले की सी शक्ति अब भी बदस्तूर मौजूद है, अलबत्ता पहले की तरह युक्ति के सिखलाने वाले और सलाह व सहायता देने वाले पुरुष आसानी से नहीं मिलते। बहरहाल हमारे इस बयान से यह नियम स्थापित होता है कि अगर मनुष्य-शरीर के अन्दर किसी चक्र पर किसी ऐसे नाम का (उसके शब्दार्थ का लिहाज़ न करते हुए) अन्तरी सुमिरन यानी उच्चारण किया जावे, जो किसी धाम के धनी से जारी शक्ति की धारों के संग पैदा होने वाली ध्वनि की इन्सानी बोली में नक़ल हो, तो स्वर-सम्मेलन के नियमानुसार उस धनी की शक्तियाँ अभ्यासी के अन्दर पैदा हो सकतीं हैं। ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती ने नीचे लिखे हुए शेर में इसी उसूल का जिक्र किया है:—

"मियाने इस्म व मुसम्मा चो फ़र्क़ नेस्त बबीं
तु दर तजल्लिए इस्मा जमाले नामे खुदा ।"

यानी नाम और नामी के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं होता है। मालिक के नाम का प्रकाश मालिक के जमाल को साफ़ तौर पर दिखलाता है।

रामायण के प्रसिद्ध रचयिता तुलसीदास जी ने भी नीचे के पद में इसी क़िस्म के ख़्याल का इज़हार किया है:—

"गिरा अर्थ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।"

गिरा यानी शब्द और उसका अर्थ, जल और उसकी तरंग के समान हैं। कहने मात्र के लिए भिन्न हैं लेकिन असल में भिन्न नहीं हैं।

जिन नामों की निस्बत ऊपर ज़िक्र हुआ वे सब ध्वन्यात्मक नाम हैं यानी मुख़्तलिफ़ स्थानों के शब्दों की इन्सानी बोली में नक़ल हैं इस लिए उनको मामूली शब्दों या नामों के साथ, जो दुनिया की चीज़ों या मन के भावों व ख़्यालों के ज़ाहिर करने के लिए इस्तेमाल किये जाते हैं, ख़ल्त मल्त नहीं करना चाहिए।

६१—मुख्य उद्देश्य सब युक्तियों का एक ही है।

दफ़ा २ के पढ़ने से मालूम होगा कि परमार्थ के उद्देश्य की प्राप्ति सुरत के निर्मल चैतन्य-देश में बास पाने ही पर हो सकती है और अभ्यास की अव्वल दो युक्तियों की निस्बत, जिनका पीछे बयान हुआ, दिखलाया जा चुका है कि ये युक्तियाँ ख़ास इसी उद्देश्य की प्राप्ति

के लिए तजवीज़ की गई हैं । अब मालूम होवे कि तीसरी युक्ति का, जिस पर अब ग़ौर किया जा रहा है, मंशा भी इसी उद्देश्य की प्राप्ति से है और जैसे पहली दो यानी ध्यान और भजन की युक्तियों के साधन का ख़ास लक्षण चैतन्य धार का जगना यानी सुरत का सिमटकर या एकत्र हो कर ऊँचे चढ़ना है वैसे ही तीसरी यानी सुमिरन की युक्ति की कमाई का लक्षण भी सुरत का चैतन्य होना है क्योंकि जिस पवित्र-नाम का सुमिरन यानी उच्चारण किया जाता है उसका तअल्लुक़ सिर्फ़ रूहानी यानी चैतन्य और आकर्षक क्रियाओं के साथ है और मन व माया की शक्तियों और वृत्तियों से उसका कोई वास्ता नहीं है ।

६२—पवित्र चैतन्य-नाम और साधारण मन्त्रों में भेद ।

निर्मल परमार्थ यानी ख़ालिस रूहानी मज़हब में ऐसे नामों या मन्त्रों की कोई वक़त नहीं है जिनके ज़रिये से सिर्फ़ दूसरों के नाश या बस करने की ताक़त आ जाती है बल्कि सिर्फ़ उस पवित्र-नाम का सेवन किया जाता है जिसके ज़रिये से सुरत यानी आत्मा को मन व माया की गुलामी से छुटकारा हासिल हो । इस लिए ख़्याल रखना चाहिए कि पहली क़िस्म के नामों का ज़िक्र करने से हमारी यह ग़रज़ हरगिज़ नहीं है कि लोग उन नामों

या मन्त्रों के जप की तरफ़ तवज्जह दें। इनका ज़िक्र हमने उसूल क़ायम करने के लिए सिर्फ़ मिसाल के तौर पर किया है। सन्त-मत के साधनों का इस क़िस्म के नामों या मन्त्रों से कोई वास्ता नहीं है।

६३—चैतन्य-शक्ति के ख़वास ।

हमारी राय होती है कि हुज़ूर राधास्वामी दयाल के प्रकट किये हुए सच्चे पवित्र-नाम की तशरीह करने से पेश्तर सच्चे कुल्ल-मालिक की सिफ़ात या मुख्य गुणों की निस्बत तहक़ीक़ात करें और नीज़ सुरत यानी चैतन्य-शक्ति के (जिससे रचना ज़हूर में आई है) निज ख़वास दरियाफ़्त करें।

यह एक मामूली तजरुबे की बात है कि कोई भी प्रकृति की शक्ति बग़ैर केन्द्र और धारों के काम नहीं कर सकती है यानी जब तक धारें जारी नहीं होतीं उस वक़्त तक शक्ति अव्यक्त यानी गुप्त अवस्था में रहती है और धारों के प्रकट होने ही पर, जो हमेशा शक्ति के केन्द्र में क्षोभ या हिलोर उठने के बाद जारी होती हैं, शक्ति अव्यक्त से व्यक्त यानी कारकुन हो कर अपनी क्रिया शुरू करती है। इससे जाहिर है कि बग़ैर भण्डार की मौजूदगी के शक्ति की धारें हरगिज़ प्रकट नहीं हो सकतीं। मालूम होवे कि प्रकृति की शक्तियों का यह नियम चैतन्य-शक्ति

भी पालन करती है, बल्कि यह कहना शायद ज़्यादा दुरुस्त होगा कि प्रकृति की शक्तियों ने यह ख़ास्सा यानी स्वभाव चैतन्य-शक्ति ही से, जो आदि-शक्ति है, हासिल किया है। अगर यह हमारा विचार दुरुस्त है तो मानना होगा कि रचना की उत्पत्ति भी इसी नियम के अनुसार हुई यानी अव्वल चैतन्य-शक्ति के अनन्त और अपार सिन्धु सच्चे कुल्ल-मालिक के अन्दर हिलोर या मौज उठी और बाद में उससे चैतन्य धारें प्रकट हुईं और जब तक ये दो सूरतें ज़हूर में नहीं आईं उस वक़्त तक रचना प्रकट नहीं हुई और कुल्ल-मालिक ने अपने तईं करतार रूप में प्रकट नहीं फ़रमाया। इस पुस्तक के रचना-भाग में हम मुफ़स्सल तौर पर बयान करेंगे कि चैतन्य-शक्ति की धारों ने किस तरीक़े से रचना को रूपवान किया है। यहाँ पर इस वक़्त सिर्फ़ इतना बयान कर देना काफ़ी होगा कि चैतन्य-शक्ति कम व बेश चुम्बक-शक्ति की मानिन्द क्रिया करती है और क्रियाक्षेत्र (Field of Action) क़ायम करती है। चुम्बक-शक्ति के क्षेत्र में जितने भी नुक़्ते होते हैं चुम्बक-शक्ति के असर की वजह से उन सब पर खैंच उसके (चुम्बक-शक्ति के) केन्द्र की तरफ़ रहती है। अगर हम दृष्टि चुम्बक-शक्ति के सिर्फ़ इस केन्द्र की जानिब खैंच वाले अङ्ग पर रक्खें तो उसके केन्द्र से निकल कर क्षेत्र के अन्दर फ़ासले तक

फैलने का ख्याल ग़लत हो जाता है लेकिन अगर हम चुम्बक के सिरों की अपने नज़दीक वाले आकाश के अयनों को चुम्बक बनाने वाली क्रिया को ख्याल में लावें [जो चुम्बक-शक्ति के क्षेत्र में फैलने ही से ज़हूर में आती है और जिसका काम चुम्बक के धनात्मक (Positive) और ऋणात्मक (Negative) सिरों के गिर्द आकाश तत्त्व के धनात्मक और ऋणात्मक परमाणुओं को अलग अलग तरतीब देना है] तो शक्ति का क्षेत्र में फैलना और आकर्षण या खैंच की क्रिया करना दोनों सही हो जाते हैं और इससे किसी आकर्षक शक्ति की धारों के प्रकट होने का ढंग भी ठीक तौर से समझ में आ जाता है। मालूम होवे कि रचना के शुरू में चैतन्य-भण्डार से चैतन्य-धार का इज़हार भी इसी ढंग से हुआ।

६४—भण्डार और धार के शब्दों में भेद ।

मालूम होवे कि वह हिलोर या मौज जो चैतन्य-भण्डार के अन्दर आदि में उठी और वे चैतन्य-धारें जो हिलोर के बाद उस भण्डार से प्रकट हुईं, दोनों दर-असल दो मुख़्तलिफ़ कारकुन यानी चलायमान शक्लों में आदि-शक्ति का इज़हार थीं और बमूजिब दफ़ा ६० के बयान के यह मानना होगा कि इन दोनों के संग शब्द भी प्रकट हुआ होगा और ज़ाहिर है कि हिलोर वाला

शब्द धारों वाले शब्द से मुख़्तलिफ़ होगा। इस लिए नतीजा निकलता है कि रचना के शुरू में आदि शक्ति का दो कारकुन शक्लों में इज़हार होने से दो मुख़्तलिफ़ शब्द प्रकट हुए, एक भण्डारसम्बन्धी शब्द और दूसरा धारसम्बन्धी शब्द। भण्डार और धार के शब्दों का यह भेद उन शब्दों के अन्दर भी मौजूद है जो मुख़्त-लिफ़ धनियों की अन्तर्गत यानी जान की धार से प्रकट हो रहे हैं, लेकिन इसकी जानिब किसी की तवज्जह मु-खातिब नहीं हुई और जो धुनें धनियों से उनकी बहिर्मुख क्रियाओं के सिलसिले में प्रकट हो रही हैं उन्हीं की तरफ़ ध्यान दिया गया और उन्हीं को मन्त्ररूप में ज़ाहिर किया गया। चुनांचे वेदों में जो सब से पवित्र नाम या मन्त्र 'ॐ' प्रकट किया गया है वह अपने अन्तर्गत चैतन्य-शक्ति से प्रकट होने वाले धार व भण्डार के शब्दों को अदा नहीं करता बल्कि सिर्फ़ उस धुन की इन्सानी बोली में नक़ल है जो ब्रह्म यानी ब्रह्माण्डी मन से ब्रह्माण्ड के अन्दर उसकी बहिर्मुख क्रियाओं के सिलसिले में प्रकट हो रही है। सच्चे कुल्ल-मालिक यानी चैतन्य-शक्ति के सोतपोत और भण्डार को छोड़कर दूसरे धनियों से बहिर्मुख क्रियाओं के सिलसिले में जो धुनें प्रकट होती हैं उनमें और उस शब्द में, जो धनियों की सुरत के अन्दर हिलोर उठने और बाद में उससे धार निकलने

पर प्रकट होता है, जो बाहमी फ़र्क़ है वह नीचे की मि-
साल से समझ में आ सकता है। यह ज़िक्र हो चुका है
कि हमारा सङ्कल्प विकल्प उठाने वाला आपा यानी
मन एक ऐसा औज़ार है जो अपनी क्रियाओं के लिए
शरीर के अन्दर मौजूद सुरत के केन्द्र से प्राप्त होने वाली
चैतन्यता के आश्रित है और जब सुरत की चैतन्यता मन
के घाट पर पहुँच जाती है तभी मन की क्रियाओं (मनन,
चिन्तवन, बोध और अहङ्कार) का इज़हार होता है
और सब कोई जानता है कि मन की इन क्रियाओं के
ख़वास सुरत के केन्द्र और उसकी धारों के ख़वास से
(जिनके द्वारा मन को ज्ञान यानी चैतन्यता मिलती है)
बिलकुल मुख़्तलिफ़ होते हैं। अब ख़्याल करना
चाहिए कि मानसिक क्रियाओं के सिलसिले में जो कम्प
और शब्द हमारे मन के घाट पर पैदा होते हैं वे
हमारी सुरत यानी चैतन्य-शक्ति के मन के घाट से
गुज़रने का नतीजा होते हैं लेकिन ये शब्द उन
चैतन्य शब्दों से, जो सुरत की धार से पैदा होते हैं, वैसे
ही मुख़्तलिफ़ रहते हैं जैसे नीली रोशनी, जो किसी नीले
शीशे से सफ़ेद रोशनी के गुज़रने पर पैदा होती है,
सफ़ेद रोशनी से मुख़्तलिफ़ होती है। अगर कोई ऐसा
शख़्स हो कि जिसके अन्दर शीशे के बीच से निगाह डाल-
ने और दोनों रोशनियों को एक दम देखने की शक्ति

मौजूद है तो उसको उन रोशनियों में भारी फ़र्क़ साफ़ तौर पर नज़राई पड़ेगा । चुनांचे मन के द्वारा प्रकट होने वाले और सुरत की धारों से ज़ाहिर होने वाले शब्दों के अन्दर भी इसी क़िस्म का भारी फ़र्क़ रहता है लेकिन यह फ़र्क़ उसीको नज़राई पड़ सकता है जिसकी दृष्टि सब पर्दों से गुज़र कर सुरत के मुक़ाम तक पहुँच सकती है । धनियों से बहिर्मुख क्रियाओं के सिलसिले में जो मुख़्तलिफ़ शब्द ज़ाहिर हो रहे हैं और जिनको उनका ध्वन्यात्मक नाम कहते हैं वे भी ऊपर के लेख के बमूजिब धनियों को जान यानी चैतन्यता देने वाली चैतन्य-धारों से प्रकट शब्दों से अलहदा होते हैं । चैतन्य शक्ति के आदि स्रोत और भण्डार यानी सच्चे कुल्ल-मालिक में अलबत्ता इस क़िस्म का फ़र्क़ मौजूद नहीं है क्योंकि उस आदि भण्डार की बहिर्मुख क्रिया सिर्फ़ चैतन्य यानी जान की धार का प्रकट करना है । चुनांचे सच्चे कुल्ल-मालिक यानी राधास्वामी दयाल के अवतार के सिवाय और अवतारों व पैग़म्बरों वग़ैरह ने सिर्फ़ अपने धनियों के ध्वन्यात्मक नाम या मन्त्रों ही का भेद प्रकट किया क्योंकि सच्चा और चैतन्य निज नाम या मन्त्र सिर्फ़ वही पुरुष प्रकट कर सकता है जिसकी पहुँच चैतन्य-शक्ति के स्रोतपोत और भण्डार तक हो । कबीर साहब ने, जिनकी पहुँच उस निज भण्डार तक थी

और जो उस धाम से बतौर पेशख़ेमे के तशरीफ़ लाये थे, अपनी एक साखी में इस निज नाम का हवाला दिया है, जिसकी निस्बत मुफ़स्सल ज़िक्र आगे चल कर करेंगे। यहाँ पर उस निज नाम को प्रकट करके उसकी शरह बयान करते हैं।

६५–राधास्वामी नाम।

आदि चैतन्य धार से, जो कुल रचना की आदि यानी इब्तिदा है, जो शब्द प्रकट हुआ उसको इन्सानी बोली में उच्चारण करने से 'राधा' शब्द बनता है और जिस हिलोर या मौज से वह आदि धार प्रकट हुई उसके शब्द को उच्चारण करने से 'स्वामी' शब्द बनता है इस लिए रचना के अन्दर जिस क़दर भी चैतन्यता है उस सब के सोतपोत व निज भण्डार का सच्चा पवित्र-नाम या परम मन्त्र 'राधास्वामी' शब्द ठहरता है। दूसरे लफ़्ज़ों में जब सच्चे कुल्ल-मालिक ने अपने आप को सत्-करतार रूप में ज़ाहिर फ़रमाया और रचना की शुरूआत की, तो भण्डार के अन्दर की हिलोर और भण्डार की धारों ने उस भारी चैतन्य-मण्डल में, जो सब के आदि में रचा गया, सच्चे मालिक का नाम 'राधास्वामी' प्रकट किया। यह सच्चा नाम रचना में हर जगह मौजूद है और अन्तर के अन्तर घाट पर, जहाँ चैतन्य धार कारकुन है,

इसको हर कोई सुन सकता है। जैसे हर एक किरण, जो सूर्य से निकलती है, अपने अन्दर भण्डार यानी सूर्य के खवास लिये रहती है इसी तरह हर खफ़ीफ़ से खफ़ीफ़ चैतन्य किरण यानी सुरत-अंश के अन्दर अपने भण्डार के निज खवास, यानी भण्डार में हिलोर का उठना और भण्डार से धार का जारी होना जिनके आधार पर रचना की शुरूआत हुई, मौजूद रहते हैं और दरमियानी तहों या गिलाफ़ों को चीरकर उस अन्तर्गत मुक़ाम तक पहुँचने पर, जहाँ चैतन्य किरण यानी सुरत-अंश बिराजमान है, राधास्वामी शब्द छोटे पैमाने पर सुना जा सकता है। जैसे और पवित्र नाम या मन्त्र मुख्तलिफ़ अवतारों ने प्रकट किये इसी तरह यह पवित्र 'राधास्वामी' नाम भी राधास्वामी दयाल के अवतार ने प्रकट फ़रमाया और इस नाम की निस्बत जो कुछ बयान ऊपर हुआ वह उन दयाल के उपदेश के बमूजिब ही किया गया। लेकिन यह शायद ज्यादा इतमीनानदेह होगा अगर कुछ सुबूत पेश करके दिखलाया जावे कि धार और भण्डार के शब्दों को मुख से उच्चारण करने में 'राधास्वामी' नाम ही बनता है।

६६—राधा और स्वामी शब्दों की तरतीब।

पेश्तर इसके कि हम राधास्वामी नाम की निस्बत किसी सुबूत को पेश करें, यह मुनासिब मालूम होता है

कि ऊपर के बयान से जो एक शङ्का पैदा हो सकती है उसको दूर कर दें। शङ्का यह है कि जब यह कहा जाता है कि अव्वल चैतन्य-शक्ति के भण्डार में मौज या हिलोर उठी और बाद में धार प्रकट हुई तो फिर मालिक का निज नाम 'स्वामीराधा' होना चाहिए न कि 'राधास्वामी' यानी जिस तरतीब से आदि में (रचना के मुतअल्लिक़) क्रियाएँ हुईं उसीके मुताबिक़ निज नाम होना चाहिए। इस शङ्का का समाधान यों है :—दफ़ा ६३ में बयान कर चुके हैं कि आदि धार का इजराय चुम्बक-शक्ति की आकर्षण-क्रिया यानी खैंच के ढंग पर हुआ—यानी जैसे अव्वल चुम्बक-शक्ति की धारें बाहर फैल जाती हैं और बाद में उसके क्षेत्र में कुल नुक़्तों की खैंच उसके केन्द्र यानी चुम्बक की तरफ़ शुरू होती है और जैसे चुम्बक-क्षेत्र के नुक़्तए निगाह से अव्वल क्रिया चुम्बक-शक्ति की धारों ही की होती है इसी तरह रचना के नुक़्तए निगाह से अव्वल क्रिया धार ही की हुई और जब पहले धार फैल गई तब भण्डार की आकर्षण-क्रिया शुरू हुई—या यों कहो कि भण्डार की क्रिया का इज़हार धारों की मारफ़त हुआ। इन वजूहात से रचना के नुक़्तए निगाह से धार को अव्वल और भण्डार को पीछे ही कहना मुनासिब है और इस लिए निज नाम 'राधास्वामी' ही ठीक बनता है, न कि 'स्वामीराधा'।

६७—राधा शब्द ।

हर कोई आसानी से देख सकता है कि सीटी, घण्टे वग़ैरह की आवाज़ की नक़ल उतारने के लिए हम को अपने आवाज़ निकालने के औज़ार यानी मुँह के अन्दर कम व बेश वैसी ही सूरत पैदा करनी होती है जैसी कि बाहर में आवाज़ पैदा करने वाली चीज़ के अन्दर होती है। मिसाल के तौर पर देखो कि फूँक से बजने वाले बाजों (बाँसरी, नफ़ीरी वग़ैरह) में यह होता है कि नली में फूँकने से उसके अन्दर की हवा में थर्राहट पैदा हो जाती है और जब यह थर्राहट नली के खुले हुए सिरे से बाहर निकलती है तो उन बाजों की आवाज़ पैदा हो जाती है । इस लिए अगर हम बाँसरी की आवाज़ की नक़ल उतारा चाहें तो अव्वल हम को अपना आवाज़ निकालने का औज़ार ऐसी सूरत में बदलना होगा कि जिससे हमारे मुँह के अन्दर एक नली सी बन जावे और उसका खुला सिरा हमारे होंटों के मुक़ाम पर क़ायम हो। बाद में मुँह के अन्दर की हवा थर्राहट के साथ बाहर निकालने पर जब यह होंटों से बनाये हुए सूराख़ से निकलती है तो बाँसरी की सी आवाज़ पैदा हो जाती है। चुनांचे मुँह के अन्दर इस तरह की सूरत पैदा करने पर जो 'सकार' वर्ण प्रकट होता है वह बाँसरी की आवाज़ की नक़ल उतारने में ज़रूर शामिल रहता है और इस

लिए बाँसरी की आवाज़ की नक़ल इस शब्द का इस्तेमाल किये बग़ैर नहीं बन सकती । इसी तौर से घण्टे की आवाज़ की नक़ल करने के लिए, जो किसी धातु की थाली या बरतन के पहलू पर कसकर चोट मारने से पैदा होती है, किसी मूर्धस्थानीय वर्ण का इस्तेमाल करना ज़रूरी होता है क्योंकि चोट मारने से उत्पन्न शब्द की नक़ल मुँह से तभी बनती है जब ज़बान मूर्धन्य वर्ण उच्चारण करने के लिए मूर्धा के साथ टकराती है । चुनांचे घण्टे की आवाज़ को अँगरेज़ी ज़बान में 'डिङ्-डाङ्' (Ding-Dong) और हिन्दुस्तानी बोली में 'टन्-टन्' कहते हैं । मालूम होवे कि इन दोनों शब्दों में पहले वर्ण मूर्धन्य हैं और आख़िरी वर्ण अनुनासिक यानी गुनगुने हैं । इससे साबित होता है कि बाहरी आवाज़ों की मुँह से नक़ल उतारने के लिए ख़ास ख़ास वर्णों का इस्तेमाल करना लाज़िमी है । अब इस उसूल को लगाकर दरियाफ़्त करते हैं कि कौन वर्ण किस ढंग से इस्तेमाल करने में भण्डार और धार की क्रियाओं के संग ज़ाहिर होने वाले शब्द मुँह से उच्चारण हो सकते हैं । चूँकि यह बयान हो चुका है कि सुरत यानी चैतन्य-शक्ति की क्रिया चुम्बक-शक्ति की क्रिया से किसी क़दर मिलती जुलती है इस लिए चुम्बक-शक्ति के क्षेत्र के अन्दर वर्तमान दशाओं की जाँच करने से हमारा मतलब निकल आवेगा । आकाश-तत्त्व अपनी

असली हालत में, जैसा कि रचना की उत्पत्ति के सिलसिले में प्रकट हुआ, एक ऐसा हमजिंस मसाला है कि जिसके अन्दर धनात्मक (Positive) और ऋणात्मक (Negative) अयनों में छूट जाने की योग्यता रहती है। जब आकाश-तत्त्व पर शक्ति का किसी दूसरे घाट से असर पड़ता है तो उसके ये दो क़िस्म के अयन अलग अलग हो जाते हैं लेकिन सृष्टिनियम अयनों को उनकी असली अवस्था में लौटाने की कोशिश करता है और इसी वजह से चुम्बक के धनात्मक और ऋणात्मक सिरों (Poles) में बाहमी कशिश होती है और दोनों सिरों के मध्य में एक शून्य स्थान (Neutral Zone) बन जाता है। चुम्बक-शक्ति के धनात्मक और ऋणात्मक सिरे दरअसल शक्ति की एक तरफ़ विशेषता और दूसरी तरफ़ न्यूनता क़ायम होने का इज़हार हैं। अब अगर हम चुम्बक-शक्ति के क्षेत्र में अलहदा अलहदा अयनों पर नज़र डालें तो मालूम होगा कि उनपर दो विरुद्ध ताक़तों का अमल हो रहा है जिसकी वजह से सब अयनों के अन्दर झीनी थर्राहट हो रही है। मालूम होवे कि आकर्षक शक्ति का अपने कार्य्यक्षेत्र में अव्वल यही असर होता है। इसके बाद थर्राहट के एक तरफ़ में तार बँध जाने से क्षेत्र के अन्दर फैला हुआ आकर्षण धाररूप अख़्तियार कर लेता है। चूँकि चैतन्य-शक्ति की धार का इज़हार भी

कम व बेश इसी तरीक़े पर हुआ इस लिए अब यह दरियाफ़्त करना चाहिए कि किन वर्णों को जोड़कर उच्चारण करने में हमारे आवाज़ निकालने के औज़ार यानी मुँह के अन्दर ऊपर लिखी हुई अवस्था पैदा होती हैं। चुनांचे ऐसा वर्ण 'रकार' है जिसके उच्चारण करने में हमारी ज़बान ज़ोर से थर्राती है। इस लिए चैतन्य-धार की किसी नुक़्ते पर क्रिया से (जिसको थर्राहट पैदा करने की क्रिया कहना चाहिए) जो आवाज़ प्रकट होती है उसको मुँह से अदा करने के लिए अव्वल हमें इस 'रकार' वर्ण का इस्तेमाल करना होगा, इसके बाद धारों के (केन्द्र की तरफ़) आकर्षण या बहाव की नक़ल उतारनी होगी जिसके लिए 'धकार' दन्त्य वर्ण इस्तेमाल करना होगा क्योंकि इस वर्ण के उच्चारण करने ही में साँस अन्दर को खींचना पड़ता है। इस लिए चैतन्य-शक्ति की धार से जो धुन प्रकट हुई उसकी इन्सानी बोली में क़रीबतरीन नक़ल 'राधा' शब्द ठहरता है।

६८—रूप की उत्पत्ति।

यह बयान कर चुके हैं कि सुरत का निज भण्डार सच्चा कुल्ल-मालिक है और वह अपार और सब का मुहीत (परिवेष्टक) है यानी जैसे आसमान के अन्दर कोई बादल का टुकड़ा होता है ऐसे तमाम रचना उसके अन्दर एक

तिल की तरह क़ायम है। जितने भी रूप रचना में प्रकट हैं वे सब कुल्ल-मालिक के उस अपार स्वरूप की छाप या नक़ल हैं जो उसने रचना की आदि में धारण किया क्योंकि रूप आख़िर उस तरतीब ही को कहते हैं कि जिसमें शक्ति किसी मसाले को आरास्ता करती है। और चूँकि आदि-शक्ति कुल्ल-मालिक से प्रकट हुई और रचना की दूसरी सब शक्तियाँ, जिनसे रचना में रूप आरास्ता हुए, आदि-शक्ति ही से प्रकट हुई हैं इस लिए रचना के सब रूप कुल्ल-मालिक के आदि रूप की नक़ल मानने होंगे।

६१-आदि रूप।

यह दुरुस्त है कि कुल्ल-मालिक को अपार यानी लामहदूद कहने पर उसके अन्दर रूप की कल्पना करने के लिए गुंजायश नहीं रहती लेकिन उस अपार सिन्धु के अन्दर आदि चैतन्य धार के प्रकट होने के सिलसिले में जो प्रथम आकार क़ायम हुआ अगर उसपर ख़्याल करके कुल्ल-मालिक में रूप की कल्पना की जावे तो ग़लत न होगा। यह बयान कर चुके हैं कि धार प्रकट होने से पहले भण्डार के अन्दर हिलोर वाक़ै हुई और भण्डार के जिस हिस्से में हिलोर वाक़ै हुई वह अव्वल मरकज़ यानी शक्ति का सब से पहला क्रियावान् केन्द्र बना और रचना में शक्तियों के जैसे और केन्द्र अण्डाकार यानी बैज़वी

शक्ल के हैं इसी तरह यह आदि केन्द्र भी बैज़वी शक्ल लिये हुए था । लौकिक शक्तियों की क्रियाओं की वजह से क़ायम जो अनेक अण्डाकार रूप सृष्टि में दिखाई देते हैं उनके अन्दर आदि रूप की छाप का साफ़ पता चलता है ।

७०—स्वामी शब्द ।

ऊपर की दफ़ा में प्रथम क्रियावान् केन्द्र के रूप की निस्बत तहक़ीक़ात यह मालूम करने की ग़रज़ से की गई कि आदि हिलोर या मौज के संग जो शब्द प्रकट हुआ उसकी इन्सानी बोली में नक़ल करने से क्या शब्द बनता है । इसके लिए ऊपर बयान किये हुए उसूल के बमूजिब अव्वल हम को अपने शब्द उच्चारण के औज़ार—यानी मुँह को किसी क़दर अण्डाकार शक्ल में बदलना होगा और बाद में ऐसा शब्द उच्चारण करना होगा कि जिससे मुँह अन्दर के रुख़ बन्द होने लगे । चुनांचे 'स्वामी' शब्द के उच्चारण करने में जो हालतें होती हैं उनकी जाँच करने से मालूम होता है कि इसके पहले हिस्से यानी 'स्वा' के उच्चारण करने पर मुँह के अन्दर अण्डाकार खला बन जाती है और इस के दूसरे भाग यानी 'मी' के उच्चारण करने में मुँह अन्दर की जानिब खैंच के साथ बन्द होता है ।

यह कहना बेजा न होगा कि राधास्वामी नाम को ध्वन्यात्मक नाम यानी चैतन्य-शक्ति के आदि इज़हार के संग प्रकट होने वाला शब्द साबित करने में यहाँ पर बहुत सी बातों की तशरीह रह गई है लेकिन जो कुछ भी ऊपर इस सिलसिले में बयान हुआ है उसकी रू से किसी क़दर हौसले के साथ कहा जा सकता है कि हरचन्द हमारा सुबूत मुकम्मल नहीं है मगर अयुक्त यानी बेठि-काने भी नहीं है और पवित्र-नामों के बयान में जो कुछ महज़ महापुरुषों के उपदेश यानी प्रकट किये हुए भेद की बुनियाद पर कहा जाता है उससे यह सुबूत एक क़दम बढ़कर ज़रूर है। अलावा इसके ख़्याल रखना चाहिए कि इस क़िस्म के सुबूत कोई भारी वक़त नहीं रखते क्योंकि सिर्फ़ युक्ति के आधार पर पेश किये हुए ज़बानी सुबूत आख़िर ज़बानी जमाखर्च ही होते हैं और हर जगह तजरुबे व परीक्षा ही से ठीक काम चलता है इस लिए हम निहायत ज़ोर के साथ कहेंगे कि इस परम पवित्र-नाम की निस्बत तहक़ीक़ात का सिलसिला आज़मायश के बग़ैर हरगिज़ ख़त्म न किया जावे। हर किसी को थोड़े ही तजरुबे के बाद मालूम हो सकता है कि इस नाम की बरकत से कैसा ज़बरदस्त सिमटाव सुरत की बैठक के मुक़ाम पर हो सकता है और कैसी भारी सहायता बहि-मुखी व मायिक वृत्तियों के रोकने में मिल सकती है

बशर्तेकि इसका सुमिरन ठीक तरीक़े पर सुरत यानी रूह की ज़बान से किया जावे ।

७१–कबीर साहब का हवाला ।

हमने पीछे ज़िक्र किया था कि कबीर साहब ने अपने एक शब्द में इस परम पवित्र नाम का हवाला दिया है । जिस साखी में इसका ज़िक्र आया है वह यह है:–

" कबीर धारा अगम की सतगुरु दई लखाय ।
उलट ताहि सुमिरन करो स्वामी संग मिलाय । "

यानी कबीर साहब फ़रमाते हैं कि सच्चे गुरू महाराज ने अगम यानी गम्य से परे पुरुष की धारा की परख करा दी है । 'धारा' को उलटकर और 'स्वामी' से जोड़कर जो शब्द बने उसका सुमिरन करो ।

७२–साधन की तीन युक्तियों के मुतअल्लिक़ ख़ास बातें ।

यहाँ पर साधन की उन तीनों युक्तियों का वर्णन ख़त्म हो जाता है जिनके ज़रिये से चैतन्यता का जगना और सुरत का ऊँचे मण्डलों में रसाई हासिल करना मुमकिन है । सुरत की बैठक के मुक़ाम पर परम पवित्र राधास्वामी नाम का अन्तर में यानी सुरत की ज़बान से सुमिरन और उस मुक़ाम पर वक़्त-गुरू के स्वरूप का ध्यान करने का अभ्यास आम तौर पर शुरू में प्रेमी भक्त से

कराया जाता है ताकि उसकी सुरत का सिमटाव होने लगे और गुप्त रूहानी शक्तियाँ जाग उठें । इस साधन की मदद से उसकी सुरत में शब्द-अभ्यास की कमाई करने के लिए काफ़ी योग्यता या बल आ जाता है लेकिन ऐसा नहीं होता कि शब्द-अभ्यास शुरू कर देने पर सुमिरन ध्यान की युक्तियों की कमाई बिलकुल छोड़ दी जावे । बरख़िलाफ़ इसके इन युक्तियों का अभ्यास रोज़मर्रा के साधन का अङ्ग यानी जुज़ बना रहता है । कुछ तरक़्क़ी होने पर सुमिरन और ध्यान की कार्रवाई छठे चक्र के बजाय उससे ऊपर के स्थानों पर की जाती है और छठे चक्र की गुप्त शक्तियों की तरह ऊँचे स्थानों की गुप्त शक्तियाँ भी उसकी मदद से जग सकती हैं लेकिन अगर वक़्त-गुरू रचना के सिर्फ़ दूसरे दर्जे तक रसाई रखने वाले हैं तो ब्रह्मदेश के परे के स्थानों पर उनके स्वरूप का ध्यान करना निष्फल होगा । अगर कोई अभ्यासी इस मामले में हठ यानी ज़िद से काम लेगा तो वह ध्यान अन्तरी तरक़्क़ी में विघ्न यानी रुकावट की सूरत पैदा करेगा । इन स्थानों पर सन्त सतगुरु यानी निर्मल चैतन्य-देश में पहुँचे हुए वक़्त-गुरू के ही स्वरूप का ध्यान करना मुनासिब है । मगर ख़्याल रहे कि सतगुरु-स्वरूप का ध्यान करने से निर्मल चैतन्य-देश से नीचे के स्थानों पर भी पूरा फ़ायदा हासिल होता है यानी ऐसा नहीं है कि यह

ध्यान सिर्फ़ निर्मल चैतन्य-देश के स्थानों ही पर मुफ़ीद हो। यही वजह है कि सन्तमत में शुरू ही से सन्त-सतगुरु-स्वरूप का ध्यान करने के लिए हुक्म दिया गया है। चूँकि वह फ़र्क़, जो यहाँ पर स्वरूपों के ध्यान के बारे में बयान हुआ, मुनासिब रद्द व बदल के साथ ब्रह्म के पवित्र नाम 'ॐ' और कुल्ल-मालिक के निज नाम 'राधास्वामी' के सुमिरन में भी मौजूद है इस लिए सन्तमत में सुमिरन के लिए भी शुरू ही से कुल्ल-मालिक का निज नाम इस्तेमाल करने की हिदायत है।

७३—दरमियानी अर्श में किस स्वरूप का ध्यान किया जाता है।

पीछे यह बयान हुआ है कि राधास्वामीमत में सिर्फ़ जिन्दा यानी वक़्त-गुरू के स्वरूप का ही ध्यान करने के लिए हुक्म है। इससे क़ुदरती तौर पर ख़्याल हो सकता है कि वक़्त-गुरू के गुप्त होने पर ध्यान का अभ्यास बन्द कर दिया जाता होगा, लेकिन यह ख़्याल दुरुस्त नहीं है। सतगुरु-वक़्त के गुप्त होने और उनके जानशीन के प्रकट होने के वक़्फ़े में पिछले स्वरूप का ध्यान ब-दस्तूर जारी रहता है और इससे तवज्जह के अन्तर में लगने में सहायता मिलती है। लेकिन ऐसे ध्यान से तवज्जह के लगने में और वक़्त-गुरू के स्वरूप के ध्यान से

सुरत के सिमटाव में बड़ा फ़र्क़ रहता है जैसे किसी फ़ौतशुदा यानी मृत्यु को प्राप्त मित्र या रिश्तेदार की तसवीर देखने से जो ख़्यालात हमारे अन्दर पैदा होते हैं उनमें और उन भावों में, जो ज़िन्दगी की हालत में उन लोगों की जानिब तवज्जह करने से पैदा होते थे, फ़र्क़ रहता है। पहली हालत में यानी तसवीर देखने पर हमारे मन में वियोग का दुख व्यापता है और दूसरी हालत में उमङ्ग, प्रेम और हर्ष पैदा होते हैं।

७४–साधन की युक्तियाँ हर शख़्स को नहीं बतलाई जातीं।

अभ्यास की तीन युक्तियों की निस्बत जो कुछ पीछे ज़िक्र हुआ है वह सिर्फ़ साधन के सिद्धान्तों या उसूलों और उनके माहात्म्य या फल का बयान है। साधन की असल युक्तियाँ राधास्वामी दयाल के उपदेश का सीना बसीना चलने वाला राज़ है इस लिए वे दीक्षा या मन्त्र देते वक़्त समझाई जाती हैं। दीक्षा के वक़्त सिर्फ़ युक्तियों की विधि के मुतअल्लिक़ हिदायतें दी जाती हैं और किसी तरह की बाहरी रस्म रसूम की कार्रवाई नहीं कराई जाती। दीक्षा लेने वाले को अलबत्ता साफ़ तौर पर आगाह कर दिया जाता है कि बतौर एक सज्जन पुरुष यानी शरीफ़ आदमी के उसको बचन देना होगा कि वह साधन की युक्तियाँ किसी दूसरे शख़्स

को हरगिज़ न बतलावेगा, लेकिन उससे किसी क़िस्म की क़सम नहीं उठवाई जाती क्योंकि जो शख़्स अपने बचन का पालन नहीं कर सकता वह शराफ़त से ख़ाली है और उसकी क़सम का भी क्या एतबार हो सकता है।

७५–संसारी हालतों, मन की रुचियों और बासनाओं का साधन पर असर।

साधन की युक्तियों की कमाई पर नीचे लिखी हुई बातों का भारी असर पड़ता है:–

(१) अभ्यासी की निज की ज़िन्दगी और जगत के सङ्ग व्यवहार के मुतअल्लिक़ दुनियवी हालतों का।

(२) उसकी आदतों और खान पान का।

(३) उसके औरों के साथ बर्ताव का।

(४) उसकी मान बड़ाई के लिए चाह की तेज़ी का।

(५) उसके अपने माल असबाब व रिश्तेदारों के साथ बन्धन का।

(६) उसके दूसरे संसारी बन्धनों का।

इस पुस्तक के आख़िरी भाग में, जिसमें जीवों के कर्मों का ज़िक्र होगा, बयान किया जावेगा कि शौक़ीन अभ्यासी को इन सब मामलात में किन किन क़ायदों की पाबन्दी करनी चाहिए। इस वक़्त हम

रचना की तरतीब और उसके इन्तिज़ाम व उद्देश्य का बयान शुरू करते हैं क्योंकि रचना के बासियों के कर्मों पर सृष्टिनियमों का भारी असर पड़ता है और कर्मों का हिसाब उस वक़्त तक पूरे तौर पर समझ में नहीं आ सकता जब तक कि सृष्टिनियमों से किसी क़दर वाक़िफ़ियत न हो जावे।

भाग तीसरा

बयान रचना के रूपवान होने का यानी रचना के ज़ाहिर होने की असली तरतीब का और उसके इन्तिज़ाम व उद्देश्य का।

७६–रचना से पहले क्या दशा वर्तमान थी।

रचना के रूपवान होने की तरतीब (सिलसिले) का बयान करने के लिए चूँकि यह लाज़िमी है कि अव्वल रचना से पहले की दशा बख़ूबी समझ ली जावे इस लिए यहाँ पर उस दशा का ख़ाका पेश करते हैं। चूँकि विज्ञान की दृष्टि में सिर्फ़ ऐसे ही वाद व अनुमान माननीय होते हैं जो हमारे इन्द्रिय-ज्ञान की बुनियाद पर क़ायम हों, इस लिए आदि दशा का वर्णन करने के लिए हम को उचित सामग्री इस प्रत्यक्ष सृष्टि ही से लेनी चाहिए। चुनांचे विचार करो कि अगर रचना की मौजूदा हर एक चीज़ की तोड़ फोड़ शुरू की जावे तो क्या सूरत नमूदार होगी। इस अमल से सब ठोस मसाला दर्जे बदर्जे सूक्ष्म (तरल, वायव्य वग़ैरह) अवस्थाओं में प्रवेश करता

जावेगा (देखो सफ़ा १०६) और होते होते शक्तिमय अवस्था हो जावेगी। अलबत्ता उसके अन्दर क़ाबिलियत हाल के मुख़्तलिफ़ दर्जों की तफ़रीक़ क़बूल करने यानी भिन्नता को प्राप्त होने की मौजूद होगी क्योंकि उसके बग़ैर मौजूदा रूप में रचना का इज़हार मुमकिन न था। बेहतर अलफ़ाज़ मौजूद न होने की वजह से इस अवस्था को शक्ति की निचली तह* (Lower Stratum) कह सकते हैं। आदि दशा की निस्बत जो पक्ष या सिद्धान्त यहाँ पर स्थापित किया गया उसकी निस्बत यह बयान में लाने की चन्दाँ ज़रूरत नहीं है कि वह एक प्रसिद्ध सचाई की बुनियाद पर क़ायम है यानी इस बात पर कि मौजूदा रूपवान रचना ऊपर बयान किये हुए तरीक़े के बमूजिब उलट जाने की योग्यता (क़ाबिलियत) रखती है। अब एक और बात देखिये—स्थूल प्रकृति यानी माद्दे के अन्दर शक्ति के मुक़ाबिले में यह ख़ुसूसियत है कि माद्दा शक्ति पर क़ैद यानी रोक लगाता है। चुनांचे माद्दे के तमाम ज़र्रों ने, चाहे वे परमाणु क़रार दिये जावें या अयन या उनसे भी कोई ज़्यादा सूक्ष्म चीज, जिस क़दर शक्ति अपने अन्दर जज़्ब कर रक्खी है वह हमेशा जकड़बन्द

*यह नाम ग़ालियन् शक्ति के अन्दर मूलप्रकृति-अवस्था की मिलौनी की वजह से या सफ़ा २७ के बयान के बमूजिब शक्ति का नीचा घाट होने की वजह से तजवीज़ किया गया है।

रहती है। अब अगर माद्दे के इस गुण को ख़्याल में रख-कर शक्ति की अवस्था पर ग़ौर करें तो नतीजा निकलता है कि रचना से पहले, जब शक्ति और उसके अन्दर क़ायम माद्दे वाले गुण के सिवाय कुछ न था और शक्ति गुप्त अवस्था में थी—क्योंकि शक्ति के चलायमान (कारकुन) होने ही से रचना की शुरूआत हुई—, हालत यह थी कि शक्ति के क्षेत्र में लातादाद नुक़्तों पर शक्ति की असंख्य धारें काम कर रही थीं लेकिन शक्ति की धारों का रुख़ अन्तर्मुख था जिसकी वजह से शक्ति की शून्यता सी हो रही थी और नीज़ शक्ति पर रोक लगाने वाला नुक़्तों (माद्दे) का गुण, जिसकी निस्बत ऊपर ज़िक्र हुआ, शक्ति से न्यारा तमीज़ होता था। दूसरे लफ़्ज़ों में हालत यह थी कि नुक़्तों की मारफ़त अन्तर्मुखी होकर शक्ति नुक़्तों के अन्दर गुप्त थी।

७७—आदि-शक्ति का न्यूनाधिक (ध्रुवीय) भाव।

शक्ति की 'गुप्त' अवस्था की निस्बत जो ज़िक्र ऊपर हुआ उसके मतलब को ज़रा और वाज़ह कर देना ज़रूरी मालूम होता है। जब शक्ति किसी ऐसे घाट से, जो उसका असल निवास-स्थान नहीं है, अपने असली स्थान में खिँची हो, लेकिन उसमें सामर्थ्य यानी क़ाबिलियत इस दूसरे घाट पर प्रकट होने की मौजूद रहे, तो शक्ति पहले

घाट पर गुप्त कही जाती है। शक्ति का इस प्रकार खिँचाव होने ही के कारण वह शून्य क्षेत्र, जिसका ऊपर की दफ़ा में ज़िक्र किया गया, ज़ाहिर हुआ और वही आदि-शक्ति के ध्रुवीय यानी न्यूनाधिक भाव का न्यून अङ्ग था। ज़ाहिर है कि अगर इस प्रकार का अनादि न्यूनाधिक भाव मौजूद न होता तो इस वक़्त प्रकृति की सब शक्तियों के अन्दर जो न्यूनाधिक भाव का खेल देखने में आता है वह मुमकिन न था।

७८—कुल्ल-मालिक का अनादि न्यूनाधिक भाव।

पीछे दफ़ा ११ में बयान कर चुके हैं कि चैतन्य-शक्ति ही आदि-शक्ति है और प्रकृति की जितनी भी शक्तियाँ हैं उन सब का ज़हूर इस आदि-शक्ति का मुख़्तलिफ़ दर्जे के पर्दों के साथ संयोग होने पर हुआ है और यह भी ज़ाहिर कर चुके हैं कि इस आदि-शक्ति का, जो सत्, चित् और आनन्द रूप है, ख़ुद कुल्ल-मालिक ही सोत-पोत है इस लिए आदि-शक्ति के अन्दर न्यूनाधिक भाव मानने से नतीजा निकलता है कि ख़ुद कुल्ल-मालिक के अन्दर यह भाव मौजूद था।

७६—दो ध्रुवों या सिरों का बयान।

सन्तमत की पारिभाषिक बोली में वह मुक़ाम, जिस-से चैतन्य-शक्ति किसी क़दर खिँच गई थी, कुल्ल-मालिक

का चरण अङ्ग कहलाता है और वह मुक़ाम, जिसमें शक्ति भरपूर मौजूद थी, उसका मस्तक अङ्ग कहलाता है। वैज्ञानिक परिभाषा में इनको चैतन्य-शक्ति के धनात्मक और ऋणात्मक ध्रुव* यानी मुसबत व मनफ़ी कुतुब या सिरे कहते हैं।

मालूम होवे कि चरण अङ्ग में चैतन्यता का पूर्ण अभाव नहीं था बल्कि बहुत कुछ बची हुई चैतन्य-शक्ति वहाँ मौजूद थी अलबत्ता उसकी तेज़ी (Intensity) में कमी थी। इस अनादि अवस्था की तासीर यहाँ पर स्थूल प्रकृति के अन्दर भी दिखलाई देती है; चुनांचे देखो स्थूल से स्थूल माद्दे के अन्दर भी कुछ न कुछ शक्ति ज़रूर मौजूद है।

यह दुरुस्त है कि ऊपर के लेख के बमूजिब न्यूनाधिक भाव मानने से 'बेअन्त' के अन्दर कुदरती तौरपर 'अन्तवान्' होने का दोष आ जाता है क्योंकि न्यूनाधिक भाव के सिलसिले में हम लोगों को हमेशा वास्ता दोनों अन्तवान् अङ्गों (ध्रुवों) ही से पड़ता रहा है लेकिन मालूम होवे कि बेअन्त की अवस्था का अनुमान करते वक़्त इस भाव के मुतअल्लिक़ अपने ख़्यालात को सर्व अङ्ग में घटाना दुरुस्त न होगा बल्कि मुनासिब यह होगा कि तवज्जह

* Positive and Negative Poles.

सिर्फ़ दोनों अङ्गों की चैतन्यता की तेज़ी (Intensity) के फ़र्क़ पर दी जावे। अगर हम न्यून अङ्ग को आकाश के अन्दर चलते हुए बादल के एक टुकड़े से तशबीह दें और विशेष अङ्ग को खुद आकाश से, तो इस दृष्टान्त से जिस न्यूनाधिक भाव का हम ज़िक्र कर रहे हैं उसका लखाव दर्शनेन्द्रिय-ज्ञान के द्वारा बहुत कुछ कामयाबी के साथ हो सकता है और ख़्यालात के सङ्ग-दोष की वजह से अन्तवान् होने का जो भ्रम पैदा होता था वह एकदम दूर हो जाता है क्योंकि यह ज़ाहिर है कि बादल के टुकड़े से आकाश की अनन्तता व अपारता में कोई फ़र्क़ नहीं आता।

८०—चैतन्य-शक्ति के विशेष (मस्तक) अङ्ग के तेज का बयान।

चैतन्य-शक्ति का विशेष (मस्तक) अङ्ग यानी कुल्ल-मालिक, परम सत्, परम चैतन्य और परम आनन्द रूप होने के अलावा, परम तेजोमय यानी परम प्रकाशस्वरूप भी है। प्रकृति की जितनी भी शक्तियाँ हैं सब की सब बिजली-शक्ति की सूक्ष्मता को प्राप्त होने पर और उनके ग़िलाफ़ों यानी पर्दों की रुकावट का ज़ोर जाते रहने से अत्यन्त प्रकाशवान् स्वरूप में प्रकट हो सकती हैं। इससे अनुमान किया जा सकता है कि चैतन्य-शक्ति, जो बिजली-शक्ति से कहीं ज़्यादा सूक्ष्म है और खुद उसकी

ज्ञान है, कैसी प्रकाशवान् होनी चाहिए। सच तो यह है कि हमारी साधारण ज्ञान लेने और विचार करने की शक्तियाँ ऐसी तुच्छ और नाकारा हैं कि उनकी मारफ़त उस परम आनन्दमय कुल्ल-मालिक के नूर व जलाल की अज़मत का क़यास में लाना क़तई नामुमकिन है। अगर किसी प्रकार हमारी दर्शन-शक्ति ऐसी ताक़तवर बन जावे कि हम कोटान कोटि सूर्य्यों के प्रकाश को एक बिन्दु पर एक ही समय में एकत्र करने से जो प्रचण्ड तेज प्रकट हो सकता है उसका ज्ञान व आनन्द ले सकें तो ऐसे प्रकाश व आनन्द से भी उस परम प्रकाशस्वरूप कुल्ल मालिक के बेपायाँ नूर व जलाल की शान का उसी ढंग का पता चलेगा जैसा कि पानी के एक बदहैसियत क़तरे के देखने से समुद्र की शान और लहरों का पता चल सकता है।

८१—चैतन्य-शक्ति के न्यून (चरण) अङ्ग के प्रकाश का बयान।

हमारे ऊपर के बयान से परम चैतन्य-शक्ति के विशेष अङ्ग के अकह व अपार तेज का मोटा सा अनुमान हो सकता है। अब आगे हम उसके न्यून अङ्ग (कुल्ल-मालिक के चरण अङ्ग) का इसी ढङ्ग का अनुमान पेश करते हैं। मौजूदा रचना के उलटने के फ़र्ज़ी अमल से, जो

दफ़ा ७६ में बयान हुआ, साफ़ ज़ाहिर है कि कुल रचना चैतन्य-शक्ति के न्यून अङ्ग ही से प्रकट हुई है और रचना की जानिब सरसरी नज़र डालने से मालूम होता है कि हमारे इस लोक यानी नज़राई देने वाली सृष्टि ही के अन्दर असंख्य प्रकाशवान् गोले, जिनको सूर्य, चन्द्र, तारा वग़ैरह नामों से पुकारा जाता है, जगमगा रहे हैं और, जैसा कि दफ़ा ८६ में दिखलाया जावेगा, यह लोक रचना के तीसरे दर्जे यानी पिण्ड-देश का एक हिस्सा है। तीसरे दर्जे के परे रचना का दूसरा दर्जा यानी ब्रह्माण्ड देश वाक़ै है जिसका तेज और शक्ति पिण्ड के मुक़ाबले में कहीं ज़्यादा है। इस लिए ज़ाहिर है कि रचना के इन दो दर्जों ही के अन्दर ऐसा ज़बरदस्त तेज व प्रकाश मौजूद है कि जिसका अनुमान मनुष्य की साधारण दर्शन और विचार की शक्तियों की ताक़त से बाहर है। अब अगर पिण्ड और ब्रह्माण्ड के तेज और प्रकाश में उन निर्मल चैतन्य-स्थानों का तेज और प्रकाश शामिल कर लिया जावे, जो चैतन्य-शक्ति के अपार व अनादि भण्डार के नीचे वाक़ै हैं, तो हम को न्यून अङ्ग के कुल प्रकाश का जोड़ मालूम हो जावेगा। वैसे तो न्यून अङ्ग अपने हिसाब से इतना रोशन था कि मनुष्य की दृष्टि के लिए उसका झेलना क़तई नामुमकिन है लेकिन विशेष अङ्ग को अपने प्रचण्ड तेज के मुक़ाबले में वह पीला सा प्रतीत होता था,

कम व बेश उसी तौर पर जैसे कि सूर्य के ज़बरदस्त तेज के सामने पूर्णमासी का चन्द्रमा बेरौनक़ मालूम होता है ।

८२—मनुष्य-ज्ञान भ्रमात्मक ज्ञान नहीं है ।

इसमें शक नहीं कि चैतन्य-शक्ति के अनादि न्यून और अधिक अङ्गों का जो वर्णन ऊपर किया गया वह मनुष्य-बुद्धि के अति नीच घाट का वर्णन है और इसपर अगर कोई यह एतराज़ कर दे कि इस तरह के बयान से असली दशा का वर्णन मुमकिन नहीं है तो हमारा यह सब बयान मशकूक (सन्दिग्ध) हो जाता है । इस लिए हमारे वास्ते ज़रूरी है कि मज़मून के सिलसिले को यहाँ रोककर हम इस एतराज़ से जो भ्रम पैदा होता है अव्वल उसको दूर कर दें । यह एतराज़ जैल के दावा की बुनियाद पर क़ायम होता है :—

हमारे अन्दर इस प्रत्यक्ष सृष्टि यानी जगत का सब ज्ञान जगत के मन पर पड़ने वाले प्रतिबिम्ब ही से पैदा होता है । अगर मन पर जगत का प्रतिबिम्ब न पड़े तो हम को उसका कोई ज्ञान नहीं हो सकता । इससे साबित होता है कि प्रतिबिम्ब और जगत में कार्य्यकारण-भाव सम्बन्ध क़ायम है । लेकिन यह ज़ाहिर है कि कार्य्य का ज्ञान होने से कारण का ज्ञान होना लाज़िमी नहीं है । चुनांचे अगर वे तमाम जीव, जिनपर जगत का प्रतिबिम्ब पड़ता है, ग़ायब हो जावें

तो कारण तो बना ही रहेगा लेकिन कार्य्य का अभाव हो जावेगा और जो अवस्था रहेगी वह कार्य्य की अवस्था न होगी। इससे साबित हुआ कि सृष्टि का जो कुछ ज्ञान हम को इस वक़्त हासिल है वह महज़ ऐसा ज्ञान है कि जो जीव को भासता है, न कि असल या स्वतन्त्र ज्ञान (इल्म मुतलक़)।

यह एतराज़ वाक़ई लाजवाब है बशर्ते कि यह मान लिया जावे कि सिर्फ़ जीवात्मा यानी सुरत ही को ज्ञान लेने की योग्यता हासिल है और रचना में दूसरे किसी के अन्दर यह योग्यता मौजूद नहीं है, मगर जैसा कि पीछे बयान किया गया (देखो दफ़ात १६ लग़ायत २२) तमाम सुरतें चैतन्य-शक्ति के अनन्त भण्डार अर्थात् कुल्ल-मालिक से निकली हुई मुख़्तलिफ़ दर्जे की किरनियाँ हैं और उनके निज ख़वास—चैतन्यता, आनन्द और सत्ता—कुल्ल-मालिक के जौहर ही से बरामद हुए हैं और जो शरीर सुरतों ने अपने लिए रचे हैं वे रचना के नमूने पर तय्यार किये गये हैं, दूसरे लफ़्ज़ों में सुरत का शरीर (आलमे सग़ीर) आलमे कबीर की नक़ल है। ऐसी सूरत में सुरत के ज्ञान लेने के ख़वास भी कुल्ल-मालिक की चैतन्यता यानी ज्ञानशक्ति की अदना नक़ल ठहरते हैं और अगर यह दुरुस्त है तो मानना होगा कि मनुष्य को रचना बहुत कुछ वैसी ही दरसती है जैसी कि कुल्ल-

मालिक को और मनुष्य को दरसने वाला स्वरूप ही रचना का असली स्वरूप है। इस लिए जो मनुष्य-ज्ञान सच्ची बातों की बुनियाद पर क़ायम है और अनुमान की सत्य रीति के अनुसार हासिल किया गया है उसको ख़्याल में भी भ्रमात्मक ज्ञान क़रार नहीं देना चाहिए (बर्ताव में तो कोई पहले ही क़रार नहीं देता)।

८३—कुल्ल-मालिक की आदिदशा का बयान।

रचना से पहले एक कुल्ल-मालिक ही था लेकिन वह न्यूनाधिक यानी ध्रुवीय भाव में था। उस दशा में वह अपने आप में रत यानी सरशार था और मानों सारी की सारी अपार परम चैतन्यता का अभिमानी वह एक ही पुरुष था। वह परमपुरुष रूप, रङ्ग, रेखा से रहित था और परम प्रेमानन्द, परम प्रकाश, परम ज्ञान और परम सत्ता इन चारों के मेल से उसका जौहर बना था यानी जैसे कई एक रङ्गों के बाहम मिलने से सफ़ेद रोशनी तय्यार होती है उसी तरह परम प्रेमानन्द, परम प्रकाश, परम ज्ञान और परम सत्ता इन चारों के बाहम मिलने से कुल्ल-मालिक का जौहर बना था। न्यून अङ्ग की दशा, जो चैतन्यता की कमी की वजह से समस्त चैतन्यता के समूह यानी कुल्ल-मालिक से किसी क़दर मुख़्तलिफ़ थी, कुल्ल-मालिक को पूरी तरह ज्ञात थी लेकिन न्यून अङ्ग खुद इस ज्ञान

में शरीक न था बल्कि वह सक्ते (समाधि) की सी हालत में था। इस अङ्ग में बहुत से दर्जे थे और जो हिस्सा उसका विशेष अङ्ग के निकट था वह बमुक़ाबिले उसके केन्द्र और केन्द्र से संयुक्त यानी मिले हुए हिस्सों के अधिक चैतन्यता रखता था। न्यून अङ्ग के देश में चैतन्यता की कमी, जैसा कि ऊपर बयान किया जा चुका है, चैतन्य-शक्ति का कुल्ल-मालिक की जानिब खिँचाव होने की वजह से वाक़े हुई थी।

८४—सुरत-अंशों की आदिदशा का बयान।

रचना से पहले यही खिँचाव न्यून अङ्ग को झीने आकर्षण (कशिश) द्वारा उसकी अनादि अचेत (धुन्धकार) अवस्था में ठहराये हुए था। जिन झीने आकर्षण की धारों की मारफ़त यह अचेत अवस्था ठहरी हुई थी उनके अन्दर एक ही रुख़ में काम करने वाले असंख्य नुक़्ते क़ायम थे। इन नुक़्तों की संयुक्त-क्रिया* से जो चैतन्य-धार जारी हुई वह ख़ुद परमपुरुष (कुल्ल-मालिक) से सदा संयुक्त थी और उसीके ज़रिये से उसको न्यून अङ्ग की सारी कैफ़ियत का ज्ञान प्राप्त था। चुनांचे कुल्ल-मालिक को इस वक़्त भी मौजूदा रचना के स्थूल से स्थूल हिस्से का ज्ञान उसके अन्तर में मौजूद कमज़ोर से कमज़ोर चैतन्य-अंश ही के ज़रिये से प्राप्त होता है। गोया कि अन्तर्गत चैतन्य-अंश हमेशा सचेत रहता है और सिर्फ़

* United Action,

बाहरी गिलाफ़ या पर्दा अचेत बन जाता है। न्यून अङ्ग के नुक़ते बहैसियत खुद यानी धार से अलहदा ख्याल करने पर अचेत अवस्था में थे और येही नुक़ते आदिदशा में स्थित सुरतें थीं।

यहाँ पर दोबारा ज़ाहिर कर देना मुफ़ीद होगा कि लफ़्ज़ 'नुक़ता' से भ्रम में आकर यह ख़्याल नहीं करना चाहिए कि सुरत-अंशों के अन्दर की शक्ति निहायत ही ख़फ़ीफ़ यानी तुच्छ थी। सब कोई जानता है कि सूरज की किरण मामूली लैम्प की रोशनी की किरण के मुक़ाबिले में प्रकाश और कई दूसरी बातों के लिहाज़ से बहुत ज़्यादा ताक़तवर होती है और चूँकि इन दोनों किरणों के असर हमारे तजरुबे में बखूबी आये हुए हैं इस लिए उनके बाहमी फ़र्क़ को हम किसी हालत में नज़रअन्दाज़ नहीं कर सकते, लेकिन एक चीज़ से दूसरी की उपमा देते वक़्त जब कभी ऐसा होता है कि हम को तजरुबा या ज्ञान सिर्फ़ एक ही चीज़ का रहता है तो उपमा से दूसरी चीज़ की निस्बत जो अनुमान किया जाता है वह अक़्सर ग़लत होता है और सीधे सादे लफ़्ज़ों से भी और के और ख़्यालात दिल में पैदा हो जाते हैं। मसलन् जब कभी हम सूरज का ज़िक्र करते हैं तो लफ़्ज़ 'सूरज' से रोज़ाना तजरुबे के मुताबिक़ हम को अनुमान एक चमकती हुई थाली का सा होता है लेकिन अगर किसी शख़्स की दृष्टि ऐसी ज़बरदस्त और वसीय हो कि वह सूरज के असली दराज़ क़द

व क़ामत और प्रकाश को वैसे ही मुकम्मल तौर पर देख सकता हो जैसे कि हम एक सन्तरे को देखते हैं तो उस शख़्स के लिए लफ़्ज़ 'सूरज' इस्तेमाल करने पर वेही अर्थ न होंगे जो साधारण मनुष्यों के लिए होते हैं। (क्योंकि उसका सूर्यसम्बन्धी ज्ञान आम लोगों के ज्ञान से बिलकुल मुख़्तलिफ़ है) इस लिए बेहतर होगा कि लफ़्ज़ 'नुक़्ता' का अर्थ लगाते वक़्त इन सब बातों का लिहाज़ रक्खा जावे और सुरत-अंशों या नुक़्तों को कोई बदहैसियत या तुच्छ चीज़ ख़्याल न किया जावे बल्कि यह समझा जावे कि सुरत-अंशें ज़बरदस्त गुप्त शक्ति और आकर्षण के केन्द्र हैं, जिनपर उनकी पृथक्-क्रिया* के कारण (जो उनकी संयुक्त-क्रिया से अलहदा थी) खोल चढ़े हुए थे। मिसाल के तौर पर अगर सुरतों की संयुक्त-क्रिया को शब्द से तश्बीह दी जावे तो उनकी पृथक् यानी ग़िलाफ़ पैदा करने वाली क्रिया को शब्द के सङ्ग पैदा होने वाली ध्वनि कह सकते हैं। रचना से पहले सुरत-अंशें इन ग़िलाफ़ों से ढकी हुई अचेत अवस्था में पड़ी थीं क्योंकि उनकी चैतन्यता का मुख्य भाग आदि-भण्डार में लीन था। सुरत-अंशों की संयुक्त-क्रिया से न्यून अङ्ग समस्तरूप से यानी बतौर कुल के क़ायम था और उनकी पृथक्-क्रिया से हर एक सुरत का अपना अपना ग़िलाफ़ क़ायम था।

* Individual Action.

८५—आदि चैतन्य-धार जारी होने से पहले आदि-भण्डार में हिलोर वाक़ै हुई ।

यह बयान किया जा चुका है कि नुक़्तों यानी सुरत-अंशों की संयुक्त-क्रिया से अनादि झीने आकर्षण का सिलसिला जारी था । कितने ही ज़माने तक इस आ-कर्षण से किसी तरह की तब्दीली या तफ़रीक़ ज़हूर में नहीं आई लेकिन जब समय आया तो भण्डार की तरफ़ आकर्षण ज़्यादा वेग के साथ होने लगा, जिसकी वजह से न्यून अङ्ग की चैतन्यता में, जो कि आगे ही कम थी, और भी ज़्यादा कमी हो गई यानी आदि-भण्डार या विशेष अङ्ग में जिस क़दर चैतन्यता पहले से खिँची हुई थी उससे और ज़्यादा खिँच गई और न्यून अङ्ग का वह हिस्सा, जिसमें यह नई कमी वाक़ै हुई, परमपुरुष यानी विशेष अङ्ग से परे हटने लगा । यह सिलसिला रचना शुरू होने के ऐन क़बल जारी हुआ और कुछ अर्से तक क़ायम रहा । जब मुनासिब वक़्त आया तो आदि-भण्डार के उस हिस्से से, जो न्यून अङ्ग के क़रीबतरीन था, भारी हिलोर उठकर आदि चैतन्य-धार प्रकट हुई । यह धार चुम्बक-शक्ति की चुम्बक बनाने वाली क्रिया की तरह (देखो दफ़ा ६३) चैतन्यता जगाने की क्रिया (Process of Spiritualisation) के रूप में आदि-शक्ति का इज़्हार था और इससे ग़रज़ यह थी कि न्यून अङ्ग का

जो हिस्सा आदि चैतन्य-भण्डार का विस्तार (अङ्ग) बनने के क़ाबिल हो वह कुल्ल-मालिक की हद्द के अन्दर क़ायम हो जावे और उसमें इस क़दर चैतन्यता भर दी जावे कि उसकी ज़ाती चैतन्यता की कमी की वजह से दूसरे चैतन्यता से हीन भागों वाली ख़राब सूरत, जिसका ज़िक्र आगे चलकर करेंगे, उसके अन्दर नमूदार न होने पावे।

८६—शब्द-धार और सुरत-धार।

चैतन्य-शक्ति के धार-अङ्ग को चैतन्य शब्द-धार कहते हैं और भण्डार-अङ्ग को सुरत-धार कहते हैं। ये दोनों अङ्ग एक दूसरे के आश्रित हैं। दूसरे लफ़्ज़ों में चैतन्य-शक्ति के कारकुनरूप को शब्द और केन्द्र यानी भण्डार-रूप को सुरत कहते हैं। शब्द का काम आकर्षण यानी कशिश करना है और सुरत का काम केन्द्र-निर्माण यानी मर्कज़ क़ायम करना है। सुरत और शब्द धारों के इन दो ख़्वास की वजह से नीचे मण्डलों में लिङ्ग यानी स्त्री-पुरुष का भेद जानदारों के अन्दर क़ायम हुआ।

८७—निर्मल चैतन्य-देश और उसके छः स्थान।

चूँकि कुल्ल-मालिक ख़ुद अनादि ध्रुवीय यानी न्यूना-धिक भाव में था और उसमें तीन अलहदा अलहदा

अङ्ग क़ायम थे यानी एक विशेष-चैतन्य का अपार (मस्तक) अङ्ग, दूसरा मध्य (काया) अङ्ग और तीसरा न्यून-चैतन्य (चरण) अङ्ग। इस लिए रचना के शुरू में जो शब्द और सुरत धारें कुल्ल-मालिक से निकलीं और जो प्राण यानी अन्दर जाने वाले और अपान यानी बाहर आने वाले साँसों की दो धारों के मुशाबह थीं उन्होंने भी अपने तईं न्यून अङ्ग के उस हिस्से में, जो कुल्ल-मालिक के ऐन सम्मुख था, तीन तीन भागों में तक़सीम किया । जैसे जानदारों के साँस लेने पर जो ऑक्सिजन गैस भीतर दाखिल होती है वह साँस निकालने पर शरीर के मुख्य मसाले से संयुक्त (कारबोनिक एसिड गैस बनकर) बाहर आती है लेकिन चूँकि कुल्ल-मालिक में आला दर्जे की निर्मल चैतन्यता के सिवाय और कुछ क़तई नहीं है इस लिए उससे बाहर आने वाला साँस उसके जौहर यानी आला दर्जे की निर्मल चैतन्यता ही से संयुक्त होना चाहिए और इस लिए बाहर आने वाली सुरत-धार, जो कुल्ल-मालिक से बरामद हुई, वैसी ही चैतन्य होनी चाहिए जैसी कि अन्दर जाने वाली शब्द-धार, जो उसमें लीन होती है। शब्द-धार के ध्रुवीय भाव से जो तीन स्थान बने वे राधास्वामी, अगम और अलख कहलाते हैं और सुरत-धार के ध्रुवीय भाव से जो तीन स्थान क़ायम हुए उनके नाम अनामी, सत्तलोक और भँवरगुफा

हैं । मालूम होवे कि चूँकि सुरत-धार चैतन्यता जगाने की क्रिया (Process of Spiritualisation) के द्वारा बाहर को फैली इस लिए इसका निवास-स्थान शब्द-धार की निस्बत, जिसका काम सिर्फ़ भण्डार की जानिब आकर्षण है, किसी क़दर नीचा है । चुनांचे सुरत-धार के तीन स्थानों का सेट (जोड़), जिसकी तफ़सील ऊपर बयान हुई, शब्द-धार के स्थानों के सेट से नीचे वाक़े है और उसकी चैतन्यता भी शब्द-धार के स्थानों के मुक़ाबिले में किसी क़दर कम दर्जे की है । इन छः स्थानों में ये दोनों धारें एकरूप हो रही हैं और दोनों मिलकर ठीक वैसे ही काम करती हैं जैसे कि चुम्बक-शक्ति की लोहे को चुम्बक बनाने और उसको अपनी जानिब खींचने की संयुक्त-क्रियाएँ देखने में आती हैं । बहरहाल इन दो धारों की मौजूदगी की वजह से निर्मल चैतन्य-देश में छः स्थान क़ायम हुए । अब आगे थोड़ा सा हाल इन स्थानों के धनियों और बासियों का बयान किया जाता है ।

८८—निर्मल चैतन्य-स्थानों के बासी ।

जब न्यून अङ्ग की कशिश विशेष अङ्ग की जानिब काफ़ी वेग के साथ होने लगी तो सुरत-अंशों के वे ग़िलाफ़ या खोल, जो उनके केन्द्र-निर्माण अङ्ग की वजह से उनपर चढ़े हुए थे, झड़कर फ़ासले पर हट

गये और सुरतें आदि अचेत ग़िलाफ़ों के इस प्रकार झड़ जाने से मानों अनादि निद्रा से जागृति में आ गईं क्योंकि ग़िलाफ़ों के हट जाने से सुरत-अंशों की धारें ग़िलाफ़ क़ायम रखने की क्रिया से बहुत कुछ आज़ाद हो गईं और नीज़ पहले की बनिस्बत ज़्यादा चैतन्य घाटों पर खिँच आने से सुरतों को विशेष चैतन्यता प्राप्त हो गई। सुरतों की यह जागृति जीव के सुषुप्ति अवस्था से गुज़र-कर सक्ते की हालत में प्रवेश करने के अमल से बहुत कुछ मुशाबहत रखती है। सक्ते की हालत में साँस का आना जाना और शरीर के अन्दर खून का घूमना बन्द हो जाता है क्योंकि मुख्य चैतन्य-धारें, जिनके आसरे जाग्रत, स्वप्न और गहरी नींद की अवस्थाएँ क़ायम रहती हैं, सूक्ष्म घाट पर खिँच जाती हैं। ये सब बातें मौत के वक़्त भी हुआ करती हैं अलबत्ता इतना फ़र्क़ रहता है कि उस वक़्त धारें ज़्यादा ऊँचे घाट पर खिँचती हैं। जैसे सुरत सूक्ष्म घाट पर पहुँचते ही अपने लिए वहाँ के मसाले से स्थूल शरीर से मिलता जुलता हुआ एक सूक्ष्म शरीर तय्यार कर लेती है उसी तरह आदि में भी ज्योंही सुरत-अंशों ने अपने आदि अचेत ग़िलाफ़ों से रिहाई हासिल की त्योंही उन्होंने उन ऊँचे चैतन्य-मण्डलों के मसाले से, जिनपर वे खिँच कर पहुँचीं, अपने लिए नई चैतन्य देहें तय्यार

कर लीं । इन ऊँचे स्थानों का मसाला क्या था ? भण्डार की जानिब कशिश में वेग की ज्यादती होने पर जो अचेत गिलाफ़ अपने असली मुक़ाम से नीचे झड़कर गिरे वेही इन स्थानों का मसाला बने। इस रद्द व बदल से इन गिरने वाले गिलाफ़ों के अन्दर भी सुरतों की संयुक्त-चैतन्यधार की सी क्रियात्मक शक्ति आ गई और वे समस्तरूप से सचेत अवस्था को प्राप्त हो गये। ज़ाहिर है कि इस क़िस्म के मसाले से तय्यारशुदा शरीर सुरत-अंशों की किसी चैतन्य-क्रिया में बाधक नहीं हो सकते थे। ये सुरतें, जिनको सचेत मसाले की देहें प्राप्त हुईं, बलिहाज़ अपने निवास-स्थानों के दर्जे के हंस और परमहंस कहलाती हैं यानी जो सुरतें ऊपर के तीन स्थानों में मुक़ीम हैं वे परमहंस कहलाती हैं और जो नीचे के तीन स्थानों में रहती हैं वे हंस कहलाती हैं। अगर्चे निर्मल चैतन्य-स्थान के वासियों में लिङ्गभेद यानी स्त्री-पुरुष भाव ज़ाहिर नहीं है लेकिन बलिहाज़ इसके कि किसीमें शब्द-अङ्ग प्रधान है और किसीमें सुरत-अङ्ग प्रधान है, पहली क़िस्म को पुरुषवर्ग और दूसरी क़िस्म को स्त्रीवर्ग कह सकते हैं। लेकिन वाज़ह हो कि इन सुरतों में यहाँ का सा स्त्री-पुरुषव्यवहार नदारद है ।

८१—अगमपुरुष यानी आदि-धार के प्रथम केन्द्र का बयान।

आदि चैतन्य-धार ने निज-भण्डार से रवाना होकर जो पहला केन्द्र क़ायम किया वह कुल्ल-मालिक राधास्वामी के अपार धाम से निचले स्थान का प्रथम धनी हुआ। इस धनी को अगमपुरुष कहते हैं और यह उस भारी चैतन्यता का समूह है जो रचना से पहले न्यून अङ्ग से खिँचकर कुल्ल-मालिक के विशेष अङ्ग में शामिल हो गई थी और जिसमें कुल्ल-मालिक के प्रसङ्ग से बहुत कुछ विशेषता आ गई थी और जिसके बल के अन्दर आदि-धार के सम्बन्ध के प्रताप से कोई कमी बाक़ी नहीं होने पाई है। नीचे के मण्डलों में चैतन्यता जगाने के अलावा आदि-धार के रवाँ होने की एक भारी वजह यह भी थी कि कुल्ल-मालिक उस चैतन्य को, जिसे उसने रचना से पहले के अनादि न्यूनाधिक भाव के सिलसिले में अपने विशेष अङ्ग से नीचे दर्जे में निवास दिया था, अपनी अनादि अवस्था के तक़ाजे की वजह से हमेशा के लिए अपने अन्दर शामिल नहीं रख सकता था। चुनांचे कुल्ल-मालिक ने मुनासिब वक़्त आने पर उस चैतन्य को अपने जौहर के असर से ख़ूब भरकर (प्रसादी करके) वापिस कर दिया ताकि न्यून अङ्ग भी मय अपनी असंख्य सुरत-अंशों के

सचेत और आनन्दमय अवस्था को प्राप्त हो जावे यानी अचेत अवस्था दूर होकर उसके अन्दर क्रियात्मक अवस्था क़ायम हो जावे।

जब आदि-धार निज-भण्डार से प्रकट हुई तो उसके संग ऐसे ज़बरदस्त प्रकाश का इज़हार हुआ कि मानों इर्द गिर्द के देश में चमकते हुए गोलों से जड़ी हुई चादरें तन गईं। इन गोलों को पारिभाषिक बोली में सूर्य्य और चन्द्र कहते हैं। जिनके अन्दर शब्द-अङ्ग प्रधान है उनको सूर्य्य कहते हैं और जिनके अन्दर सुरत-अङ्ग प्रधान है उनको चन्द्र कहते हैं। इन गोलों की मारफ़त इर्द गिर्द के उस देश में, जिसका अभी ज़िक्र हुआ, आदि-भण्डार की चैतन्यता पहुँचाई गई, चुनांचे हमारे इस लोक में भी सूर्य्य, चन्द्र और तारागण से शक्ति इसी तरीक़े पर बहम पहुँचती है। अलावा इसके इन चैतन्य गोलों ने उस देश की सुरतों के लिए निवास-स्थान का भी काम दिया। मालूम होवे कि निर्मल चैतन्य-रचना के और भागों की तरह ये गोले भी चैतन्य और जगे हुए थे। यह देश, जिसका ऊपर बयान हुआ, वह धाम है कि जो आदि-धार के सोतपोत (आदि-भण्डार) के उस हिस्से को घेरे हुए है जहाँ से आदि-धार प्रकट हुई और अगमपुरुष का मण्डल उस धाम के नीचे वाक़े है जिससे अगमलोक को कुल्ल-मालिक राधास्वामी के धाम का सदर दरवाज़ा कह सकते हैं।

१०—निर्मल चैतन्य-देश के दूसरे चार स्थान।

आदि-धार का प्रथम केन्द्र तय्यार होने में क़ुदरती तौर पर कुछ समय लगा और जब वह तय्यार हो गया तो अगमपुरुष यानी निर्मल चैतन्य-देश के ऊपर से दूसरे स्थान के धनी ने अपने तईं चैतन्यता के महाप्रकाश-वान् सिन्धु के रूप में प्रकट किया और आदि-धार अपनी चैतन्यता को गोया इस गहिर गम्भीर समुद्र में डालकर उसकी तह में गुप्त हो गई यानी आदि-धार का उतार उस लोक के तले तक पहुँचने पर ख़त्म होगया। इसके बाद रचना का सिलसिला अगमपुरुष ने आदि-भण्डार की कार्रवाई के नमूने पर जारी किया और अपना लोक और उसके मुतअल्लिक़ चन्द्र, सूर्य्य और उनकी निवासी सुरतें प्रकट कीं। निर्मल चैतन्य-देश के बाक़ीमाँदा चार स्थानों की रचना भी इसी तौर से ज़ाहिर हुई। यहाँ पर यह बयान कर देना ज़रूरी मालूम होता है कि निर्मल चैतन्य-देश के तीन ऊपर वाले और तीन नीचे वाले स्थानों के हर सेट यानी जोड़ में यह क़ायदा है कि ऊपर का स्थान अपने से नीचे के दो स्थानों को सिर्फ़ ज्ञान या चैतन्यता बख़्शता है और उन दो स्थानों के इन्तिज़ाम में कोई हिस्सा नहीं लेता। यही बन्दोबस्त किसी हद तक हमारे देह के अन्दर भी देखने में आता है यानी सुरत देह को सिर्फ़ ज्ञान या शक्ति बहम पहुँचाती है

और देह की सँभाल और उसकी तमाम क्रियाएँ—सूक्ष्म व स्थूल—मन व शरीर की शक्तियों की मारफ़त क़ायम और जारी रहती हैं।

९१—महासुन्न का मैदान और उसके छः सूक्ष्म स्थान।

यह ज़िक्र हो चुका है कि निर्मल चैतन्य-देश के सब स्थान कुल्ल-मालिक के अपार देश के फैलाव के तौर पर रचे गये हैं जिसकी वजह से वे कुल्ल-मालिक के विशेष अङ्ग का भाग या अङ्ग बन गये हैं। ये स्थान हर क़िस्म के रद्द व बदल और नाश से रहित हैं। रचनात्मक क्रिया ने, जिसका पीछे बयान हुआ और जिसने आदि-भण्डार से मुलहिक़ (सटे हुए) मध्यदेश के ऊपर वाले हिस्से को निर्मल चैतन्य-स्थानों में तब्दील किया, इन स्थानों के नीचे (मध्यदेश के मध्यभाग में) भारी शून्यता की सूरत पैदा कर दी। शून्यता के इस भारी मैदान को सन्त-मत की बोली में महासुन्न का मुक़ाम कहते हैं। यह मैदान निर्मल चैतन्य-स्थानों और ब्रह्म के स्थानों के दरमियान, जो मध्यदेश के नीचे वाले हिस्से से प्रकट हुए, हद्दे फ़ासिल यानी रोक का काम देता है। चूँकि महासुन्न का मैदान निर्मल चैतन्य-स्थान प्रकट करने वाली रचनात्मक-क्रिया के लगातार ज़ेर असर रहा इस लिए निर्मल चैतन्य-स्थानों का सूक्ष्म ठप्पा इस पर भी लग

गया और इस लिए इस मैदान में भी निर्मल चैतन्य-स्थानों के मुताबिक़ छः सूक्ष्म दर्जे क़ायम हो गये । इन सूक्ष्म दर्जों को निर्मल चैतन्य-स्थानों की छाया कह सकते हैं। इन स्थानों की रचना की क्रिया भँवरगुफा यानी सब से निचले निर्मल चैतन्य-स्थान के धनी सोहंग-पुरुष से ज़ाहिर हुई ।

१२—कालपुरुष और आद्या का प्रकट होना ।

निर्मल चैतन्य-स्थानों के रचे जाने पर आदि-शक्ति के प्रथम रचनात्मक वेग के ज़ाहिरा ख़त्म हो जाने से आयन्दा कार्रवाई का सिलसिला कुछ अर्से के लिए बन्द हो गया लेकिन इस ठहराव के वक़्फ़े में आदि-शक्ति की भण्डार की जानिब अनादि कशिश ज़्यादा तेज़ी के साथ जारी रही क्योंकि अब निर्मल चैतन्य-देश के निचले स्थानों का भी असर उसमें शामिल हो गया। ये निचले स्थान अगर्चे इस क़दर चैतन्य हो गये थे कि आदि-भण्डार के साथ जुड़े रह सकें लेकिन उनके अन्दर फिर भी कुछ न कुछ कम दर्जे वाली चैतन्यता मिली रह गई थी क्योंकि महासुन्न के स्थानों की तय्यारी के सिलसिले में जो रचनात्मक क्रिया अमल में आई वह उसको पूरे तौर से ख़ारिज करने के लिए काफ़ी न थी, चुनांचे यह बचा हुआ नुक़्स बाद में रचना की क्रिया दोबारा शुरू होने पर दूर

किया गया। यहाँ पर इस बात का ज़िक्र कर देना ना-मुनासिब न होगा कि छः स्थानों के हर सेट में पाँचवाँ स्थान उत्पत्ति की क्रिया करने वाला होता है चुनांचे मनुष्य-शरीर में सुरत की बैठक के स्थान से नीचे की जानिब जो पाँचवाँ (इन्द्रिय) चक्र है उसी में औलाद पैदा करने का खास्सा रक्खा गया है और इसी तरह ब्रह्माण्ड में भी जो पाँचवाँ यानी ब्रह्मा का स्थान है उसी के ज़िम्मे उत्पत्ति का काम है। पिण्ड और ब्रह्माण्ड देश के बासियों में पुरुषभाव और स्त्रीभाव की क्रियाओं में भेद प्रकट है लेकिन निर्मल चैतन्य-देश के बासियों में, जैसा कि पहले कह चुके हैं, ये दोनों भाव इकट्ठे हैं और यहाँ की सी स्त्री पुरुष वाली क्रियाएँ उस देश में नहीं होतीं। निर्मल चैतन्य-देश के पाँचवें स्थान यानी सत्तलोक में अलबत्ता सुरत और शब्द की धारों का परस्पर सङ्गम ज़्यादा प्रकट शक्ल में हुआ इस लिए जब रचना का सिल-सिला दोबारा जारी हुआ तो ये दोनों ख़वास मय उस कम दर्जे की चैतन्यता के, जो ठहराव के वक़्फ़े में सत्तलोक के अन्दर शामिल हो गई थी, दो अलग अलग धारों के रूप में ख़ारिज किये गये। पहली धार, जो सत्त-पुरुष यानी सत्तलोक के धनी से जारी हुई, शब्द-धार की शाख होने की वजह से हर क़िस्म की रुकावट पर ग़लबा पाने की समर्थता रखती थी (इस धार को कालपुरुष

या ब्रह्म कहते हैं) लेकिन चूँकि इसमें केन्द्र क़ायम करने की शक्ति मौजूद न थी इस लिए यह अकेले अनादि मध्यदेश के निचले दर्जों में रचना नहीं कर सकती थी। दूसरी धार, जो सत्तपुरुष से प्रकट हुई, सुरत-धार की शाख़ होने की वजह से केन्द्र क़ायम करने की समर्थता रखती थी और इसके पेट में ऐसी अनन्त सुरत-अंशें मौजूद थीं जिनमें काफ़ी चैतन्यता न थी यानी जो ऐसी निर्मल न थीं कि निर्मल चैतन्य-देश में ठहर सकें। काल-धार का रङ्ग बमुक़ाबिले निर्मल चैतन्य-स्थानों के निर्मल प्रकाश के मुनव्वर नीलापन लिये हुए था और दूसरी धार का रङ्ग (जो आद्या कहलाती है) सब्ज़ी-मायल पीला था।

९३—ब्रह्माण्ड की रचना की सामग्री और उसके छः स्थानों का बयान।

कालपुरुष और आद्या की धारों के ख़ारिज होने पर सत्तलोक से वह कम दर्जे वाला तमाम चैतन्य दूर हो गया जो निर्मल चैतन्य-स्थानों में रहने के क़ाबिल न था और साथ ही ब्रह्माण्ड की रचना के लिए ज़रूरी सामान मुहय्या हो गया। यहाँ पर यह जतला देना मुनासिब मालूम होता है कि इन दोनों धारों की क्रिया का रुख़ बहिर्मुख यानी निर्मल चैतन्य-धार के रुख़ से उलटा था क्योंकि इनका

क्रियाक्षेत्र आदि-न्यून अङ्ग के सिरे से सटा हुआ देश है। मतलब यह है कि आदि चैतन्य-धार का क्रिया-क्षेत्र विशेष अङ्ग के क़रीब होने की वजह से उसका रुख़ विशेष अङ्ग की तरफ़ था लेकिन काल व आद्या का क्रिया-क्षेत्र न्यून अङ्ग के सिरे के क़रीब होने की वजह से इनका रुख़ न्यून अङ्ग की जानिब था। कालपुरुष और आद्या का क्रियाक्षेत्र ब्रह्माण्ड कहलाता है। इसका ऊपर का सिरा महासुन्न की रचना के सब से नीचे हिस्से से, जिस-को अक्षरपुरुष का स्थान कहते हैं, जुड़ा हुआ है। अक्षर-पुरुष चूँकि महासुन्न की नीम-रूहानी रचना के धनियों में से एक धनी है इस लिए वहाँ के दूसरे धनियों के मा-निन्द वह मृत्यु से प्रायः रहित है और इसी से अक्षर (अविनाशी) पुरुष कहलाता है। काल और आद्या की धारों ने इस स्थान पर किसी क़दर सम्मिलित अवस्था में पहला केन्द्र क़ायम किया और यहाँ इन धारों के नाम पुरुष और प्रकृति हुए। चूँकि अक्षरपुरुष निर्मल चैतन्य-देश की एक कला थी इस वास्ते ब्रह्माण्ड के तअल्लुक़ में उसका वही दर्जा है जो देह और मन के तअल्लुक़ में मनुष्य की सुरत का रहता है, इसी वजह से अक्षरपुरुष का स्थान ब्रह्माण्ड का सच्चा 'आत्मपद' कहलाता है। चूँकि यह पुरुष न्यून अङ्ग की महान् आत्मा यानी सुरत है इस लिए जो अभ्यासी अक्षरपुरुष तक

पहुँच जाता है उसको 'महात्मा' यानी महान् आत्मा कहते हैं। अक्षरपुरुष के साथ तअल्लुक़ होने पर काल और आद्या को बहुत कुछ तक़वियत हासिल हो गई जिस-से ब्रह्माण्ड की रचना का काम फ़ौरन् जारी हो गया यानी निर्मल चैतन्य-स्थानों की रचना के ढंग पर पुरुष प्रकृति और अक्षरपुरुष से धारें जारी हो कर इनके मुत-अल्लिक़ (ब्रह्माण्ड के) स्थानों की रचना प्रकट हुई। इस मुक़ाम पर ये तीनों धारें प्रकट हैं और त्रिवेणी के नाम से मशहूर हैं। अक्षरपुरुष की बैठक के मुक़ाम के नीचे एक बड़ा भारी केन्द्र या चैतन्यता का सरोवर वाक़े है जिसको मानसरोवर कहते हैं। जब कोई अभ्यासी यहाँ पहुँचकर इस चैतन्य सरोवर में ग़ोता लगाता है तो उसकी वह सब झीनी मलीनता, जो कालपुरुष यानी ब्रह्म या ब्रह्माण्डी मन के देश से गुज़रने के दौरान में उस पर चढ़ गई हो, धुल जाती है। वह मुक़ाम, जहाँ पर ये तीन धारें अव्वल मर्तबा मिलीं, त्रिकुटी यानी तीन पर्वतों का स्थान कहलाता है। इन पर्वतों के नाम मेरु, सुमेरु और कैलाश हैं। काल और आद्या की धारें, जो सत्तलोक से उतरी थीं, यहाँ पर ब्रह्म और माया रूप में प्रकट हुईं। चूँकि इस स्थान का असली (आदि) मसाला स्थूल यानी कम चैतन्य था इस लिए रचनात्मक क्रिया के सिलसिले में छँटौनी होने पर यहाँ से निहायत सूक्ष्म पर-

माणुओं के ग़िलाफ़-रूप बादल भारी मिक़दार में ख़ारिज हुए। 'परमाणुओं' से यहाँ हमारा मतलब उन मामूली ज़र्रों या अयनों से नहीं है जो इन्सान के तजरुबे में आते हैं क्योंकि वे परमाणु इनसे अत्यन्त सूक्ष्म हैं। त्रिकुटी में चैतन्यता की कमी बमुक़ाबिले ऊपर के स्थान के, जिसको सुन्न या दसवाँ द्वार कहते हैं, निहायत नुमायाँ यानी प्रकट शक्ल में ज़ाहिर हुई जिसका असर दर्शनेन्द्रिय पर उदय होते हुए सूर्य के चमकीले लाल रङ्ग का सा पड़ता है।

त्रिकुटी से नीचे ये तीनों धारें मिलकर चलीं और इन-के अलावा दो नई मुख्य धारें माया और ब्रह्म से प्रकट हो कर नीचे उतरीं। इन दो धारों ने नीचे उतरकर जो तीसरा ठेका लिया उसको सहसदलकँवल (सहस्र पंखड़ियों वाला कमल) कहते हैं और माया व ब्रह्म ने यहाँ पर ज्योतिनारायण यानी निरञ्जन का रूप धारण किया।

चूँकि ये तीन धारें, जिनका अभी ऊपर ज़िक्र हुआ, तीन कूटों के स्थान से जारी हुई थीं इस लिए सहसदल-कँवल की जानिब उतार में जो रास्ता उन्होंने अपने लिए बनाया उसमें असर उन धारों के उत्थान-स्थान यानी त्रिकुटी का आगया। इस रास्ते को बङ्कनाल (टेढी सुरङ्ग) कहते हैं। जिस मुक़ाम से ये तीनों धारें एक बनकर नीचे की जानिब रवाना हुईं वहाँ से रास्ता

अव्वल ऊपर को जाता है और बाद में नीचे उतरता है। थोड़ा आगे चलकर हम दिखलावेंगे कि ये हीं तीन धारें तीन गुणों के सूक्ष्म और गुप्त (बीज) रूप हैं। इनमें से एक में प्रबल सत्त्व अङ्ग और दूसरी में उत्पत्ति का अङ्ग और तीसरी में संहार का अङ्ग क़ायम है। त्रिकुटी स्थान में इन तीन धारों ने और नीज़ माया और ब्रह्म की दो धारों ने वहाँ के परमाणुओं का मथन करके पाँच अलहदा अलहदा लेकिन निहायत सूक्ष्म और झीने ग़िलाफ़ या तह प्रकट किये जिनसे बाद में स्थूल प्रकृति यानी मादे की वे पाँच अवस्थाएँ ज़ाहिर हुईं जिनका दफ़ा १२ में ज़िक्र किया गया है। ब्रह्म-धार से जो अवस्था ज़ाहिर हुई वह आकाश तत्त्व, और माया-धार से जो अवस्था ज़ाहिर हुई वह अग्नि तत्त्व, और सत्वगुण, रजोगुण व तमोगुण की धारों से जो अवस्थाएँ ज़ाहिर हुईं वे वायु, जल और पृथ्वी तत्त्व कहलाते हैं। रचनात्मक छँटौनी के सिलसिले में जो ग़िलाफ़ त्रिकुटी से नीचे गिरे वे इन पाँच अवस्थाओं का असर लिए हुए थे और सहसदलकँवल में जाकर वे अलहदा अलहदा पाँच तत्त्वों के रूप में ज़ाहिर हुए। चूँकि ये तत्त्व स्थूल प्रकृति के सब से छोटे ज़र्रों यानी अयनों से भी ज़्यादा सूक्ष्म थे और शक्ति उनके अन्दर कसकर भरी थी इस लिए ये सहसदलकँवल से अलहदा अलहदा

रङ्गीन चमकती हुई धारों की शक्ल में रवाँ हुए। आकाश तत्त्व का रङ्ग श्याम था, अग्नि का लाल, वायु का हरियाला, जल का श्वेत और पृथ्वी का पीत।

सहसदलकँवल से निकलते ही पाँच तत्त्वों का फिर से मथन हुआ और तीनों गुण, ज्योति व निरञ्जन ने जुदागाना मथन करके पाँच तत्त्वों के पच्चीस उपभाग प्रकट किये जिनमें से हर एक के अन्दर अलहदा खास अङ्ग या सिफ़त मौजूद थी। इन पच्चीस उपभागों को पच्चीस प्रकृतियाँ कहते हैं।

इधर तो तत्त्वों और प्रकृतियों की हस्ब मज़कूरावाला वीड़ बाँधी जा रही थी उधर सहसदलकँवल के मण्डल की रचना का काम ज़ोर से जारी था जिसके सिलसिले में आठ बड़ी धारें काम कर रही थीं। इनमें से दो धारें तो ज्योति और निरञ्जन की थीं और छः धारें तीन गुणों की थीं, जो पुरुष और स्त्री अङ्गों में अलग अलग फटकर तीन से छः हो गई थीं। इन्हीं आठ धारों के लिहाज़ से सहसदलकँवल को अष्टदलकमल भी कहा जाता है। इन आठ धारों में से हर एक ने अव्वल पाँच तत्त्वों पर कशिश करके पाँच पाँच पत्तियाँ क़ायम कीं और उनके तय्यार होने पर हर पत्ती ने अपनी कशिश पच्चीस प्रकृतियों पर करके पच्चीस पच्चीस दल यानी पंखड़ियाँ क़ायम कीं जिससे आठ धारों के गिर्द एक

हज़ार पंखड़ियाँ क़ायम हुईं। इन दलों या पंखड़ियों की तादाद के लिहाज़ ही से इस स्थान को सहसदल-कँवल कहते हैं।

इस कँवल के रचे जाने पर ज्योति और निरञ्जन की धारें वहीं पर ठिठक गईं क्योंकि सहसदलकँवल से नीचे का न्यून चैतन्य इस लायक़ न था कि जिसमें उन-की शक्ति काम कर सके। तीन गुण, जो इस वक़्त तक सहसदलकँवल के अन्दर छिपे थे, अब नारायण के तीन सुत या पुत्र बनकर प्रकट हुए और अपने अपने स्थानों के, जो एक के बाद एक दर्जेवार क़ायम हैं, धनी बने। इनके नाम विष्णु, ब्रह्मा और शिव हैं और इनके लोक इसी तरतीब में वाक़े हैं। इन तीन लोकों के रचे जा-ने पर ब्रह्माण्ड देश के छओं उपभागों का सेट तय्यार हो गया। यह देश, जैसा कि दफ़ा ६१ में बयान किया गया है, मध्यदेश के निचले भाग में वाक़े है। यहाँ तक ब्रह्मांड देश की सामग्री और उसके छः स्थानों की रचना का ज़िक्र हुआ, अब आगे कुछ बयान उन स्थानों की चैतन्यता का और वहाँ की बासी सुरतों का करते हैं।

६४—ब्रह्माण्ड की चैतन्यता।

ब्रह्माण्ड की चोटी के स्थान यानी सुन्न से उसके नीचे के स्थान यानी त्रिकुटी तक चैतन्यता निहायत

आला दर्जे की है, यहाँ तक कि वह सुन्न से ऊपर के स्थानों की चैतन्यता से लग्गा खाती है लेकिन त्रिकुटी से नीचे चैतन्य के साथ सूक्ष्म प्रकृति यानी माया की मिलौनी होने की वजह से इसकी निर्मलता जाती रही। त्रिकुटी से नीचे की चैतन्यता को इस लिए प्राण कहते हैं, लेकिन प्राण से हमारा मतलब वायु तत्त्व से नहीं है। सुन्न स्थान से जो तीन धारें रवाँ हुई (देखो दफ़ा ६३) वे बङ्कनाल के निचले सिरे से आगे बढ़ने पर इडा, पिङ्गला और सुषुम्ना तीन सूक्ष्म धारों में फट गई। सुषुम्ना का रास्ता बीच में है, इडा का बाईं तरफ़ और पिङ्गला का दाहिनी तरफ़। ब्रह्माण्ड के निचले भाग में इन तीन धारों के द्वारा ही चैतन्यता बहम पहुँचती है। सुन्न स्थान से जो तीन चैतन्य धारें रवाँ हुईं उन्होंने निर्मल चैतन्य-स्थानों के नमूने पर चमकते हुए गोले भी प्रकट किये और चूँकि ये धारें अलग अलग तीन स्थानों से जारी हुई थीं इस लिए यहाँ पर दो के बजाय तीन क़िस्म के गोले ज़ाहिर हुए। इनमें से दो क़िस्में तो सूर्य्य और चन्द्र की सी ख़ासियत रखती हैं (जिनका दफ़ा ८६ में ज़िक्र हुआ है) और तीसरी क़िस्म तारागण कहलाती है। ये तारागण वे सितारे नहीं हैं जिन्हें हम रोज़ाना आसमान पर देखते हैं और जो दर असल चाँद और सूरज ही हैं बल्कि इन तारागण के अन्दर सय्यारों यानी ग्रहों वाला ख़ास्सा क़ायम है।

१५–सुन्न-स्थान के बासियों का बयान ।

चूँकि निर्मल चैतन्य-देश अपने धनियों और बासियों के अलावा खुद भी चैतन्य था इस लिए उस देश के मसाले से जो शरीर तैयार हुए उनमें बाहर मण्डलों से मेल करने के लिए किसी खास बन्दोबस्त की ज़रूरत न थी बल्कि वे शरीर खुद यह काम देते थे और इन शरीरों के अन्दर निवास करने वाली सुरतें उनकी मार-फ़त अपने चारों ओर का भरपूर ज्ञान ले सकती थीं। ब्रह्माण्ड की चोटी के स्थान अर्थात् सुन्न के बासियों का भी कम व बेश ऐसा ही हाल है इस लिए उनको भी हंस कहते हैं अलबत्ता लिङ्ग यानी स्त्री-पुरुष का फ़र्क़ उनके अन्दर किसी क़दर प्रकट है, हरचन्द स्त्री-पुरुष का सा व्यवहार वहाँ पर नहीं है। जिन सुरतों में स्त्री-अङ्ग प्रधान है उनको हंसिनी कहा जाता है और दूसरी सुरतों को हंस।

१६–त्रिकुटी वग़ैरह के बासी और तन्मात्राएँ।

जो मसाला या परमाणु त्रिकुटी से खारिज हुए (देखो दफ़ा ६३) वे बावजूद निहायत सूक्ष्म, निर्मल व शक्ति-मान् होने के ज्ञान-शक्ति से विहीन हैं इस लिए उनसे बने हुए महज़ शरीर बाहरी रचना का ज्ञान लेने के क़ा-बिल न हो सकते थे। चुनांचे उस स्थान में पञ्च ज्ञाने-न्द्रियों को अति सूक्ष्म रूप में रचकर वहाँ के और उससे

नीचे के स्थानों के बासियों के लिए अपने इर्द गिर्द की कायनात (सृष्टि) के साथ तअल्लुक़ क़ायम करने और उसका ज्ञान लेने के द्वारे मुहय्या किये गये । ज्ञानेन्द्रियाँ रचने के लिए सब से लतीफ़ और बारीक परमाणु, जिनका असली नाम तन्मात्रा है, हर एक सुरत के साथ जोड़े गये और वे उस स्थान के अन्दर मौजूद पाँच प्रकार के मसाले (माद्दे) का ज्ञान हासिल करने के द्वारे बने ।

६७–तत्त्वों की तन्मात्राएँ, रूपों की उत्पत्ति और इन्द्रियों के ख़वास ।

आकाश तत्त्व की तन्मात्रा श्रवणेन्द्रिय के अन्दर रक्खी गई और अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी तत्त्वों की तन्मात्राएँ रूप, गन्ध, रस और स्पर्श की इन्द्रियों के अन्दर दाखिल की गईं । चूँकि आकाश तत्त्व माद्दे की सब से सूक्ष्म अवस्था है और उसके अन्दर शक्ति भी बकसरत भरी है इस लिए श्रवण-शक्ति को शक्ति-ज्ञान हासिल करने की ताक़त कहना बेजा न होगा और ज्यों ही कोई शक्ति आकाश तत्त्व के घाट पर पहुँचती है वह फ़ौरन् शब्द-ज्ञान की शक्ल में महसूस होने लगती है । शक्ति-ज्ञान से यहाँ पर हमारी मुराद शक्ति के क्रियावान् धाररूप के अनुभव से है और धाररूप से बाद में जो नतीजा पैदा होता है उससे प्रयोज़न नहीं है । जब शक्ति की धार रवाँ होने पर कोई

केन्द्र क़ायम कर लेती है तो नतीजा यह होता है कि प्रकृति यानी मादे के बिखरे हुए ज़र्रों या परमाणुओं के तरतीब पाने पर रूप क़ायम हो जाते हैं। चूँकि आकाश के परमाणु इस तरीक़े पर तरतीब नहीं पा सकते इस लिए आकाश को रूप से विहीन और रूपवान् होने के नाक़ाबिल ख़्याल किया जाता है। लेकिन इस ख़्याल में किसी क़दर तरमीम की ज़रूरत है। दफ़ा ६३ में हम बयान कर चुके हैं कि त्रिकुटी की रचना होते वक़्त आकाश वहाँ के मसाले की एक अलहदा तह की सूरत में प्रकट हुआ जिसकी वजह से उसका त्रिकुटी के नीचे एक अलहदा मण्डल क़ायम है इस लिए बलिहाज़ उस मण्डल के (मण्डलाकार रूप के) आकाश मजमूई तौर पर रूपहीन नहीं है। रचना के इन्तिज़ाम के अन्दर इस तत्त्व के ज़िम्मे ऊँचे दर्जे की शक्तियों के लिए वाहन यानी सवारी देने का काम सुपुर्द है यानी ऊँचे दर्जे की शक्तियाँ आकाश तत्त्व की मारफ़त नीचे स्थानों में उतरकर आती हैं। आकाश के बाद बाक़ी तत्त्वों में प्रकृति की सब से ज़्यादा सूक्ष्म अवस्था अग्नि है। अग्नि तत्त्व (ताप) के परमाणुओं से रूप की उत्पत्ति हुई है यानी शक्ति आकाश तत्त्व के द्वारा उतरकर (उसके साथ पूरे तौर से तअल्लुक़ रखते हुए लेकिन उसपर कोई असर न डालते हुए) अग्नि तत्त्व के परमाणुओं को तरतीब देती है और रोशनी की धारें, जो

आकाश तत्त्व की मारफ़त चारों तरफ़ फैल रही हैं, उसको दर्शनेन्द्रिय तक पहुँचा कर हमें रूप का ज्ञान दिलाती हैं। रोशनी की धारों के ज़रिये रूप के दर्शनेन्द्रिय तक पहुँचने की कार्रवाई किसी क़दर उसी ढङ्ग पर होती है जैसी कि हवा की मारफ़त अबख़रों के रूप में पानी के एक मुक़ाम से दूसरे मुक़ाम में पहुँचने की निस्बत देखने में आती है। रोशनी से आकाश तत्त्व के सिवाय और सब तत्त्व ख़ारिज होने पर पिण्ड-देश की ख़ालिस बिजली रह जाती है जिसका इन आँखों द्वारा कोई ज्ञान हासिल नहीं हो सकता अलबत्ता सुरत के जगने पर उसके प्रकाश का अनुभव होता है। इस सृष्टि में जितने भी तारागण, सूर्य, बिजली वग़ैरह के प्रकाश हम को नज़र आते हैं उन सब के अन्दर आकाश के परमाणुओं यानी अयनों के अलावा दूसरी क़िस्मों के परमाणु बकसरत मिले रहते हैं और इन दूसरी क़िस्मों के परमाणुओं ही की वजह से (जो ताप-अवस्था में बमूजिब दफ़ा ११ के बयान के विभक्त अवस्था को प्राप्त साधारण परमाणु हुआ करते हैं) प्रकाशों में भेद क़ायम होता है। इस लिए जाहिर है कि दर्शनेन्द्रिय के मुक़ाबिले में श्रवणेन्द्रिय ज़्यादा झीनी (लतीफ़) है और जितने भी शब्द पैदा होते हैं उन सब का गुप्त (अव्यक्त) तौर पर रूप के साथ तअल्लुक़ रहता है। अग्नि तत्त्व के बाद दर्जा वायु

का आता है । जब माद्दा वायु-अवस्था में प्रवेश करता है तो यह नासिका-इन्द्रिय का विषय बन जाता है ।

१८—बाज़ गैस गन्ध से और बाज़ पदार्थ रस से क्यों ख़ाली हैं ।

अब असल मज़मून से थोड़ा सा हटकर हम यह दिखलावेंगे कि बाज़ गैस गन्ध से और बाज़ पदार्थ रस से क्यों ख़ाली हैं । यह बयान किया जा चुका है कि पाँचो तत्त्वों की तन्मात्राएँ एक एक करके पाँच ज्ञानेन्द्रियों के अन्तर्गत क़ायम हैं । चूँकि इन तन्मात्राओं और इनके सम्बन्धी तत्त्वों के घाट एक ही हैं इस लिए जब तक किसी तत्त्व के अन्दर बाहर से दख़ल फ़सल नहीं होता, उस तत्त्व का कोई असर उसकी तन्मात्रा वाली ज्ञानेन्द्रिय पर नहीं पड़ता । यही वजह है कि जिससे अकेला वायु तत्त्व हमारी नासिका-इन्द्रिय पर कोई असर नहीं डाल सकता और न ही कोई ऐसा गैस भी, जो वायु तत्त्व की सी सूक्ष्मता रखता हो, कोई असर पहुँचा सकता है । हम दफ़ा ६७ में बयान कर चुके हैं कि पाँच तत्त्व दर असल परमाणुओं की पाँच क़िस्म की जुदागाना तरतीब का नाम है और यह जो स्थूल अग्नि, जल, वायु वग़ैरह देखने में आते हैं, पाँच तत्त्व नहीं हैं । इस लिए जिस तरह स्वयं यानी अकेला

वायु तत्त्व (जो परमाणुओं की एक क़िस्म की तरतीब है) हमारी नासिका-इन्द्रिय पर कोई असर नहीं पहुँचा सकता उसी तरह और तत्त्व भी (जो परमाणुओं की दूसरी क़िस्म की तरतीबें हैं) अपने मुतअल्लिक़ ज्ञानेन्द्रियों पर स्वयं कोई असर नहीं पहुँचा सकते।

यहाँ पर एक उदाहरण पेश करते हैं ताकि मज़मून ज़्यादा साफ़ हो जावे। देखो, गर्मी यानी ताप-अवस्था जब तक सूक्ष्मता के उस दर्जे को प्राप्त नहीं हो जाती जिसमें परमाणु आकाश तत्त्व के घाट पर कारकुन शक्ति के साथ तअल्लुक़ क़ायम कर सकें उस वक़्त तक गर्मी सिर्फ़ स्थूल शरीर के द्वारा हमारी त्वचा-इन्द्रिय पर असर डालती है और दर्शनेन्द्रिय द्वारा प्रकाश की शक्ल में नज़र नहीं आती लेकिन ज्यों ही ताप-अवस्था को वह गति, जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ, प्राप्त हो जाती है त्यों ही हमारी दर्शनेन्द्रिय के अन्तर में मौजूद तन्मात्रा पर असर पहुँचकर हम को प्रकाश का ज्ञान होने लगता है। खुलासा यह है कि जब पाँच तत्त्वों के अन्दर इस क़िस्म की हरकत आ जाती है कि जिससे उनके सूक्ष्म घाटों तक असर पहुँच जावे तो जो शख़्स यानी ज्ञाता उस वक़्त उस हरकत के दायरे के अन्दर मौजूद होगा उसको ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा वह हरकत शब्द, प्रकाश, गन्ध, रस या स्पर्श में से किसी न किसी के

रूप में महसूस होगी। अक्सर ऐसा भी होता है कि किसी शक्ति से पैदा हो कर एक ही हरकत एक से ज़्यादा ज्ञानेन्द्रियों पर असर डालती है जिससे एक ही वक़्त एक से ज़्यादा इन्द्रियों के विषयों का ज्ञान प्राप्त होता है। मसलन् अगर कहीं पर बारूद फटे तो हमारी श्रवण और दर्शन और बाज़ वक़्त नासिका इन्द्रिय पर भी असर पड़ता है। ज़ाहिरा तौर पर ख़्याल करने से दर्शनेन्द्रिय के मुक़ाबिले में श्रवणेन्द्रिय ज़्यादा स्थूल समझी जाती है लेकिन यह ख़्याल दुरुस्त नहीं है। इसका सुबूत आगे की दफ़ा में पेश करते हैं।

६१—श्रवणेन्द्रिय दर्शनेन्द्रिय की निस्बत ज़्यादा सूक्ष्म है।

हम लोगों को यहाँ पर शब्द का ज्ञान तब होता है जब शक्ति क्रियावती हो और उसकी क्रिया हमारे सुनने के औज़ार यानी कान तक पहुँच जावे। हमारा यह सुनने का औज़ार, जैसा कि देखने में आता है, ठोस, तरल और थोड़े से वायव्य मसाले से मिलकर बना है इस लिए इसपर सिर्फ़ ऐसी शक्ति असर डाल सकती है जो अपनी हरकत ठोस, तरल और वायव्य प्रकृति (माद्दे) के घाट तक पहुँचा सके। मगर यह सब बयान तो उस दौरान का है जिसमें शक्ति का तअल्लुक़ श्रवणेन्द्रिय के स्थूल घाटों

तक महदूद रहता है, लेकिन तमाम शक्तियाँ स्थूल घाटों पर नमूदार होने वाले कार्य्यरूप के अलावा अपने सूक्ष्म रूप भी रखती हैं और, जैसा कि नीचे के बयान से ज़ाहिर होगा, शक्तियों का यही सूक्ष्म रूप हम को शब्द की शक्ल में महसूस होता है।

दफ़ा ८ में ज़िक्र किया गया था कि जन्म-दिन से लेकर बराबर कसरत जारी रहने से हमारे शरीर की मुख़्तलिफ़ शक्तियाँ जग गई हैं और जो कुछ इल्म यानी मानसिक ज्ञान हम को हासिल है वह सब का सब शरीर की मारफ़त ग्रहण किये हुए नक़्शों यानी संस्कारों से प्राप्त हुआ है, इससे ज़ाहिर है कि संस्कार ग्रहण करने वाले सूक्ष्म पर्दे यानी तन्मात्राएँ संस्कारों को अपने तक पहुँचाये जाने के लिए शरीर के बिलकुल आश्रित हैं। चुनांचे जब अव्वल शरीर पर किसी क़िस्म का संस्कार पड़ लेता है तभी कोई तन्मात्रा हरकत में आती है और तभी उस तन्मात्रा वाली ज्ञानेन्द्रिय को उस संस्कार का ज्ञान प्राप्त होता है। इससे नतीजा निकलता है कि जब तक कोई शक्ति हमारी श्रवणेन्द्रिय के शरीरसम्बन्धी मसाले पर अपना असर न डाले उस वक़्त तक हमारी श्रवणेन्द्रिय को उसका मुतलक़ ज्ञान नहीं हो सकता क्योंकि, जैसा पहले कह चुके हैं, हमारे अन्दर श्रवण-शक्ति

क्रियावती ही तब होती है जब शरीर की मारफ़त उस तक कोई असर पहुँचे। श्रवणेन्द्रिय के स्थूल औज़ार (कान) तक शक्ति के पहुँच जाने पर आयन्दा उलटी कार्रवाई शुरू होती है यानी वहाँ से (श्रवणेन्द्रिय के स्थूल घाट से) शक्ति अपने सूक्ष्म रूप से उस इन्द्रिय की तन्मात्रा के अन्दर प्रवेश करती है। शक्ति का वह सूक्ष्म रूप, जिससे वह तन्मात्रा के अन्दर प्रवेश करती है, आगे बयान करते हैं।

यह ऊपर बयान हो चुका है कि जो शक्ति हमारे स्थूल कानों पर अपना असर डालती है वही हम को शब्द की शक्ल में महसूस हो सकती है और चूँकि हमारे स्थूल कान ठोस, तरल और वायव्य मसाले से बने हैं इस लिए ज़ाहिर है कि जो शक्ति स्थूल कानों पर असर डालती है वह दर असल पृथ्वी की माध्याकर्षण-शक्ति (Force of Gravitation) पर असर डालती है क्योंकि स्थूल-प्रकृति इन तीन अवस्थाओं में विशेष करके इस आकर्षण-शक्ति ही के प्रभाव से ठहरी हैं। इस लिए जब कभी स्थूल प्रकृति के इन घाटों में से किसी एक पर शक्ति की हिलोरें वाक़े होती हैं तो पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति की जानिब से प्रतिक्रिया प्रकट होती है और यह प्रतिक्रिया शक्ति की क्रिया (हिलोरों) के सङ्ग सङ्ग चारों तरफ़ फैल जाती है।

मालूम होवे कि शक्ति के सूक्ष्म रूप से हमारी मुराद आकर्षण-शक्ति की इस प्रतिक्रिया ही से थी ।

थोड़ा सा और ग़ौर करने पर मालूम होगा कि इस पृथ्वी की माध्याकर्षण-शक्ति सूर्य्य के पृथ्वी पर आकर्षण होने की वजह से पैदा होती है । सूर्य्य का यह आकर्षण चुम्बक के आकर्षण से किसी क़दर मुशाबह है और पृथ्वी व सूर्य्य के दरमियान जो आकाश फैला है उसके द्वारा यह ज़हूर में आता है । पस मालूम होता है कि आकाश के अन्दर जो शक्ति माध्याकर्षण के रूप में क्रियावती है वह हमारे शब्द-ज्ञान की प्राप्ति के सिलसिले में हमेशा हिस्सा लेती है और इस लिए ऊपर के कुल बयान से यह नतीजा निकालना ग़लत न होगा कि जब शक्ति की हिलोरें पञ्च ज्ञानेन्द्रियों के स्थूल घाटों पर हलचल मचाती हैं तो उनका असर ज्ञानेन्द्रिय तक पहुँचता है वरना ज्ञानेन्द्रियों को उनकी कोई खबर नहीं होती । लेकिन अगर कोई शख्स राधास्वामी-मत के अभ्यास की युक्ति की कमाई करके अपनी सुरत को मामूली घाटों के बजाय ऊँचे स्थानों या चक्रों पर जगावे तो अलबत्ता उसकी ज्ञानेन्द्रियों की तन्मात्राएँ संस्कार लेने के लिए स्थूल शरीर की मोहताज न रहेंगी और अनेक दर्जे की सूक्ष्म हिलोरें, जो संसार में हमेशा चलती रहती हैं, सब की सब उसके ज्ञान में आने लगेंगी । मनुष्यों के अन्दर ऊँचे घाटों से

तअल्लुक़ रखने वाली असाधारण अवस्थाओं में प्रवेश करने पर जो सूक्ष्म शक्तियाँ जग जाती हैं वे इसी तरीक़े से जगा करती हैं। हमारी राय में अब काफ़ी तौर पर वाज़ह हो गया है कि श्रवणेन्द्रिय ऐसी स्थूल नहीं है जैसा कि आम तौर पर ख़्याल किया जाता है।

१००–ब्रह्माण्ड में ज्ञानेन्द्रियों की तय्यारी।

ऊपर की दफ़ात में जो कुछ विचार मुख़्तलिफ़ ज्ञानेन्द्रियों की बनावट और क्रियाओं की निस्बत हुआ है वह सब मनुष्य के स्थूल घाट के पहलू से किया गया है ताकि साधारण तजरुबे में आने वाली बातों के उदाहरण पेश किये जा सकें लेकिन यह सब विचार मुनासिब रद्द व बदल के साथ ब्रह्माण्ड के बासियों की सूक्ष्म ज्ञानेन्द्रियों पर भी घटता है। त्रिकुटी स्थान में ज्ञानेन्द्रियाँ इतनी सूक्ष्म और गुप्त हैं कि वहाँ के बासियों के मुनव्वर यानी चमकते हुए शरीरों में उनका पता मुश्किल से चल सकता है। सहसदलकँवल में ज्ञानेन्द्रियाँ ज़्यादा प्रकट हैं और उसके नीचे के स्थानों में और भी ज़्यादा प्रकट हैं।

१०१–ब्रह्माण्ड के नीचे के मैदान का और ब्रह्माण्ड व पिण्ड की परिक्रमा का बयान।

विष्णु, ब्रह्मा और शिव के स्थानों के नीचे महासुन्न की तरह का एक भारी मैदान है लेकिन यह मैदान

महासुन्न की निस्वत लम्बाई चौड़ाई में बहुत कम है। यहाँ पर कुछ नीचे दर्जे की कायनात यानी सृष्टि भी है और रचना के दूसरे और तीसरे दर्जों के बीच में यह हद्दे फ़ासिल यानी सीमा का काम देता है। इस हद्दे फ़ासिल के सब से नीचे हिस्सों में तीसरे दर्जे यानी पिण्ड की चोटी का स्थान वाक़ै है जिसमें ब्रह्माण्ड देश में दाखिल होने के लिए एक रौज़न यानी छिद्र है, जिसको तीसरा तिल, तृतीय नेत्र और दिव्य चक्षु कहते हैं। इस छिद्र की मारफ़त ब्रह्माण्ड के नीचे हिस्सों का दूर से दर्शन किया जा सकता है और यह बतौर एक सदर दरवाज़े के है जिससे हो कर सुरत यानी जीवात्मा पिण्ड से ब्रह्माण्ड में दाखिल होती है। पिण्ड की चोटी का स्थान, जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ, ब्रह्माण्ड की चोटी के स्थान यानी सुन्न से मिलता जुलता है। पिण्ड-देश का चन्द्रस्थान इसी को कहते हैं और जितने भी स्थान इसके नीचे वाक़ै हैं उन सब को चैतन्यता इसी से पहुँचती है। यह स्थान हमारे सूर्य्य-लोक से परे वाक़ै है और ये दोनों ब्रह्माण्ड के सब से नीचे हिस्से के गिर्द गर्दिश यानी परिक्रमा करते हैं। ब्रह्माण्ड भी कुल का कुल इसी तरीक़े पर निर्मल चैतन्य-देश के गिर्द चक्कर लगाता है लेकिन निर्मल चैतन्य-देश या उसके किसी भाग के ज़िम्मे चक्कर लगाने का क़ज़िया नहीं है। आगे चलकर हम दिखलावेंगे कि रचना के

ये ही दो दर्जे, जिनके ज़िम्मे परिक्रमा करना लगा है, समय पाकर नाश को प्राप्त होते हैं। निर्मल चैतन्य-देश में किसी तरह का रद्द व बदल या मृत्यु नहीं है इस लिए वह स्थान अविनाशी है। ब्रह्माण्ड और पिण्ड की निस्बत जो कुछ ऊपर बयान हुआ वह सिर्फ़ उस एक निज़ाम (System) के मुतअल्लिक़ था जिसमें हमारा सूर्य्य-मण्डल (निज़ाम-शम्सी) वाक़े है। लेकिन कुल ब्रह्माण्ड देश में इस तरह के अनेक निज़ाम वाक़े हैं क्योंकि जो काल व आद्या की धारें सत्तलोक से निकलकर महासुन्न के मैदान में उतरीं उनकी मारफ़त असंख्य ब्रह्म और उनकी अर्द्धाङ्गिनियाँ और ब्रह्माण्ड के धनी समुद्र के पानी के क़तरों की तरह खारिज हुए और इसी तरीक़े पर अनेक सूर्य्य-मण्डल (निज़ाम-शम्सी) जो पिण्ड-देश में नज़राई पड़ते हैं ब्रह्माण्ड देश के हर एक निज़ाम से प्रकट हुए।

१०२–गुणों का प्रकृतियों से मेल और चौरासी धारें।

तीन गुण नीचे उतरते हुए रास्ते में उन पच्चीस प्रकृतियों से, जिनका दफ़ा ९२ में ज़िक्र हुआ, मिले और नीज़ उन्हों ने आपस में संयोग किया और इस तरीक़े से चौरासी मुरक्कब धारें–पचहत्तर धारें प्रकृति की और नौ धारें ख़ालिस गुणों की–तय्यार होकर पिण्ड-देश में उतरीं। इन चौरासी सूक्ष्म धारों ही को चौरासी लक्ष

कहते हैं । पिण्ड-देश की जितनी भी जानदार व बेजान कायनात यानी सृष्टि है सब के शरीर का मसाला और सब की शक्तियाँ इन्हीं चौरासी धारों से बरामद हुईं। पचहत्तर प्रकृति की धारों का इज़हार यहाँ पर मूल पदार्थों (Elements) के भाव में देखने में आता है क्योंकि हर एक के अन्दर बवजह जुदागाना होने शक्ति की धारों के और नीज़ बवजह मुख़्तलिफ़ होने उन आदि-तत्त्वों के, जिनका मसाला उनमें लगा है, अलहदा खसूसियत क़ायम है ।

१०३—पिण्ड-देश में चार खानि की रचना ।

दफ़ा ६७ में यह बयान हुआ था कि आकाश तत्त्व के ज़िम्मे खास कर यही काम है कि शक्ति की धारों के लिए वाहन यानी सवारी का काम दे और यह किसी को मालूम नहीं है कि इसके अलावा वह तत्त्व दूसरे कौन फ़रायज़ अदा करता है। बाक़ी के चार तत्त्व सुरतों के लिए हमारे जैसे सूक्ष्म व स्थूल शरीरों का मसाला बहम पहुचाते हैं । रचना के उस हिस्से में, जो ब्रह्माण्ड देश के तत्त्वों के पाँच मण्डलों से नीचे क़ायम है, जिस क़दर जानदार और बेजान कायनात है वह चार खानि में मुनक़सिम है जिनको जरायुज, अण्डज, स्वेदज और उद्भिज्ज कहते हैं । पहली तीन खानियों

में सिर्फ़ जानदार आते हैं और चौथी खानि में धातुएँ और पृथ्वी से उपजने वाले सब पदार्थ शामिल हैं। जरायुज खानि के शरीरों में अग्नि तत्त्व प्रधान है और बाक़ी तीन खानियों के शरीरों में वायु, जल और पृथ्वी एक एक करके प्रधान हैं। इन खानियों के नामों के अर्थ ये हैं:-(१) जरायुज-जरायु यानी झिल्ली से उत्पन्न होने वाला (२) अण्डज-अण्डे से उत्पन्न होने वाला (३) स्वेदज-स्वेद यानी पसीने या जल से उत्पन्न होने वाला और (४) उद्भिज्ज-पृथ्वी से या पृथ्वी फोड़कर उत्पन्न होने वाला। पिण्ड-देश में जो तारागण और सूर्य्य पैदा किये गये हैं उनके ज़िम्मे विशेष करके वही काम है जो शरीर का रचनात्मक अङ्ग कहलाता है (ऊँचे दर्जे की योनियों में शरीर का जो बोधनात्मक अङ्ग प्रकट होता है वह एक अलहदा बात है), चुनांचे उनका स्थूल मसाला हमारी रगों के केन्द्रों के मसाले से मिलता है और रगों की तरह वे अपने कुल निज़ाम को ताक़त पहुँचाते हैं और उसके जीवन के आधार हैं। इन लोकों के धनी या देवता अपने लोक के स्थूल मसाले के अन्दर निवास नहीं करते बल्कि हर एक लोक के सङ्ग जो सूक्ष्म मण्डल लगा है उसी में उसके देवता का निवास है और जैसे मनुष्य-शरीर के अन्दर रगों के केन्द्र अपने मुतअल्लिक़ गुप्त चैतन्य घाटों (चक्रों) के मातहत हैं वैसे ही

ये लोक भी अपने अपने देवता के मातहत हैं। पिण्ड-देश के सब से नीचे हिस्से के इस क़िस्म के लोकों की चैतन्यता इस क़दर न्यून है कि उनकी रचनात्मक क्रिया बनस्पति-योनि की रचनात्मक क्रिया के समान हो गई है।

१०४—पिण्ड के छः स्थान और उनके धनी।

चौरासी लक्ष धारों के अलावा, जिनका पीछे ज़िक्र हुआ, ज्योति और निरञ्जन की धारें भी पिण्ड-देश में उतरीं। इनके सब से सूक्ष्म स्वरूप का तअल्लुक़ पिण्ड-देश की चोटी के स्थान के धनी के साथ है और बाक़ी दो स्वरूप, जो पहले के मुक़ाबिले में कम सूक्ष्म हैं, नीचे के दो स्थानों के धनी हो रहे हैं। इसी तरह पर विष्णु, ब्रह्मा और शिव की धारें पिण्ड के निचले तीन स्थानों में अलहदा अलहदा ठहरी हुई हैं। मनुष्य-शरीर के अन्दर ज्योति व नारायण की धारें इच्छा और मन की शक्ल में प्रकट हो रही हैं और अंशरूप से शरीर के हृदय-चक्र में क़ायम हैं जहाँ इच्छा और मन की क्रिया प्रकट रूप से जारी है। इनके सूक्ष्मरूप कण्ठ-चक्र और सुरत की बैठक के मुक़ाम यानी आज्ञा-चक्र में क़ायम हैं (देखो दफ़ा १८) लेकिन इन चक्रों में उनकी क्रियाएँ प्रकट नहीं हैं इस लिए सुरत की गुप्त शक्तियाँ जगने ही पर उनका ज्ञान हो सकता है। इसी तरीक़े पर मनुष्य-शरीर के नीचे के तीन चक्रों में

विष्णु, ब्रह्मा और महादेव की शक्तियाँ मौजूद हैं और शरीर के पालन पोषण, सन्तानोत्पत्ति और मल मूत्र वग़ैरह के ख़ारिज करने का काम कर रही हैं। मनुष्य-शरीर के इन छः चक्रों से मुताबिक़त रखने वाले पिण्ड-देश में जो छः स्थान हैं उनके नाम ये हैं:—चन्द्रस्थान, सूर्य्य, पृथ्वी, बृहस्पति, शनि और नेपटयून (Neptune) यानी वरुण तारा। इनके अलावा जो दूसरे ग्रह मशहूर हैं वे दर असल उपग्रह हैं और अपने नज़दीक के ग्रहों के सहायक हैं। मनुष्य-शरीर के रगमण्डल के अन्दर भी मुख्य केन्द्रों के क़रीब इस नमूने के छोटे केन्द्र काम कर रहे हैं। जैसे मनुष्य-शरीर में नीचे के तीन चक्रों का सेट ऊपर के तीन चक्रों के सेट से अलहदा बना है इसी तरह पिण्ड-देश के निचले तीन स्थान भी ऊपर के तीन स्थानों से बहुत कुछ स्वतन्त्र हैं। बृहस्पति ग्रह भी, जो कि विष्णु की अंश है, अपने धनी की तरह सूर्य्य से कम व बेश स्वतन्त्र है। चन्द्र-स्थान से जो चैतन्य-धार उतरकर पिण्ड के सब से निचले स्थान तक जाती है वह दोनों सेटों को सूत्रबद्ध करती है। चूँकि चन्द्र-स्थान और मनुष्य की सुरत का घाट एक ही है इस लिए ज्योतिषी लोग इसके जरिये मनुष्यों की राशि क़ायम करके उनके स्वाभाविक गुण मालूम किया करते हैं। यह चन्द्र-स्थान ही वह भण्डार है जहाँ से पिण्ड-देश की तमाम जानदार कायनात को आदि में चैतन्यता बहम पहुँची और

जहाँ से एक दूसरी धार, जिसको जड़-चैतन्य (जड़-प्रकृति की जान) कहते हैं, पिण्ड-देश के स्थूल मसाले में उतर कर आती है। बिजली-शक्ति, जो पृथ्वी पर तजरुबे में आती है, इस जड़-चैतन्य धार ही का इज़हार है। सन्तों की बाणी में इस जड़-चैतन्य धार को बिजली के नाम से मौसूम किया गया है। चन्द्र-स्थान के नीचे तत्त्वों की पाँच धारों के सूक्ष्म मण्डल क़ायम हैं और अलहदा अलहदा रङ्ग लिए हुए चमक रहे हैं। नीचे लिखी हुई कड़ी में इसी मज़मून को अदा किया गया है:-

"पाँच रंग निरखे तत सारा। चमक बीजली चन्द्र निहारा।
फोड़ा तिल का द्वारा हो।"

यानी मैंने सार तत्त्वों के पाँच रङ्ग देखे और चन्द्र-स्थान की बिजली की चमक को निहारा और बाद में तीसरे तिल यानी ब्रह्माण्ड देश के दरवाज़े को तोड़ डाला (देखो दफ़ा १०१)।

१०५—पिण्ड-देश के बासी।

पिण्ड-देश के बासियों के शरीर उनके निवास-स्थान के मसाले से रचे गये हैं। मसलन् इस पृथ्वी के जानदारों के शरीर का मसाला पृथ्वी के स्थूल व सूक्ष्म मसाले ही से लिया गया है। सूर्य्यलोक और चन्द्र-स्थान, जो पृथ्वी से ऊँचे दर्जे पर वाक़े हैं, पृथ्वी की निस्बत बहुत

ज़्यादा सूक्ष्म व बारीक मसाले से रचे गये हैं और इसी लिए वे निहायत रोशन हैं और पृथ्वी के मुक़ाबिले में उनके अन्दर चैतन्यता और शक्ति विशेष है और यही वजह है कि जिससे इन लोकों के बासियों के शरीर हम लोगों यानी पृथ्वी के बासियों की निस्बत ज़्यादा सूक्ष्म और रोशन हैं। उनका जीवन भी यहाँ के मुक़ाबिले में बहुत ज़्यादा सुखदायक है । पाँच तत्त्व और चौरासी धारें, जिनका दफ़ा १०२ में ज़िक्र हुआ, ब्रह्माण्ड से पिण्ड-देश के अन्दर उतरने में दर्जे बदर्जे स्थूल होती चली आई हैं। चन्द्र-स्थान और सूर्य्यलोक में ये धारें बहुत सूक्ष्म हैं लेकिन इन-के अलावा दूसरे स्थानों में, ज्यों ज्यों चन्द्र-स्थान से दूरी होती गई, स्थूलता आती गई । पृथ्वी लोक के तजरुबे की बुनियाद पर हमलोग क़ुदरती तौर पर ख़्याल कर सकते हैं कि सब लोकों में ठोस, तरल और वायव्य मसाले के अन्दर ही जीव बसते हैं लेकिन यह ख़्याल ठीक नहीं है क्योंकि हर एक लोक के सूक्ष्म मसाले के अन्दर भी जीव बसते हैं, जिनके शरीर मसाले के लिहाज़ से सूक्ष्म रहते हैं। मनुष्य के इस पृथ्वी पर तीन शरीर हैं जिनको स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर कहते हैं और ये तीन शरीर गोया ब्रह्म के तीन शरीरों की छाया हैं । इस लिए हमारा यह बयान कि अकेली सूक्ष्म देह में भी जीव रह सकते हैं कथन मात्र नहीं है क्योंकि स्थूल शरीर के अन्दर रहते

हुए भी जीव का सूक्ष्म शरीर मौजूद रहता है। जब तक हम स्थूल घाट पर बरतते हैं उस वक़्त तक हमारा सूक्ष्म शरीर कम व बेश अचेत रहता है लेकिन जब हम स्वप्न, सकूते वग़ैरह की अवस्थाओं में प्रवेश करते हैं तो उस वक़्त वह सचेत हो जाता है। नीज़ प्रेत-योनि में, जिसकी निस्बत अब किसी को शुबह नहीं रहा है और जिसमें हालत मनुष्य-योनि के बरअक्स रहती है, सूक्ष्म शरीर हर वक़्त कारकुन रहता है और स्थूल शरीर मौक़ा बमौक़ा प्रकट हुआ करता है। प्रेत-योनि से किसी क़दर मिलते जुलते ढंग पर पिण्ड-देश के सब लोकों के सूक्ष्म मण्डलों में जीव निवास करते हैं।

यह बयान करने की चन्दाँ ज़रूरत नहीं है कि पृथ्वी से नीचे के स्थानों में जो जीव बसते हैं वे पृथ्वी के वासियों की निस्बत बहुत नीचा दर्जा रखते हैं। प्रेत-योनि के जीव हमेशा संसारी बासनाओं और बन्धनों के कारण इस पृथ्वी पर अपना इज़हार किया करते हैं और उनकी बासनाओं और बन्धनों के मुआफ़िक उनकी क्रियाएँ फ़ायदा या नुक़सान पहुँचाने वाली हुआ करती हैं। चूँकि नीचे के तीन चक्रों के ज़िम्मे ज़्यादातर ऐसे काम हैं जो दोनों मनुष्य और पशु योनियों में शामिलात हैं इस लिए उनकी क्रियाओं से अदना ख़्यालात और जज़्बात की बू आती है और ऊँचे दर्जे की बासनाओं व ख़्यालात से उनका

क़तई वास्ता नहीं है। चुनांचे निचले तीन स्थानों के बासी भी ज़्यादातर पशुओं की सी हरकतें करते हैं और वहाँ के सूक्ष्म शरीर वाले जीव दुष्ट स्वभाव वाले और अमूमन् बदकार हैं। उनके सुख और भोग भी बहुत अदना क़िस्म के हैं जिनका मनुष्यों के सुखों और भोगों से किसी हालत में मुक़ाबिला नहीं हो सकता। इन सूक्ष्म शरीर वाले जीवों की ख़सलत कम व बेश नरक के जीवों की सी है।

१०६—नरक लोक और वहाँ के बासी ।

पिण्ड देश के सब से नीचे स्थान के तले रचना से पहले के ऋणात्मक ध्रुव यानी न्यून अङ्ग का असली सिरा वाक़े है। इस मुक़ाम में कोई बाक़ायदा रचना नहीं है और इसको चैतन्यता की शून्यता का भारी मैदान कहना चाहिए। जो कुछ भी सृष्टि वहाँ पर है वह बहुत घटिया दर्जे की है और महासुन्न की व ब्रह्माण्ड के सब से निचले हिस्से की रचना से कुछ दूर पार की मुशाबहत रखती है। इस घटिया दर्जे की सृष्टि ही को नरक लोक कहते हैं और यहाँ पर दुख व क्लेश की भरमार है। नरक के जीवों के अन्दर निहायत ही बुरी वृत्तियाँ क़ायम हैं और जो कोई जीव ऊपर के स्थानों से इस दण्ड और दुरुस्ती के लोक में क़िस्मत का मारा हुआ पहुँच जाता है उसकी वे हमेशा दुर्गति करते रहते हैं।

यहाँ पर रचना की तरतीब का बयान पूरा हो जाता है। यह बयान हरचन्द नामुकम्मल है लेकिन इसमें रचना की आदि अवस्था से लेकर, जो निर्मल चैतन्य-देश में है, अन्त अवस्था तक का, जो नरक लोक में है, ज़िक्र आगया है। रचना के बड़े दर्जों की उत्पत्ति का बयान करते वक़्त कुल रचना के इन्तिज़ाम के मुतअल्लिक़ भी बहुत कुछ तफ़सील में ज़िक्र होगया है। अब सिर्फ़ उस आम बन्दोबस्त की शरह करनी बाक़ी रह जाती है कि जिसकी रू से तीनों बड़े दर्जों का परस्पर सम्बन्ध क़ायम है और जिससे हर एक का काम चल रहा है।

१०७–तीन बड़े दर्जों के मुतअल्लिक़ आम इन्तिज़ाम।

रचना के पहले दर्जे (निर्मल चैतन्य-देश) के स्थानों के इन्तिज़ाम की निस्बत यहाँ पर थोड़ी ही शरह दरकार है। ये सब स्थान अपार कुल्ल-मालिक के सम्मुख बमंज़िले उसके निज देश के वाक़े हैं। रचना होते वक़्त सुरत व शब्द की धारों ने उन स्थानों के अन्दर इस क़दर चैतन्यता (रूहानियत) भर दी थी कि आयन्दा उनको किसी मदद की ज़रूरत नहीं रही। प्रथम रचनात्मक वेग के ख़त्म होने पर रचना की शुरूआत से पहले ज़माने की जो शेष मलीनता इस देश में रह गई थी वह भी सब दूसरे रचनात्मक वेग के जारी होने पर ख़ारिज कर दी गई

और जैसा कि ऊपर कहा गया अब निर्मल चैतन्य-देश के सब स्थान हर तरह से मुकम्मल हैं और काल के प्रभाव यानी वक़्त के गुजरने से उनमें किसी तरह के रद्द व बदल या क़मी व वेशी की गुंजायश मुमकिन नहीं है। वसअत और दराज़ी निर्मल चैतन्य-देश की बमुक़ाबिले दूसरे दो दर्जों के क़यास से बाहर है। दूसरे दो दर्जों का हाल निर्मल चैतन्य-देश का सा नहीं है। इनके अन्दर चैतन्यता ऐसी मुकम्मल नहीं है कि बग़ैर बाहरी मदद के वे अपना काम चला सकें। चुनांचे ब्रह्माण्ड के हर एक हिस्से को और नीज़ उसके असंख्य ब्रह्म और आद्याओं को बारी बारी से ज़रूरी मदद हासिल करने के लिए निर्मल चैतन्य-देश के सम्मुख लाया जाता है और यही वजह है कि जिससे ब्रह्माण्ड सत्तलोक के गिर्द चक्कर लगाता है। चक्कर लगाने के दौरान में ब्रह्माण्ड से नीचे के देश यानी पिण्ड अपनी कशिश के ज़ोर से ब्रह्माण्ड को सत्तलोक से मुनासिब फ़ासले पर ठहराये रहते हैं। ब्रह्माण्ड व निर्मल चैतन्य-देश का सा यह बाहमी तअल्लुक़, जो अभी बयान हुआ, पिण्ड-देश व ब्रह्माण्ड के दरमियान भी क़ायम है यानी पिण्ड-देश भी ब्रह्माण्ड के गिर्द घूमता है और ब्रह्माण्ड से मदद हासिल करता है। लेकिन ब्रह्माण्ड और पिण्ड-देश का रुख़ बिलकुल न्यून अङ्ग के अन्तिम सिरे की जानिब है क्योंकि ब्रह्माण्ड रचना से पहले के मध्य-देश (Neutral Zone) के उस हिस्से में

बाक़ी है जो आदि न्यून अङ्ग से सटा हुआ था (देखो दफ़ा ६१)। न्यून अङ्ग के आख़िरी सिरे की जानिब इस लगातार झुकाव के कारण ब्रह्माण्ड से चैतन्यता नीचे की जानिब बह रही है जिसको न्यून अङ्ग के निचले स्थान, जो बालू के समान खुश्क हैं, बड़े शौक़ के साथ जज़्ब कर रहे हैं। लेकिन रचना के पहले से इन स्थानों की बनावट इस क़िस्म की है कि ये अपनी हैसियत से बढ़ की चैतन्यता अर्से तक अपने अन्दर नहीं रख सकते । इस लिए जो चैतन्यता ब्रह्माण्ड से लगातार उतरकर जमा होती है वह ऊपर की जानिब सूक्ष्मरूप में उड़ने लगती है यानी उसकी धार ऊपर की जानिब बहने लगती है जिससे जीव-सुधार के सिलसिले में ख़ास कर पिण्ड-देश को भारी फ़ायदा हासिल होता है क्योंकि नरक लोक और पिण्ड-देश के निचले स्थानों के जीव उसकी मारफ़त ऊँचे स्थानों पर चढ़ आते हैं । मगर चूँकि यह धार पिण्ड-देश की चोटी के स्थान से परे नहीं जा सकती इस लिए इसकी मदद से जीव पिण्ड की चोटी यानी चन्द्र-स्थान ही तक पहुँच सकते हैं । यहाँ पहुँचने पर इस धार का मेल नीचे रुख़ वाली धार से होने पर एक चक्कर ख़त्म होकर दूसरा चक्कर शुरू होता है । इसी चक्कर को चौरासी का चक्कर कहते हैं । मालूम होवे कि कोई भी जीव इस चक्कर से बाहर नहीं निकल सकता जब तक कि जीव से परे के

स्थानों में रसाई हासिल करने का साधन खास तौर पर न कराया जावे । इस दफ़ा में जो कुछ बयान हुआ है वह कुल ब्रह्माण्ड और कुल पिण्ड-देश की निस्बत मजमूई तौर पर है लेकिन अब हम इन दो दर्जों के एक एक जुज़ यानी एक ब्रह्माण्ड और एक पिण्ड को निगाह में रखकर उनके मज़ीद हालात बयान करेंगे ।

१०८—महाप्रलय और प्रलय का बयान ।

जब कोई एक ब्रह्माण्ड सत्तदेश के गिर्द अपना लम्बा चक्कर ख़त्म कर लेता है (जिसके दौरान में अपने पिण्ड-देशों को मदद पहुँचाने से उसकी चैतन्यता बहुत कुछ क्षीण हो जाती है) तो यह सत्तलोक के क़रीबतरीन् आ जाता है यानी दोनों सम्मुख हो जाते हैं । जिसका नतीजा यह होता है कि सत्तलोक के आकर्षण से यह ब्रह्माण्ड मय अपने पिण्ड-देशों के ऊपर की जानिब खिंचकर कम व बेश अपनी आदि अवस्था में उलट जाता है । इस उलटने की क्रिया को महाप्रलय कहते हैं । महाप्रलय से जो दशा ज़हूर में आती है वह उस वक़्त तक क़ायम रहती है जब तक कि ब्रह्माण्ड में दोबारा सृष्टि रचने के लिए काफ़ी चैतन्यता नहीं आ जाती । काफ़ी चैतन्यता के हासिल होने पर ब्रह्माण्ड और उसके पिण्डों की रचना पहले की तरह दोबारा ज़ाहिर होती है । पिण्ड-देश का प्रलय भी

ब्रह्माण्ड के ढंग पर होता है लेकिन पिण्ड-प्रलय से ब्रह्माण्ड पर कोई असर नहीं पड़ता। प्रलय के बाद ब्रह्माण्ड की तरह पिण्ड-देश भी दोबारा रचे जाते हैं। पिण्ड-देश के नाश होने की क्रिया को प्रलय कहते हैं।

१०९—मनुष्य के अलावा और जीवों के शरीर की बनावट।

रचना में चोटी के मुक़ाम से लेकर सब से नीचे स्थान तक मनुष्य-शरीर छोड़कर जितनी भी देहें हैं सब के अन्दर यह इन्तिज़ाम है कि उनमें उस दर्जे के मुतअल्लिक़, जिसमें उनका निवास-स्थान वाक़े है, सिर्फ़ तीन चक्र कारकुन रहते हैं और बाक़ी के तीन चक्र चिह्न मात्र क़ायम रहते हैं जिनको किसी तरह से जगाया नहीं जा सकता और न ही उनकी मारफ़त आलमे कबीर के स्थानों से कोई तअल्लुक़ पैदा किया जा सकता है। अलावा उस बड़े दर्जे के कि जिससे किसी देह का तअल्लुक़ है दूसरे बड़े दर्जों के स्थानों का, चाहे वे ऊपर के हों या नीचे के, उस देह में निशान भी नहीं होता। मसलन् सब से ऊपर के तीन स्थानों यानी राधास्वामी-धाम, अगम और अलख के बासियों के इन तीन स्थानों से मुताबिक़त रखने वाले तीन ग़िलाफ़ या शरीर होते हैं और जिस स्थान का कोई बासी है उसके अन्दर उस स्थान से मुताबिक़त रखने वाला ग़िलाफ़ या शरीर सब से ज़्यादा

कारकुन रहता है। बाक़ी के दो शरीर सिर्फ़ कारकुन शरीर के मातहत रहते हैं लेकिन वे बिलकुल बे-मसरफ़ नहीं होते। अनामी, सत्तलोक और भँवरगुफा के तीन स्थान उन बासियों के सब से बाहर के ग़िलाफ़ के सब से नीचे हिस्से में एक ही मुक़ाम पर महज़ नुक़्ते की शक्ल में क़ायम रहते हैं और ये किसी तरह उन बासियों के लिए कारआमद नहीं होते क्योंकि निर्मल चैतन्य-देश के ऊँचे स्थानों के बासी बवजह अपनी क़ुदरती बनावट के अपने स्थान के पूर्णानन्द में इस क़दर मग्न व सरशार रहते हैं कि उनके तईं निचले स्थानों में उतरने के लिए कोई गुंजायश ही नहीं रहती। नीज़ वे अपने स्थान से ऊँचे मुक़ामों में चढ़ भी नहीं सकते क्यों-कि रचना प्रकट होने के सिलसिले में ज़ाती चैतन्यता के लिहाज़ से जिसको जहाँ पर बास मिला है उसको वहीं सदा रहना पड़ता है। मालूम होवे कि निर्मल चैतन्य-देश के बासियों वाला इन्तिज़ाम ब्रह्माण्ड के बासियों के अन्दर भी मौजूद है अलबत्ता पिण्ड-देश में ऊपर की जानिब रुख़ वाली धार पिण्ड के बासियों को हर देह के बदलने पर ऊपर की जानिब चढ़ाती है जिससे वे चोटी के मुक़ाम यानी चन्द्र-स्थान तक पहुँच सकते हैं और चूँकि नीचे यानी पिण्ड-देश में उतरने वाली ब्रह्माण्ड की धार का महाप्रलय की आमद तक ऊपर

की जानिब रुख नहीं बदलता इस लिए ब्रह्माण्ड के बहुत से वासी इस धार की मारफ़त पिण्ड-देश के स्थानों में उतर आते हैं।

११०—ब्रह्मपुरुष और कुल्ल-मालिक के अवतार।

ब्रह्मपुरुष को अपने देश के ऐसे वासियों को, जो ऊपर के बयान के बमूजिब नीचे स्थानों में उतर आते हैं, वापिस ले जाने की गरज़ से और नीज़ पिण्ड-देश की दशा के सुधारने के मतलब से अक्सर इस पृथ्वी पर अवतार धारण करना पड़ता है। कभी कभी ब्रह्मपुरुष के निज पुत्र व पैग़म्बर भी यानी ऐसी सुरतें, जिनकी शक्ति ब्रह्मपुरुष अपनी चैतन्यता से ख़ास तौर पर जगा देता है, इसी मतलब से संसार में भेजी जाती हैं। इसी तौर पर सत्-करतार भी जो चैतन्य-शक्ति का अपार सोतपोत है, जो अगम्य है और जो सब से ऊँचे और अनन्त चैतन्य-धाम का धनी है, अवतार धारण फ़रमाता है। उसकी पृथ्वी पर तशरीफ़आवरी उस वक़्त होती है जब यह त्रिलोकी निर्मल चैतन्य-देश के सम्मुख आ जाती है। ऐसे मुबारक अवसर पर निर्मल चैतन्य-देश से जो भारी चैतन्यता उतर-कर आती है उसका कुछ वार पार नहीं है और निर्मल चैतन्य-देश के नीचे की कुल रचना उससे फ़ैज़याब होती है। इसी समय में सब जीवों को अवसर उस आध्यात्मिक

शिक्षा के हासिल करने का मिलता है जिसके प्रताप से वे सच्चे कुल्ल-मालिक के देश और निज महल में बास पा सकते हैं। कुल्ल-मालिक की आमद से सब से ऊँचे दर्जे की चैतन्यता ब्रह्माण्ड व पिण्ड दोनों में भर जाती है और एक धार ऊपर की जानिब रुख़ वाली क़ायम हो जाती है। यह धार ही वह पन्थ या मार्ग है जिसपर चलकर प्रेमीजन रचना के पहले दर्जे यानी निर्मल चैतन्य-देश में रसाई हासिल करते हैं और अमर अविनाशी आनन्द को प्राप्त होते हैं । कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की तशरीफ़आवरी के सुनहले मौक़े का ऊँचे स्थानों के बासी, ख़ास कर ब्रह्माण्ड के रहने वाले, अक्सर फ़ायदा उठाते हैं और उनकी सवारी के हमरकाब इस संसार में उतर आते हैं। संसार में ये ही जीव सत्तलोक और उसके परे के धामों की चैतन्यता का बीज ग्रहण करने के लिए सब से ज़्यादा अधिकारी होते हैं जिसके बग़ैर वे निर्मल चैतन्य-देश की तरफ़ रुख़ वाली चैतन्य-धार पर चढ़ने के क़ाबिल नहीं हो सकते। ऐसे जीवों को अभ्यास की युक्ति की कमाई निहायत रसीली मालूम होती है और उनका अभ्यास हमेशा दुरुस्ती से बन पड़ता है । मालूम होवे कि इस तरीक़े से सत्तलोक में पहुँचने का इन्तिज़ाम सिर्फ़ मनुष्य-योनि के लिए महदूद नहीं है बल्कि ऊँचे दर्जे की चैतन्यता का बीज पिण्ड-देश के मुख़्तलिफ़ स्थानों के सभी अधिकारी जीवों के

अन्दर बोया जाता है चाहे वे मनुष्य-योनि में हों या किसी और योनि में। रफ़्ता रफ़्ता इन सब के अन्दर राधास्वामी दयाल की बतलाई हुई अभ्यास की युक्ति कमाने के लिए मुनासिब आत्म-बल और शक्ति पैदा हो जाती है और बिलआख़िर ये भी सच्ची मुक्ति और अविनाशी गति के भागी हो जाते हैं। सन्तसुरतें, जिनका दफ़ा ५२ में ज़िक्र हुआ, राधास्वामी दयाल के निज पुत्र होती हैं क्योंकि इनका चैतन्य जौहर उन्हीं का अंश होता है। त्रिलोकी के निर्मल चैतन्य-देश के सम्मुख आने के मुबारक अवसर पर सन्तसुरतें भी इस संसार में अक्सर तशरीफ़ लाती हैं और यहाँ आकर वे कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल की तरह दया की दात और उद्धार की कार्रवाई का सिल-सिला जारी फ़रमाती हैं। जब त्रिलोकी के सम्मुख रहने का समय ख़त्म होने पर आता है तो हस्ब बयान दफ़ा १०८ के महाप्रलय हो जाता है और उस वक़्त तक उद्धार व जीवों को चैतन्यता बख़्शने की कार्रवाई भी मुकम्मल हो चुकती है।

१११—मनुष्य-शरीर रचना का एक छोटा नमूना है जिसमें रहकर रूहानी तरक़्क़ी बख़ूबी हो सकती है।

मनुष्य-शरीर के छओ चक्र, मूलाधार से लेकर आज्ञा-चक्र तक जो दोनों आँखों के मध्य स्थान में वाक़े है, सब

के सब कारकुन रहते हैं इस लिए मनुष्य-शरीर के अन्दर पिण्ड-देश के छओ घाटों का नमूना कारकुन रूप में मौजूद है । चूँकि मनुष्य का बास पृथ्वी पर है, जो पिण्ड-देश के ऊपर के तीन स्थानों में सब से निचला स्थान है, इस लिए आम क़ायदे के बमूजिब, जो सभी जीवों पर घटता है, मनुष्य शरीर के अन्दर सिर्फ़ ऊपर के तीन चक्र क्रियावान यानी कारकुन होने चाहिएँ । मगर बवजह इसके कि ब्रह्माण्ड से और नीज़ चन्द्र-स्थान व सूर्य्यलोक से जो धारें पृथ्वी पर आती हैं उनका वेग यहाँ पर निहायत ज़बरदस्त हो रहा है, मनुष्य-शरीर के नीचे के तीन चक्र भी, जो पिण्ड-देश के निचले तीन स्थानों से मुताबिक़त रखते हैं, आम क़ायदे के ख़िलाफ़ (जो ब्रह्माण्ड और निर्मल चैतन्य-देश में रायज है) कारकुन हो रहे हैं । इस वजह से पृथ्वी के घाट पर मनुष्यों और पशुओं दोनों के अन्दर नीचे के तीन चक्र बहुत ज़्यादा जगे हुए हैं । मनुष्य-शरीर में, जो पृथ्वी के दूसरे जानदारों की निस्बत बहुत बढ़कर चैतन्य है यानी जो दूसरे जीवों की निस्बत बलिहाज़ रूहानियत के निहायत अफ़ज़ल है, ऊपर के तीन चक्र नीचे के तीन चक्रों को चैतन्यता व ताक़त देने की वजह से इतने कमज़ोर यानी चैतन्यता से हीन नहीं हो गये हैं कि वे ज़्यादा शिथिल हो जावें । दूसरी योनियों में अलबत्ता यह सूरत नहीं रही है । चूँकि उनकी

चैतन्यता कम दर्जे की है इस लिए नीचे की जानिब बहाव ने उनके ऊपर के चक्रों की चैतन्यता को इस क़दर क्षीण कर दिया है कि उनकी मानसिक शक्तियाँ और ख़ास कर विचार-शक्ति बहुत ही बिगड़ गई है। बहुत से जानवरों का तो हृदय-चक्र ही उनकी सुरत की बैठक का मुक़ाम हो रहा है जिससे वे दिमाग़ के निकाल देने पर भी बराबर ज़िन्दा रहते हैं। नीचे की जानिब धार का बहाव, जिसका अभी ज़िक्र हुआ, यहाँ पर निहायत ही प्रबल वेग के साथ जारी है और किसी जीव की मजाल नहीं है कि उसको उलट सके जब तक कि वह उन तमाम अङ्गों को, जो उस धार से सरसब्ज़ हो रहे हैं, कम व बेश दमन न कर ले और संसार में व्यवहार करते वक़्त लगातार निगहदाश्त इस बात की न रक्खे कि इन अङ्गों में बर्ताव किसी हालत में बेमतलब या नामुनासिब तौर पर न होने पावे। हमारे ऊपर के बयान से यह ज़ाहिर है कि मनुष्य-शरीर के अन्दर ब्रह्माण्ड के छः स्थानों का प्रति-बिम्ब कारकुन रूप में मौजूद है और दफ़ाजात २३ व २४ में दिखलाया गया है कि इस प्रतिबिम्ब के ग्रहण करने का यन्त्र यानी आला मनुष्य के दिमाग़ के अन्दर क़ायम है और यह भी बयान किया गया है कि मनुष्य के दिमाग़ के अन्दर जो छिद्र मौजूद हैं उनकी मारफ़त बवजह इसके कि ब्रह्माण्ड के स्थानों का प्रतिबिम्ब उनके द्वारा आने से उनके अन्दर

ब्रह्माण्ड की शक्तियाँ क़ायम हैं मनुष्य की सुरत मुना-सिब साधन करने पर ब्रह्माण्ड देश में रसाई हासिल कर सकती है और चूँकि ब्रह्माण्ड खुद निर्मल चैतन्य-देश की छाया है इस लिए जो धारें मनुष्य-शरीर के अन्दर ब्रह्माण्ड के स्थानों का प्रतिबिम्ब पैदा करती हैं उनके अन्दर निर्मल चैतन्य-देश की छाया का असर मौजूद रहता है जिसकी वजह से मनुष्य के दिमाग़ के अन्दर निर्मल चैतन्य-देश के स्थानों की भी छाया मौजूद है और निर्मल चैतन्य-देश से तअल्लुक़ पैदा करने और उसमें रसाई हासिल करने के लिए छिद्र बने हैं। पस नतीजा निकलता है कि मनुष्य को अपने निवास-स्थान की खुसूसियत और ज़ाती चै-तन्यता की विशेषता की बदौलत एक अलग सृष्टि प्राप्त है जिसके अन्दर रचना के कुल स्थानों के नमूने चैतन्य-शक्ति के निज भण्डार से लेकर न्यून अङ्ग के सब से नीचे सृष्टि-विहीन (अचेत) सिरे तक के मौजूद हैं और नीज़ जिसके अन्दर ऐसे छिद्र और गुप्त शक्तियाँ क़ायम हैं कि जिनकी मारफ़त मनुष्य की सुरत ऊँचे से ऊँचे मुक़ाम तक पहुँच सकती है। इस लिए मनुष्य-शरीर छोटे पैमाने पर आलमे कबीर का सच्चा नमूना है और इस अनोखी दौलत ही की वजह से मनुष्य को देवताओं और ब्रह्माण्ड के वासियों से अफ़ज़ल गिना जाता है और यही खास वजह है कि जिससे सच्चे कुल्ल-

मालिक राधास्वामी दयाल और उनके प्यारे निज पुत्रों यानी सन्तसुरतों ने और ब्रह्मपुरुष और उसकी कलाओं ने इस पृथ्वी पर मनुष्य-शरीर ही धारण फ़रमाया। ब्रह्माण्ड देश के बासियों को भी, जब उनके अन्दर चाह निर्मल चैतन्य-स्थानों में बास पाने के लिए जगती है, मनुष्य-शरीर धारण करना पड़ता है (जिसके लिए सिर्फ़ पृथ्वी ही के घाट पर इन्तिज़ाम है) क्योंकि इस मुकम्मल आलमे सग़ीर के अन्दर ही सन्तों के अभ्यास की बतलाई हुई युक्ति की कमाई हो सकती है। सन्त-सुरतें अक्सर ब्रह्माण्ड के मुख़्तलिफ़ स्थानों में वहाँ के बासियों को निर्मल चैतन्य-देश और उसके आनन्द की ख़बर जनाने के लिए जाया करती हैं और चूँकि वहाँ के बासी बहुत निर्मल हैं और विशेष चैतन्यता रखते हैं इस लिए उनको सन्तों का उपदेश समझने में चन्दाँ दिक़्क़त नहीं होती और उनके अन्दर जल्द ही शौक़ निर्मल चैतन्य-देश में रसाई हासिल करने का पैदा हो जाता है। जब यह शौक़ उनका काफ़ी तेज़ हो जाता है तो वे मनुष्य-शरीर में उतर आते हैं। ब्रह्माण्ड देश का आनन्द ऐसा ज़बरदस्त और लुभाने वाला है कि वहाँ के बासियों के अन्दर केवल ज़्यादा ऊँचे दर्जे के चैतन्य-देश का सन्देश मिलने ही से उस देश को छोड़-कर ऊपर जाने का शौक़ पैदा हो सकता है।

११२—पृथ्वी पर मनुष्य और दूसरी योनियों के जीव कहाँ से आते हैं।

ब्रह्माण्ड के बासियों की उम्र बहुत दराज़ होती है और ज़्यादातर वे लोग महाप्रलय के समय ब्रह्माण्ड के नाश होने तक बराबर ज़िन्दा रहते हैं। यह हम ज़िक्र कर चुके हैं कि ब्रह्माण्ड से नीचे की जानिब रुख़ वाली एक धार पिण्ड में उतर कर आती है जिसकी मारफ़त ब्रह्माण्ड के निचले स्थानों के बहुत से और कुछ एक ऊपर के स्थानों के बासी पिण्ड-देश में चले आते हैं। पृथ्वी पर उतरकर वे आम तौर पर मनुष्य-शरीर ही धारण करते हैं क्योंकि इसी के अन्दर रहकर वे मुनासिब साधन कर के ब्रह्माण्ड और उसके परे के स्थानों में पहुँच सकते हैं और नीज़ इस लिए कि नीचे रुख़ वाली धार निचले स्थानों में उतरने से पहले अव्वल ठेका पृथ्वी ही पर लेती है। लेकिन मालूम होवे कि इस धार की मारफ़त आने वाले ब्रह्माण्ड के बासियों की तादाद ज़्यादा नहीं होती और पृथ्वी पर ज़्यादातर पिण्ड-देश के मुख़्तलिफ़ स्थानों ही के जीव जन्म लेते हैं।

दफ़ा १०५ से मालूम होगा कि पिण्ड-देश के सब स्थानों के गिर्द अलग अलग अग्नि और आकाश तत्त्वों के सूक्ष्म मण्डल क़ायम हैं जिनके अन्दर जीव

बसते हैं और जिनकी वासनाएँ और वृत्तियाँ उन स्थानों के पृथ्वी, जल और वायु मण्डलों में रहने वालों की वासनाओं और वृत्तियों से मिलती जुलती हैं और जिनके ख़्यालात बोल चाल और रोज़मर्रा के व्यवहार भी आख़िरुज़्ज़िक्र जीवों के ख़्यालात वग़ैरह से मिलते जुलते हैं। सूक्ष्म मण्डलों के बासी अपनी उम्र के ख़त्म होने पर अक्सर अपने स्थान के मुतअल्लिक़ स्थूल मण्डलों में जन्म लेते हैं। सूक्ष्म मण्डलों में मनुष्य-शरीर से मुशाबहत रखने वाले जीवों के अलावा पशु-वृत्ति और पशुयोनि वाले जीव भी बसते हैं। चुनांचे इस पृथ्वी पर जो बहुत सी क़िस्म के मनुष्य और पशु देखने में आते हैं वे इस पृथ्वी से मुतअल्लिक़ अग्नि और आकाश मण्डलों ही से आते हैं। पृथ्वी से नीचे के तीन स्थानों में और ऊपर के दो स्थानों में भी क़रीब क़रीब ये ही क़ायदे जारी हैं। इन ज़रियों के अलावा चौरासी की धारें भी (देखो दफ़ा १०२) इस पृथ्वी पर और पिण्ड के दूसरे स्थानों में जीवों को लाकर डालती हैं।

अलावा इसके दफ़ा १०७ से मालूम होगा कि पिण्ड-देश ब्रह्माण्ड के और ब्रह्माण्ड निर्मल चैतन्य-देश के गिर्द चक्कर लगा रहा है। इस चक्कर लगाने के दौरान में हमारी पृथ्वी और पिण्ड-देश के दूसरे स्थान अक्सर ऐसे लोकों के नज़दीक आ जाते हैं कि जिनमें जीव जन्तु और बनस्पति इनकी

कायनात से किसी क़दर मुख़्तलिफ़ होते हैं। इस क़िस्म का योग होने पर एक स्थान के सूक्ष्म मण्डलों के बासी दूसरों के सूक्ष्म मण्डलों में चले जाते हैं और इस वजह से हमारी पृथ्वी पर बहुत से नई क़िस्म के शरीरधारी प्रकट होते हैं। चुनांचे ज़मीन खोदने से बहुत से अजीब व ग़रीब जानवरों की हड्डियाँ फ़ॉसिल (Fossil) यानी पत्थर बनी हुई बरामद होती हैं।

११३–जन्म लेने से पहले सुरतें किस अवस्था में रहती हैं।

यह बयान किया जा चुका है कि निर्मल चैतन्य-देश के बासी मृत्यु से रहित हैं क्योंकि उनका देश अविनाशी है। रचना के दूसरे दर्जे यानी ब्रह्माण्ड में भी पृथ्वीलोक की सी मृत्यु नहीं होती है और वहाँ के बासी ज़्यादातर महाप्रलय के ज़माने तक बराबर ज़िन्दा रहते हैं। ब्रह्माण्ड का नाश होने पर वहाँ के बासी रचना से पहले की अवस्था में उलट जाते हैं और ब्रह्माण्ड की नये सिरे से रचना होने पर उनका फिर से जन्म हो जाता है। ब्रह्माण्ड देश के जीव जब पिण्ड-देश में उतरते हैं तो उनके अन्दर मनुष्य के मृत्यु-समय की सी तब्दीली नहीं होती, अलबत्ता ऐसे मौक़े पर उनको मनुष्य के जन्म लेने से पहले की अवस्था धारण करनी पड़ती है। इस

अवस्था से हमारा मतलब गर्भवास की अवस्था से नहीं है बल्कि उस चैतन्य-समाधि की दशा से है जो जन्म लेने वाला जीव जन्म लेने से पहले धारण करता है।

सब कोई जानता है कि बच्चा जब तक माता के गर्भ में रहकर परवरिश पाता है उस वक़्त तक वह साँस नहीं लेता है और गर्भ से बाहर निकलने पर साँस लेने की क्रिया जारी होती है। गर्भवास के दौरान में बच्चे की परवरिश माता के खून से हुआ करती है इस लिए गर्भवासी बच्चे के शरीर की तय्यारी का सब काम माता के ज़िम्मे रहता है और जो जीव आगे चलकर उस गर्भ वाले शरीर को धारण करता है उसका उस शरीर से बहुत दूर पार का सम्बन्ध रहता है। गर्भवास की हालत को, जिसमें साँस बन्द रहता है, मूर्छा की अवस्था से तश्बीह दी जा सकती है जिसमें मूर्छित की सुरत का उसके शरीर के साथ महज़ एक निहायत बारीक चैतन्य डोर के ज़रिये रिश्ता क़ायम रहता है वरना उसकी सुरत ज़्यादातर मुर्दा शख़्स की रूह की तरह जिस्म से आज़ाद होती है। सुरत की इस जन्म लेने से पेशतर वाली अवस्था को चैतन्य-समाधि कहते हैं। मनुष्य-शरीर धारण करने वाली सुरत यह समाधि ज्योतिनारायण के स्थान में लगाती है क्योंकि मनुष्य की सुरत का देह में क़याम छठे चक्र में रहने से उसकी मृत्युसमय की देह से अल-

हद्गी तभी हो सकती है जब वह खिँचकर छठे चक्र से परे ब्रह्माण्ड के किसी स्थान में दाखिल हो और चूँकि ब्रह्माण्ड के निचले तीन स्थानों में नीचे की जानिब उतार के लिए झुकाव बहुत जोर के साथ है इस लिए वे स्थान समाधि लगाने के क़ाबिल नहीं हैं और इस वास्ते ज्योति का स्थान, जिसमें कि मुक़ाबिलतन् स्थिरता विशेष है, मनुष्य-शरीर में आने वाली सुरत के क़याम के लिए मौजूँ है। देह के छोड़ने पर भी मनुष्य की सुरत ज्योति के सम्मुख खिँचकर पहुँचती है जिसका मुफ़स्सल ज़िक्र हम आयन्दा दफ़ा में करेंगे।

चूँकि पिण्ड-देश में ब्रह्माण्ड की निस्बत प्रलय ज़्यादा मर्तबा होता है इससे नतीज़ा निकलता है कि ऊँचे दर्जे की शक्ति का घाटा पूरा करने के लिए रचना के कम चैतन्यता वाले देशों में बमुक़ाबिले ऊँचे देशों के ज़्यादा जल्द जल्द रद्द व बदल की ज़रूरत है जिसकी वजह से पिण्ड-देश के बासियों को भी बार बार मृत्यु झेलनी पड़ती है चुनांचे इसी लिए पिण्ड-देश को मृत्युलोक भी कहते हैं।

११४—मनुष्य की मृत्यु का क़ायदा।

चूँकि मृत्यु वाक़े होने के लिए यह लाज़िमी है कि जीव के सब के सब मायिक पर्दे—स्थूल व सूक्ष्म—, जो उसने पिण्ड-देश में धारण कर रक्खे हैं, नाश को प्राप्त हों इस

लिए ज़ाहिर है कि ऐसा जीव, जिसकी सुरत का घाट पिण्ड-देश की चोटी के स्थान से मुताबिक़त रखता है, उन सब मायिक पर्दों से जुदा करने के लिए ब्रह्माण्ड देश में खींचा जावे। यह खिँचाव, जिसको मौत का हुक्म कहना चाहिए, सहसदलकँवल से जारी होता है जहाँ का धनी नारायण या निरञ्जन है। यह पुरुष इस लिए ब्रह्माण्ड के ईश्वर का सब से नीचे दर्जे का (विराट्) रूप होने के अलावा कालपुरुष भी है। ब्रह्माण्ड के निचले तीन स्थान यानी विष्णु, ब्रह्मा और महादेव के मुक़ाम मनुष्य-शरीर के नाभि, इन्द्रिय और मूलाधार चक्रों की तरह, जो उनकी छाया हैं, ज़्यादातर ब्रह्माण्ड के निचले हिस्से की मायिक रचना की सँभाल में लगे हुए हैं। इससे मालूम होता है कि उनके ज़िम्मे ख़ास कर स्थिति, उत्पत्ति और ऐसे बेकार मसाले का इख़राज, जो स्थिति और उत्पत्ति में बाधक हो, यही तीन काम हैं और इस लिए उनको यह इख़्तियार हासिल नहीं है कि वे मनुष्य-शरीर के नाश का हुक्म जारी कर सकें या ऐसे हुक्म की बजाआवरी कर सकें। इस क़िस्म के अहकाम ज्योति और नारायण ही से जारी होते हैं क्योंकि वे ही ब्रह्माण्डी मन और इच्छा हैं और वे ही जीवों की क़िस्मत का बन्दोबस्त कर सकते हैं। चुनांचे आलमे सग़ीर (मनुष्य-शरीर) के अन्दर मनुष्य के मन व इच्छा ही के हुक्म से हर एक काम होता है।

हम ने दफ़ा ९२ में यह बयान किया था कि प्रथम धार कालपुरुष की, जो सत्तलोक से बरामद हुई, हरचन्द आला दर्जे की शक्ति से परिपूर्ण थी लेकिन रचनात्मक शक्ति से बिलकुल ख़ाली थी और दूसरी धार, जो निर्मल चैतन्य-देश की सुरत-धार की शाखा थी, केन्द्र क़ायम करने की शक्ति लिये हुए थी। चुनांचे पहली यानी काल-धार जीव के मायिक पर्दों के नाश करने का इन्तिज़ाम करती है और दूसरी धार छिपे हुए बीजों को अपना इज़हार करने और परवरिश पाने के लिए चैतन्यता बख़्शती है। चुनांचे मौत के वक़्त सहसदलकँवल से संहार करने वाली एक धार प्रकट हो कर मनुष्य के तमाम मायिक पर्दों को नाश कर देती है जिसके बाद दूसरी धार ऊपर की जानिब सुरत को अपने सम्मुख खींचती है। तीसरे तिल के मुक़ाम पर एक देवता, जिसको धर्मराय या यमराज कहते हैं, मुक़ीम है और वह ऊपर के लेख के अनुसार कालपुरुष के अहकाम को बजा लाता है। ज़्यादा सही लफ़्ज़ों में यों कहना चाहिए कि धर्मराय एक ऐसा केन्द्र है कि जिसकी मारफ़त काल की धार अपनी संहार-क्रिया अमल में लाती है।

ऊपर बयान किये हुए अमल के बमूजिब स्थूल शरीर का संहार होने पर जीव के स्थूल मायिक पर्दे तो दूर हो जाते हैं लेकिन उसके मन व इच्छाओं पर इसका कोई

असर नहीं होता क्योंकि उसका मन खुद कालपुरुष ही का अंश है। इस लिए तमाम सूक्ष्म बासनाएँ, सूक्ष्म इन्द्रियाँ और मन ब्रह्माण्ड की जानिब खिँचाव होने पर सुरत के संग जाते हैं और अगर ये संसारी ख़्यालात व हवसों से लबरेज़ होते हैं और संसार के मोह व बन्धन मन के अन्तर के अन्तर से खारिज नहीं किये गये हैं तो ये सब सुरत के लिए भारी बोझ बन जाते हैं जिसकी वजह से सुरत को ब्रह्माण्ड के नाके से गुज़रने में सख़्त तकलीफ़ होती है क्योंकि ब्रह्माण्ड में दाखिल होने के लिए उसको नाके के निहायत सूक्ष्म सूराख में से गुज़रना होता है और सूराख से गुज़रने के क़ाबिल होने के लिए उसको निहायत सूक्ष्म बनना पड़ता है। मृत्यु के समय जीव को जो पहला दण्ड मिलता है वह यही तकलीफ़ है। इसकी वजह से हरचन्द सुरत के ऊपर से बुरे कर्मों का बहुत कुछ बोझ उतर जाता है ताहम उसको ऐसी निर्मिलता प्राप्त नहीं हो जाती कि वह ब्रह्माण्ड में बास पाने के क़ाबिल हो जावे क्योंकि संसारी मोह वग़ैरह के निहायत झीने बीज सुरत के संग ब्रह्माण्ड में चले जाते हैं। ब्रह्माण्ड में दाखिल होने पर सुरत को दूर से ज्योति का दर्शन प्राप्त होता है और अगर उसके संग पिण्ड-देश के मोह के बीज मौजूद हैं तो वह ज़्यादा अर्से तक वहाँ ठहरने नहीं पाती। ज्योति के चैतन्य प्रकाश की मारफ़त संसारी

बासनाओं के बीज फ़ौरन् जिन्दा हो कर अपना इज़हार करने लगते हैं और चूँकि रचना के इन्तिज़ाम की रू से ये बीज ब्रह्माण्ड देश में रहने के लायक़ नहीं हैं इस लिए उनके ज़ोर पकड़ते ही सुरत बड़े वेग के साथ नीचे की जानिब धकेल दी जाती है। धकेले जाने पर सुरत मय अपनी संसारी बासनाओं और ख़्वाहिशों और मन के, ब्रह्माण्ड के पेंदे में जो भारी मैदान है उसमें आ गिरती है और कुछ अर्से तक वहाँ बेहोश चुपचाप पड़ी रहती है। बाद में धर्मराय के उन अहकाम के बमूजिब, जो उसने उसकी मौत के वक़्त सादिर किये थे, सुरत को जन्म मिलता है। आयन्दा जन्म मिलने के क़ायदों की तशरीह हम आगे चलकर इस पुस्तक के कर्म-भाग में करेंगे।

११५—नीचे दर्जे के जीवों की मृत्यु का क़ायदा।

मालूम होवे कि मृत्यु का यह इन्तिज़ाम, जो ऊपर की दफ़ा में बयान हुआ, सिर्फ़ मनुष्यों के लिए है। दूसरे जीवों की मृत्यु का क़ायदा बलिहाज़ उनकी सुरत की बैठक के मुक़ाम के किसी क़दर मुख़्तलिफ़ है। पृथ्वी पर पशु-योनि की बाज़ बाज़ देहें ऐसे नीचे दर्जे की हैं और नीज़ पृथ्वी से नीचे के तीन स्थानों की रचना ऐसी अदना है कि उनकी मृत्यु होने के लिए

ब्रह्माण्ड में खिँचने की ज़रूरत नहीं है। पिण्ड-देश के चौथे स्थान का धनी ही, जिसको शिव या पशुपति कहते हैं और जो नारायण की छाया है, बमदद ज्योति की छाया के, जो उसके संग रहती है, ज्योतिनारायण के तरीक़े पर इन नीच योनियों की मृत्यु कराता है।

११६—मनुष्य-शरीर धारण करने के योग्य जीवों की मृत्यु।

वे जीव, जो ऊपर की जानिब रुख़ वाली धार की मारफ़त ऊँची योनियों में चढ़ते जाते हैं, जब उस मंज़िल पर पहुँच जाते हैं कि आयन्दा मनुष्य-शरीर के भागी हों तो उनकी मृत्यु दूसरी तरह से होती है यानी मृत्यु होने पर उनकी सुरत ब्रह्माण्ड में खींची जाती है और मनुष्य-शरीर धारण करने से पहले जो चैतन्य-समाधि धारण की जाती है उसमें प्रवेश कराये जाते हैं। पिण्ड-देश के सूर्य्यलोक और चन्द्रस्थान की सुरतें मृत्यु होने पर ब्रह्माण्ड में खिँचती हैं और मुनासिब समाधि-अवस्था धारण करने के बाद पृथ्वी पर मनुष्य-शरीर में जन्म लेती हैं।

११७—सुरत-शक्ति और भौतिक शक्तियों में बिरोध।

सुरत को पिण्ड-देश में सख़्त मुख़ालिफ़त का मुक़ाबला करना पड़ता है क्योंकि इस देश की सब की सब

भौतिक शक्तियों का रुख़ चैतन्य-शक्ति के बिरुद्ध है। भौतिक शक्तियों का रुझान न्यून अङ्ग के सिरे की तरफ़ है और चैतन्य-शक्ति का स्वाभाविक मैलान (जो हर सुरत के अन्तर में मौजूद है) निर्मल चैतन्य-धाम यानी विशेष अङ्ग की जानिब है। कुछ अर्से तक सुरत-शक्ति भौतिक शक्तियों पर ग़ालिब रहती है लेकिन बिलआखिर वे शक्तियाँ ग़ालिब हो जाती हैं और सुरत का रचा हुआ स्थूल शरीर ऐसा बिगड़ जाता है कि आयन्दा क़ायम नहीं रह सकता। ऐसी हालत हो जाने पर हस्ब बयान दफ़ा ११४ काल की धार उतरकर स्थूल शरीर का नाश कर देती है।

११८—आवागवन से क्या मुराद है।

मालूम होवे कि ऊपर बयान किये हुए तरीक़े पर शरीर के नाश हो जाने से जीव की संसारी बासनाएँ और वृत्तियाँ नष्ट नहीं हो जातीं। देह छूटने पर जीव अपनी बासनाओं से सम्बन्ध रखने वाले स्थूल मण्डल की जानिब फिर खिँचकर आता है और वहाँ ऐसी योनि में दोबारा जन्म लेता है कि जिसके अन्दर उसकी प्रबल बासना से मिलता हुआ अङ्ग प्रधान हो। मालूम होवे कि इस एक योनि से दूसरी में आने जाने ही को आवागवन कहते हैं। चूँकि पिण्ड-देश और नीज़ ब्रह्माण्ड के अन्दर वर्तमान शक्तियों का रुझान बड़े

वेग के साथ न्यून अङ्ग के सिरे की जानिब है इस लिए इन देशों से रिहाई हासिल करने के मुतअल्लिक़ जीव की ज़ाती कोशिश लाहासिल रहती है। यह मुमकिन है कि दफ़ा १०७ में बयान किये हुए सृष्टि-नियम के अनुसार वह कुछ हद तक ऊपर चढ़ जावे लेकिन सच्ची मुक्ति उसको तभी प्राप्त हो सकती है जब सच्चे सन्त सतगुरु उसके सहायक हों और उनकी मदद से निर्मल चैतन्य-देश में रसाई कराने वाले साधनों की बाक़ायदा कमाई उससे बन पड़े। हम इस पुस्तक के कर्म-भाग में उन क़ायदों का ज़्यादा मुफ़स्सल तौर पर ज़िक्र करेंगे जिनकी रू से सुरत की देहों और दूसरी बातों का इन्तिज़ाम उसके रचना में आने के वक़्त से लेकर सरंजाम पा रहा है।

चूँकि निर्मल चैतन्य-देश और उसके बासी अजर और अमर हैं यानी हर तरह की तब्दीली और मृत्यु से रहित हैं इस लिए आवागवन के नियम का उस देश के इन्तिज़ाम में दख़ल नहीं है। यह बेशक ज़िक्र हुआ था कि निर्मल चैतन्य-देश से सन्तसुरतें ब्रह्माण्ड और पिण्ड-देश में सुरतों को मन व माया की गुलामी से रिहाई दिलाने और नीचे दर्जों की रचना में चैतन्यता बढ़ाने की दया की ग़रज से आया करती हैं लेकिन उनकी आमद मामूली आवागवन के नियमानुसार नहीं होती क्योंकि संसार में सन्तरूप धारण करने पर

उनका कुल्ल-मालिक राधास्वामी दयाल के साथ चैतन्य सूत बदस्तूर क़ायम रहता है । साधारण जीव पैदा होने पर पहले जन्मों का हाल और जन्म धारण करने से पहले के रिश्ते उमूमन् भूल जाते हैं लेकिन इस क़िस्म की क़ाबिल-एतबार मिसालें भी मिलती हैं जिनसे पिछले जन्म की कुछ बातों का याद रहना साफ़ साबित होता है । वैज्ञानिक तहक़ीक़ात के लिए ये मिसालें बहुत पुरमतलब हैं और मुनासिब है कि उनकी तलाश करके इस मुआमले को हमेशा के लिए एक मुसल्लिमा उसूल की हैसियत दी जावे । इस मुआमले की तहक़ीक़ात करने से न सिर्फ़ चैतन्य-शक्ति के ख़वास पर बहुत कुछ रोशनी पड़ेगी बल्कि एक प्रत्यक्ष और पक्का सुबूत आवागवन के मसले के मुतअल्लिक़ मिल जावेगा । इसमें शक नहीं कि ब्रह्माण्ड और पिण्ड-देश की रचना के इन्तिज़ाम के मुतअल्लिक़ जो बयान पीछे हुआ है उससे इस मसले की हिमायत में बहुत कुछ दलीलें मिल जाती हैं लेकिन यह ज़्यादा इतमीनानदेह होगा अगर प्रत्यक्ष सुबूत हस्ब मज़कूरा वाला मिल जावे ।

ब्रह्माण्ड में पिण्ड-देश की तरह बार बार देह बदलना नहीं पड़ता । आवागवन का मक़सद यह है कि अव्वल तो जीवों को देह धारण करते वक़्त हरमर्तबा किसी क़दर नई चैतन्यता प्राप्त हो, दूसरे उनको आगे पीछे मौक़ा अपने सच्चे सुधार

के लिए मिले, तीसरे उनको अपने बुरे कर्मों के फल का ज़ाती तजरुबा हासिल हो और चौथे नीचे देश में बास होने की वजह से जो माया के बन्धनों का बोझ लाज़िमी तौर पर उनके सिर पर चढ़ जाता है वह बार बार मृत्यु के त्रास सहने और दुख व सन्ताप के झेलने से किसी क़दर हलका हो।

११९—ज़िन्दगी की चार अवस्थाएँ।

यह सब किसी को मालूम है कि तमाम जानवरों और ख़ास कर मनुष्य की ज़िन्दगी चार अलहदा अलहदा हिस्सों पर मुनक़सिम है। पहले हिस्से यानी अवस्था का दौरान जन्म के वक़्त से शुरू हो कर जवानी तक रहता है। इस दौरान की ख़ास बातें तबीयत की तेज़ी, चिन्ता व फ़िक्र की कमी और स्त्री पुरुष के भावों से नावाक़िफ़ियत हैं। अगर असाधारण विघ्न वाक़ै न हों तो इस अवस्था में आम तौर पर निष्पाप सुख व चैन का रस भी प्राप्त रहता है और छोटी छोटी बातें भी सुखदायक हुआ करती हैं। इस ज़माने में सक्ते की हालत में और हिप्नॉटिज़्म के अमल की नींद में जाने की योग्यता बमुक़ाबले और अवस्थाओं के दौरान के ज़्यादा रहती है। जवानी आने पर ज़िन्दगी की दूसरी अवस्था शुरू हो जाती है और इसका दौर ज़िन्दगी के उतार की शुरूआत तक जारी रहता है। यह उतार का दौरान चढ़ाव के ज़माने की तरह (जिसमें पहली दो अवस्थाएँ शामिल हैं) दो हिस्सों पर मुनक़सिम है यानी

एक तो वह हिस्सा जिसमें ज़िन्दगी के उतार का असर ज़्यादा महसूस नहीं होता और जवानी की सब ताक़तें ख़ासे तौर पर काम करती रहती हैं और दूसरा बुढ़ापे का ज़माना, जिसमें स्थूल शरीर प्रकट तौर पर सुकड़ जाता है और जवानी की ताक़तें जवाब दे जाती हैं। जवानी के दौरान में उमङ्गें और उम्मीदें जज़्बों की तरह निहायत ज़बरदस्त रहती हैं। जवानी का जोश किसी क़िस्म की मुश्किलों और दिक़्क़तों को ख़्याल में नहीं लाता और जब कोई उलटी हालत शरीर पर आ जाती है तो जवानी के दम की बदौलत तबीयत जल्द ही क़रार पकड़ लेती है और इस तौर से ज़िन्दगी कम व बेश सुरूर की हालत में गुज़रती है। तीसरी अवस्था के दौरान में जवानी का जोश ठंडा पड़कर समझ बूझ और तजरुबेकारी का असल शुरू हो जाता है और आज़ाद-ख़्याली व फ़राख़दिली का इज़हार होने लगता है। यही ज़माना है कि जिसमें लोगों को आम तौर पर अपने कारबार में बढ़कर कामयाबी, दौलत, इज़्ज़त और नामवरी हासिल होती है। चौथी यानी ज़िन्दगी की आख़िरी अवस्था में फिर से लड़कपन आ जाता है लेकिन अगर ज़िन्दगी साफ़ सुथरेपन और मध्य की चाल से बसर की गई है तो यह चौथी अवस्था भी ख़ास लुत्फ़ से ख़ाली नहीं होती और लड़कपन के निष्पाप सुखों के अलावा

अक्लमन्दी और तजरुबेकारी का कोमल आनन्द तजरुबे में आता है। इसके दौरान में जिस्म की ताक़तों का सिमटाव बहुत जबरदस्त रहने से तमाम जिस्म कमजोर हो जाता है जिसकी वजह से छोटी छोटी बातों का और गर्मी सर्दी का असर बहुत ज़्यादा महसूस होता है और बीमारियों का भी जोर रहता है। लेकिन मालूम होवे कि परमार्थी हिसाब से यह सिमटाव बहुत ही मुफ़ीद है क्योंकि इससे क़ुदरती तौर पर सुरत का रुझान तीसरे तिल के सूराख़ की जानिब हो जाता है (जिससे गुजरने पर मौत वाक़ै होती है), और इससे इच्छानुसार तिल से पार गुजरने के अभ्यास की कमाई में बहुत मदद मिलती है। ज़िन्दगी की चार अवस्थाओं के मुतअल्लिक़ जो कुछ यहाँ पर बयान हुआ वह इन्सान की ज़िन्दगी की मिसाल ले कर किया गया है लेकिन दूसरी योनियों का भी इसी तरह का हाल है अलबत्ता क़ुदरत की जानिब से बलाओं के नाज़िल होने या ग़ैर मामूली वक़ूआत की वजह से इसमें किसी क़दर कमी बेशी हो सकती है।

१२०—जीवों की तरह रचना की भी चार अवस्थाएँ हैं।

चूँकि तमाम रचना चैतन्य धारों की मारफ़त प्रकट हुई है और वे ही रचना में हर चीज को अनेक शक्लों

और दर्जों में जान दे रही हैं इस लिए यह उम्मीद करना ग़लत न होगा कि मनुष्य-शरीर या आलमे सग़ीर की सी चार अवस्थाएँ आलमे कबीर के भी सब दर्जों के अन्दर मौजूद होंगी लेकिन यह भी इशारे में बतला दिया गया है कि मनुष्य-शरीर में ये चार अवस्थाएँ चैतन्य धारों के चढ़ाव और उतार की वजह से होती हैं। इस लिए आलमे कबीर में इनका इज़्हार सिर्फ़ उस हिस्से के अन्दर होना चाहिए कि जिसमें इस तरह के उतार चढ़ाव की कैफ़ियत मौजूद हो। चूँकि निर्मल चैतन्य-देश के स्थानों में रचना अविनाशी और एक रस है इस लिए वहाँ पर इन अवस्थाओं का दख़ल नहीं हो सकता। निर्मल चैतन्य-देश के बाद ब्रह्माण्ड और पिण्ड-देश हैं। चूँकि ब्रह्माण्ड में महाप्रलय के मौक़े ही पर रद्द व बदल होता है और महाप्रलय क़यास से बाहर ज़माने के बाद होता है इस लिए ब्रह्माण्ड में भी इनका ज़्यादा दख़ल नहीं हो सकता।

१२१—चार युगों का बयान।

तीसरे दर्जे यानी पिण्ड-देश में, जहाँ कि प्रलय बार बार होता है, ये चार अवस्थाएँ, जिनका ऊपर ज़िक्र हुआ, निहायत प्रकट तौर पर देखने में आती हैं और इन्हीं को युग कहते हैं। युगों के नाम ये हैं:—सत्ययुग, त्रेता,

द्वापर और कलियुग। इन युगों के दौरान में पिण्ड-देश के अन्दर मनुष्य की चार अवस्थाओं के मुआफ़िक़ मुख्तलिफ़ हालतों का दौरा रहता है। सत्ययुग के ज़माने में रचनात्मक धार चैतन्यता से परिपूर्ण थी क्योंकि वह पिण्ड-देश में ताज़ा ही उतरी थी। इस लिए हर तरह की कायनात—जानदार व बेजान—उसकी चैतन्यता से तर बतर हो गई और इस वजह से उस ज़माने में क़ुदरत का रुख़ बेहतरी और शिगुफ़्तगी यानी प्रफुल्लता की जानिब था। गर्मी सर्दी का असर जीवों पर ज़्यादा नहीं होने पाता था और जीव निहायत सुखी और ख़ुशहाल थे। शारीरिक दुख और रोग, बुरे कर्म और गन्दे ख्यालात, अहङ्कार और ग़रूर उस ज़माने में क़रीबन् नापैद थे। क्या इन्सान क्या हैवान, जिस्म के पूरे तन्दुरुस्त, ज़िन्दगी का पूरा लुत्फ़ लेते हुए निहायत चैन के साथ उम्र बसर करते थे। इस ज़माने में मृत्यु हद दर्जे का बुढ़ापा आने पर होती थी और जैसे पके हुए फल सहज में पेड़ से अलग हो जाते हैं ऐसे ही उस ज़माने में जीव निहायत वृद्ध हो कर मौत आने पर बिला किसी क़िस्म की तकलीफ़ महसूस करने के शरीर से अलहदा हो जाते थे। उस वक़्त के ज़ीवों क़ी ज़िन्दगी का पैमाना भी आजकल के मुक़ाबले में बहुत बड़ा था और बवजह चैतन्यता की विशेषता और हृदय की अधिक पवित्रता के, वे जीव आसानी से कभी कभी

सूक्ष्म मण्डलों में जा कर पूर्वजों यानी पितरों से मेल मुलाक़ात कर आते थे। इस युग की उम्र दूसरे युगों के मुक़ाबले में बहुत ज़्यादा लम्बी थी और पिण्ड-देश के बासियों ने उस वक़्त रचना की दया से भारी लुत्फ़ उठाया। ब्रह्माण्ड देश के बासी (जहाँ की रौनक़ पिण्ड-देश के मुक़ाबले में बदर्जहा बढ़ कर है) जिन्दगी का जो लुत्फ़ उठाते हैं, उसका बयान में लाना नामुमकिन है । दूसरे युग यानी त्रेता में भी क़रीब क़रीब सत्ययुग की सी हालत वर्तमान रही और ज़िन्दगी निहायत चैन से गुज़री अलबत्ता नीचे की जानिब रुख़ वाली धार का मजमूई असर विघ्नरूप में किसी क़दर ज़ाहिर हुआ लेकिन उसके दूर करने के लिए श्री रामचन्द्र जी ने अवतार धारण किया। द्वापर के ज़माने में ज़िन्दगी के आनन्द में विघ्न डालने वाली सूरतें और भी ज़्यादा इकट्ठी हो गई इस लिए उनका असर दूर करने की ग़रज़ से श्री कृष्ण जी ने, जिनका दर्जा ब्रह्माण्ड के अवतारों में सब से ऊँचा है, यहाँ पर चरण पधारे । हमारे ऊपर के बयान से ज़ाहिर है कि इन तीन युगों में पिण्ड-देश की ज़िन्दगी जीवों के लिए एक भारी नेमत थी और किसी के लिए कोई मौक़ा किसी तरह की शिकायत का नहीं था । पिण्ड-देश की उम्र का ⅞ से ज़्यादा हिस्सा इन तीन युगों में ख़त्म हो जाता है ।

१२२—कलियुग का दौर, मुसीबतों की भरमार और जगदुद्धार की दया।

मालूम होवे कि दफ़ा ११० में सन्तों की संसार में तशरीफ़आवरी के समय की निस्बत जो क़ायदा बयान किया गया है उसकी रू से कुछ अर्सा हुआ कि चौथे युग की शुरूआत हो गई। बार बार भूचालों का आना, कसरत से जान माल के लिए भारी नुक़सानदेह हादिसों यानी दुर्घटनाओं का होना, प्लेग सी ज़बरदस्त और ख़ौफ़नाक वबा का फैलना, क़हतसालियों के जल्द जल्द नमूदार होने से खुशहाली का ख़ातमा हो कर लाखों जीवों का फ़ाक़े व बेसामानी की दिलसोज़ यानी हृदय-विदारक व भयानक मुसीबतों में गिरफ़्तार होना और सूर्य्य में पहले की निस्बत ज़्यादा मर्तबा हलचल का मचना, ये सब बातें निहायत वाज़ह तौर पर ज़ाहिर करती हैं कि हमारा पिण्ड-देश अब अपनी चौथी यानी वृद्धावस्था को प्राप्त हो गया है। जैसे पृथ्वी के मुख़्तलिफ़ हिस्सों की आब व हवा का उनके बासी मनुष्यों और दूसरे जानदारों के शरीरों की बनावट, शक्ल सूरत और आदतों पर भारी असर पड़ता है ऐसे ही कलियुग की तासीर का भी पिण्ड-देश की तमाम जानदार कायनात पर भारी असर पड़ता है। चुनांचे पिण्ड-देश की मुख्य चैतन्य-धार का ब्रह्माण्ड की जानिब

खिँचाव हो जाने से उसके शरीर यानी स्थूल हिस्से में जो बीमारी और सुकड़न की कैफ़ियत व्याप रही है उसी की वजह से ऊपर बयान की हुई तमाम मुसीबतें और बलाएँ इस ज़माने में जीवों पर नाज़िल हो रही हैं। लेकिन परमार्थी नुक़्ते निगाह से कलियुग का ज़माना आला दर्जे के अन्तरी साधन की कमाई के लिए निहायत ही मौज़ूँ है क्योंकि इस वक़्त में पिण्ड और ब्रह्माण्ड दोनों निर्मल चैतन्य-देश के ज़्यादा से ज़्यादा नज़दीक होते हैं। वे मुश्किलें और तकलीफ़ें, जिनका ऊपर ज़िक्र हुआ, आयन्दा कुछ वक़्त तक अब से भी ज़्यादा तेज़ी के साथ नमूदार हो सकती हैं लेकिन उनका भीतरी असर (जो जीवों को भुगतना पड़ता) सन्तों की आमद से पहले ही हलका हो गया है। अलावा इसके ये ख़राब हालतें कल्याणकारक भी हैं क्योंकि दुष्कालों, वबाओं, भूचालों और हादिसों की वजह से जीवों के मन पर ज़बरदस्त अङ्कुश या रोक लगती है और जो जीव इन मुसीबतों के पंजे में आ जाते हैं वे संसार से कोई सहायता न पाकर या सहायता पाने पर उसके निरर्थक साबित होने से कुदरती तौर पर अपने करतार की जानिब दृष्टि फेरते हैं और दूसरे लोग जो इन मुसीबतों की गिरफ़्त से बचे रहते हैं वे औरों का हाल देख सुनकर संसार की धार में बेतकल्लुफ़ बहने के बजाय थोड़ी देर के लिए रुक जाते

से सम्बन्ध रहता है और दोनों क़िस्म की हालतें दर असल एक ही वस्तु की मुख़्तलिफ़ अवस्थाएँ रहा करती हैं। लेकिन चूँकि इन दो क़िस्म की हालतों में ज़ाहिरा परस्पर भेद रहता है इस वजह से उनके ज़ाती सम्बन्ध का पता नहीं चलता। मिसाल के तौर पर सूर्य की किरण को लो। सूर्य की किरण दर असल सूर्य से प्रकट होने वाली एक धार है और साथ ही सूर्य की बाहर फैलने वाली शक्ति का कार्य भी है। किरण की जाँच करने से मालूम होता है कि उसके सङ्ग छोटे और सूक्ष्म पैमाने पर उसके भण्डार (यानी कारण) सूर्य का रूप और जुज़ मौजूद रहता है यानी कार्यरूप किरण के अन्दर उसके कारण यानी सूर्य के अङ्ग साफ़ तौर पर पाए जाते हैं। मालूम होवे कि चोटी के मुक़ाम से लेकर न्यून अङ्ग की सब से निचली तह तक कुल रचना इसी ढँग पर प्रकट हुई है।

१२४—रचना की दया किस ग़रज़ से हुई।

कुल्ल-मालिक एक ऐसा चैतन्य-सिन्धु है कि जिसके परम आनन्द व प्रेम का कोई वार पार नहीं है, जिसके परम ज्ञान से कोई बात पोशीदा नहीं है, जिसकी परम सत्ता ही से हर वस्तु शक्ति और जान हासिल करती है और जिसके प्रकाश की तेजी बयान से बाहर है। वह कुल्ल-मालिक, अपार व अनन्त, इस परम सुहावन अवस्था में एक रस

नहीं रहती। पस हमारे मन्तव्य के अनुसार रचना में रूप, रङ्ग, प्रकाश, सत्ता, ज्ञान व आनन्द वग़ैरह के अन्दर भिन्नता मुख़्तलिफ़ दर्जे की चैतन्यता से अलहदा अलहदा क़िस्म के तजरुबे हासिल होने का नतीजा ठहरती है। अलावा इसके ये तजरुबे, तजरुबे में आने वाले यानी ज्ञेय पदार्थों की असल हक़ीक़त से अलहदा नहीं हैं क्योंकि यह असल हक़ीक़त कुल्ल-मालिक के ज्ञान के अन्दर दाखिल है। अगर इन्द्रिय-ज्ञान की निस्बत हमारा दावा, जो दफ़ात ९६ व ९७ में बयान किया गया, दुरुस्त है तो जाहिर है कि जितने भी तजरुबे हम को हासिल होते हैं उन सब में ज्ञेय पदार्थ सूक्ष्मरूप से हमारी देह के अन्दर मौजूद किसी तन्मात्रा से रिश्ता जोड़ता है और इस लिए हर एक तजरुबा ज्ञेय पदार्थ के सूक्ष्म रूप ही के अनुसार हुआ करता है। अगर हमारा यह नतीजा दुरुस्त है तो मानना होगा कि मनुष्य के तजरुबे ज्ञेय पदार्थों से अलहदा नहीं कहे जा सकते—मनुष्य के तजरुबे दर असल मुख़्तलिफ़ दर्जे की चैतन्यता के जीवात्मा पर डाले हुए संस्कार या नक़्श होते हैं—इस लिए कारण का हमेशा कार्य यानी संस्कार के ऊपर ठप्पा लगा रहता है और कारण व कार्य एक ही वस्तु की दो मुख़्तलिफ़ अवस्थाएँ हुआ करती हैं और जो हालतें कारण के सङ्ग लगी रहती हैं उनका कार्य के सङ्ग मौजूद हालतों

ज्ञान नहीं हो जाता तो हम जवाब में कहेंगे कि यह एतराज़ हमारे बयान पर आयद ही नहीं होता, क्योंकि देखो, जब हम ग़ुबार की हालत, धुँदलेपन और अन्धकार वग़ैरह का ज़िक्र करते हैं तो उस वक़्त हमारी यह ग़रज़ नहीं होती कि ये हालतें रोशनी के मुख़्तलिफ़ दर्जे के 'न-होने-पन' यानी अभाव की वजह से ज़ाहिर हो रही हैं बल्कि मंशा रोशनी में दर्जे बदर्जे कमी होने से जो तजरुबे होते हैं उनके ज़ाहिर करने की रहती है। इस लिहाज़ से न्यून अङ्ग की निस्बत जो कुछ ऊपर बयान हुआ वह चैतन्य-शक्ति के अन्दर मुख़्तलिफ़ दर्जों की कमी की वजह से तजरुबे में आने वाली मुख़्तलिफ़ सिफ़तों का बयान है। यह ज़ाहिर है कि इस क़िस्म का तजरुबा असली ज्ञान है क्योंकि साधारण जाग्रत अवस्था में जो संस्कार जीव पर पड़ते हैं वे ही उसके लिए ज्ञान का ज़रिया होते हैं और उन्हीं को पारिभाषिक बोली में तजरुबा कहते हैं। चूँकि न्यून अङ्ग के स्थूल से स्थूल घाट में भी कुछ न कुछ चैतन्यता ज़रूर मौजूद है इस लिए उसकी दशा के तजरुबे को निषेधात्मक ज्ञान नहीं कह सकते क्योंकि दर असल यह ज्ञान सृष्टि की कमज़ोर से कमज़ोर चैतन्यता का तजरुबा यानी वास्तविक ज्ञान है और जब कि यह तजरुबा ख़ुद कुल्ल-मालिक के ज्ञान के मुताबिक़ है तो इसकी दुरुस्ती व सचाई की निस्बत सवाल उठाने के लिए गुंजायश

की दशा का ज्ञान हासिल करने के वास्ते काफ़ी है। विशेष अङ्ग, और न्यून अङ्ग के सिरे के दरमियान चैतन्यता के बेशुमार दर्जे हैं, जिनके अन्दर, बलिहाज़ चैतन्यता की कमी के, ज्ञान, आनन्द व प्रकाश तीनों में कमी होती गई है और होते होते न्यून अङ्ग के सिरे में आनन्द और प्रकाश की ख़िलाफ़ सूरत यानी दुख और अन्धकार की दशा की नौबत आ गई है और इसी वजह से न्यून अङ्ग के ख़वास जड़ता, अज्ञानता, दुख और अन्धकार क़रार पाते हैं। चूँकि न्यून अङ्ग खुद अचेत है इस लिए उसको इन दशाओं का कोई ज्ञान नहीं है लेकिन जो सुरत-अंश उस देश में मुक़ीम होगी उसको न्यून अङ्ग के इन सब ख़वास का ज्ञान ज़रूर हासिल रहेगा और जैसा कि ऊपर बयान किया गया कुल्ल-मालिक को न्यून अङ्ग के अन्दर इन सब दशाओं की मौजूदगी महसूस होती हैं। चूँकि कुल्ल-मालिक का ज्ञान यथार्थ ज्ञान है इस लिए उसकी अंशों यानी सुरतों को भी उसी क़िस्म का तजरुबा होता है, इतना ज़रूर है कि सुरत-अंशों का ज्ञान छोटे और महदूद पैमाने पर रहता है। अगर इस पर कोई शख़्स यह एतराज़ करे कि निषेधात्मक वर्णन के ज़रिए से कभी यथार्थ ज्ञान हासिल नहीं हो सकता यानी किसी वस्तु की निस्बत ग़लतफ़हमियाँ दूर करने के सिलसिले में कुछ बातों की अदममौजूदगी ज़ाहिर करने से वास्तविक

प्रकाश, आनन्द, सत्ता और चैतन्यता के मुक़ाबले में न्यून चैतन्य वाले देशों के ये ख़वास नामुकम्मल यानी असम्पूर्ण नज़राई देते थे। मालूम होवे कि मुकम्मलपन के इज़हार के मुक़ाबले में नामुकम्मलपन से जो (कसर वाली) सूरतें नमूदार हुई वे ही चैतन्यता के दर्जों के अन्दर इख़्तिलाफ़ का बाइस थीं। अपने मतलब को साफ़ करने की ग़रज़ से हम यहाँ पर न्यून अङ्ग के सिरे की दशा की जाँच करते हैं जहाँ चैतन्यता निहायत ही कमज़ोर है। उस हिस्से में विशेष अङ्ग की परिपूर्ण सत्ता के मुक़ाबले में प्रायः भरपूर जड़ता की सूरत वर्तमान है जिसकी वजह से बलिहाज़ सत्ता के, विशेष अङ्ग का दर्जा कर्त्ता व करतार का है और न्यून अङ्ग कार्य के लिए सामग्री का काम देता है और विशेष अङ्ग से नीचे के सभी चैतन्य घाट इसी शुमार में आ जाते हैं। बलिहाज़ ज्ञान के भी चैतन्यता में अत्यन्त क़मी रहने की वजह से न्यून अङ्ग विशेष अङ्ग के मुक़ाबले में बिलकुल अज्ञानरूप और अचेत है और उसमें सिवाय उस नियम की मौजूदगी के कि जिसके आसरे उस अङ्ग का काम चल रहा है ज्ञान का कोई दूसरा निशान मौजूद नहीं है। लेकिन विशेष अङ्ग में सूरत इसके बिलकुल बरअक्स है और न्यून अङ्ग के अन्दर मौजूद चैतन्यता की ख़फ़ीफ़ से ख़फ़ीफ़ किरण सर्वज्ञ कुल्ल-मालिक के लिए न्यून अङ्ग की घोर अज्ञान

मुकम्मल शक्ल में पेश किया जावे, यह बयान करना मुनासिब मालूम होता है कि इस रचना में, जो केवल चैतन्य-शक्ति के अन्दर पहले से मौजूद अनादि न्यूनाधिक भाव में तेज़ी आने के कारण प्रकट हुई है, तफ़रीक़ (भिन्नता) की सूरत किस वजह से आ गई है।

हम ने दफ़ा ७७ में बयान किया था कि न्यूनाधिक भाव से मतलब चैतन्य-शक्ति की एक तरफ़ अनन्त विशेषता और दूसरी तरफ़ भारी न्यूनता यानी कमी की सूरत क़ायम होने से है। हमारे इस बयान से साफ़ नतीजा निकलता है कि रचना के अन्दर इस वक़्त जो कुछ भी मौजूद है वह महज़ चैतन्यता के दर्जों में कमी व बेशी का इज़्हार है और रचना के रूपवान होने पर कोई और बात ज़हूर में नहीं आई है सिवाय इसके कि चैतन्यता के अनेक दर्जे, जो पेश्तर मौजूद न थे, अब क़ायम हो गये हैं। मालूम होवे कि रचना के बारे में जो कुछ हमारा मन्तव्य है वह इन्हीं दो फ़िक़रों के अन्दर आ जाता है। अब हस्ब वादा हम सरसरी तौर पर यह बयान करते हैं कि रचना के अन्दर भिन्नता यानी तफ़रीक़ का इज़्हार कैसे मुमकिन हुआ।

दफ़ा ८१ में यह बयान किया जा चुका है कि चैतन्य-शक्ति के अपार विशेष अङ्ग को, जिसे अनादि कुल्ल-मालिक की अपार सुरत कहना चाहिए, अपने मुकम्मल यानी परिपूर्ण

लगेगा और अभ्यासियों को अन्तरी रूहानी तजरुबे इतनी कसरत से होंगे कि उनको दौराने जिन्दगी ही में अपने सच्चे उद्धार के होने और निर्मल चैतन्य-धामों में बास मिलने की निस्बत पक्का सुबूत मिल जावेगा। पिण्ड और ब्रह्माण्ड देशों में जीवों के चिताने और चैतन्यता के जगाने का इन्तिज़ाम इस तौर से मुकम्मल हो जाने पर महाप्रलय का वक़्त आ जावेगा लेकिन महाप्रलय होने से पेशतर ही भारी तादाद में सुरतें निर्मल चैतन्य-देश में पहुँचकर अमर हो जावेंगी और बाक़ी की सुरतों को और ब्रह्माण्ड व पिण्ड की रचना को महाप्रलय होने पर फ़ायदा पहुँचेगा। महाप्रलय के बाद रचना का नया दौर शुरू होगा और उसमें ब्रह्माण्ड और पिण्ड की रचना के रूहानी नफ़े और फ़ायदे की पहले की तरह रचा होगी।

१२३—रचना में तफ़रीक़ कैसे हुई।

इस पुस्तक के पिछले सफ़ों में रचना की शुरूआत व इन्तिज़ाम की शरह करते वक़्त रचना के उद्देश्य का भी थोड़ा थोड़ा बयान, कहीं पर साफ़ लफ़्ज़ों में और कहीं पर इशारे में, होता रहा है। पेशतर इसके कि इन जुज़्वी बयानात को मुख़्तसर तौर पर दोहराया जावे और रचना के दया से भरे हुए उद्देश्य का वर्णन एक जगह पर

हैं और दुनिया के सुखों और भोग बिलासों की नाशमानता और ज़िन्दगी की नापायदारी या असारता ज़ोर के साथ उनकी आँखों के सामने आती है। इस क़िस्म के ख्यालात खुद अपने मन में जगने से, हरचन्द वे निहायत कड़ुवे तजरुबों के बाद पैदा होते हैं, जीव का अन्तर का अन्तर-जहाँ आगे ही पिण्ड की चैतन्य-धार के सिमटाव की वजह से ऊपर की तरफ़ कशिश हो रही है-किसी क़दर हिल जाता है। आजकल यह जो दुनिया की हर क़ौम के हृदय में परमार्थ के लिए प्यास प्रकट हो रही है वह सब चैतन्य-धार का ऊपर की जानिब खिँचाव होने ही का नतीजा है और यह जो अजीब व ग़रीब रूहानी शक्तियों व अवस्थाओं का इज़हार देखने में आ रहा है वह उसी की वजह से है। हमारे मन्तव्य (दावे) के अनुसार थोड़े ही अर्से में जब यह त्रिलोकी निर्मल चैतन्य-देश के ठीक सम्मुख आ जावेगी तो निर्मल चैतन्य-देश की चैतन्य-धार संसार के अन्दर ग़ालिब हो जावेगी और उस वक़्त ये तमाम मुसीबतें, जो इस वक़्त जीव झेल रहे हैं, ग़ायब हो जावेंगी और सत्ययुग से भी बढ़कर सुख व चैन की दशा वर्तमान होगी। रूहानी शक्तियाँ जो इस वक़्त इस क़दर पोशीदा हैं उस वक़्त कसरत से प्रकट होंगी और अन्तरी अभ्यास बग़ैर ज़्यादा तकलीफ़ व तरद्दुद के, कामयाबी के साथ बनने

स्थित है। चूँकि यह जाहिर है कि ऐसे चैतन्य-भण्डार के साथ जिस किसी चीज़ का तअल्लुक़ होगा उसको उस भण्डार के जौहर के कल्याणकारी गुणों से ज़रूर फ़ैज़ पहुँचेगा इस लिए रचना से पेश्तर विशेष अङ्ग के अलावा दूसरे दर्जों का उस भण्डार से तअल्लुक़ रखने और उसके आधीन रहने में भारी दया मुतसव्वर होनी चाहिए। जब मुनासिब वक़्त गुज़रने पर यह तअल्लुक़ गहरा हो गया तो कुल्ल-मालिक के जौहर की समर्थ धार की आमद से निचले दर्जे निहायत शानदार रचना की शक्ल में खिल उठे। वह देश यानी निचले दर्जों का वह हिस्सा, जो कुल्ल-मालिक के क़रीब था और जिसकी वसअत बाक़ी के हिस्सों से बहुत ही ज़्यादा थी, फ़ौरन् ही अमर और अविनाशी बना दिया गया और उसमें ऐसी चेतन्यता भर दी गई कि वह देश का देश मजमूई तौर पर चैतन्य हो कर हमेशा के लिए निज-भण्डार के साथ एक हो गया। इस देश के बासी भी, जिनकी तादाद बाक़ी दर्जों के बासियों की निस्बत अन्धाधुन्द ज़्यादा है, ख्वाबे ग़फ़लत से बेदार हो कर अविनाशी और एकरस क़ायम रहने वाले परम सुखदायक जीवन को प्राप्त हो गये कि जिससे ख़फ़ीफ़ से ख़फ़ीफ़ क़िस्म के दुख की अवस्था भी अब उनको छू नहीं सकती है। मालूम होवे कि इस दया से निज-भण्डार से निचले

देश का कसीर हिस्सा ऐसे फ़ैज़ से बहरावर या कृतार्थ हुआ कि जिसका बयान नहीं हो सकता। यह लिखने की ज़रूरत नहीं है कि इस देश के अन्दर रचना करने में जो भारी दया मुतसव्वर थी वह मनुष्य के वहम और क़यास से बाहर है और एक सच्चा कुल्ल-मालिक ही, जो परम आनन्दस्वरूप है, ऐसी दया चित्त में ला सकता था। रचना के बाक़ी दर्जे रूपवान करने में जो दया मुतसव्वर थी वह भी किसी तरह से कम न थी लेकिन बवजह अपनी आदि चैतन्यता की कमी के, ये दर्जे उस दया का पूरा फ़ायदा नहीं उठा सकते थे। मगर दया ने बावजूद इस कसर की मौजूदगी के अपना काम हत्तुलइमकान (यथा-सम्भव) पूरा कर ही डाला। चैतन्यता की कमी के नुक़्स बहुत ही हलके और कम कर दिये गये और कम चैतन्यता वाले हिस्सों को रचना के इन्तिज़ाम में ऐसी जगह पर ठहराया गया कि जिससे बिलआख़िर उनके नुक़्स हमेशा जीवन यानी ज़िन्दगी के आनन्द में वृद्धि यानी तरक़्क़ी का बाइस बन जाते हैं। यह कमी, जिसकी निस्बत ऊपर इशारा किया गया, रचना के दूसरे भाग यानी ब्रह्माण्ड देश में नाममात्र के लिए है और जब यह अपना रङ्ग लाने को होती है तो महाप्रलय हो जाता है जिससे इसका असर व्यापने नहीं पाता। इस लिए रचना के इस भाग यानी दूसरे दर्जे के रचने में भी—जिसके अन्दर निर्मल

चैतन्य-देश के रचे जाने के बाद जो जुज़्वी रचना बची थी उसका भारी हिस्सा शामिल है—पहले दर्जे यानी निर्मल चैतन्य-देश की तरह अविनाशी सुख और आनन्द की बख़्शिश मुतसव्वर थी। तीसरे दर्जे यानी पिण्ड-देश की चैतन्यता सब से अदना दर्जे की है और इस वजह से इस देश की क़ायनात के सङ्ग मलीन बासनाओं, दुखों और क्लेशों का बहुत कुछ झगड़ा लग रहा है। लेकिन पहले तीन युगों में इनका फ़साद बर्पा नहीं होने पाता और इस लिए उन युगों के दौरान में ज़िन्दगी और ज़िन्दगी के सुख बमुक़ाबले आदि अचेत-दशा के भारी बख़्शिश क़रार पाते हैं। इस देश की उम्र के क़रीबन् आठवें हिस्से में यहाँ के वासियों के ऊपर मायिक और मलीन बासनाओं का ग़ल्बा रहता है और उनको अनेक प्रकार की तकलीफ़ें, रोग शोक और भय सहने पड़ते हैं और इस ज़माने के अन्दर उनको नरकनिवास करके अपने बुरे कर्मों का दण्ड भी सहना पड़ता है। लेकिन इन दुखदायी अवस्थाओं ने यहाँ पर आवागवन का एक ऐसा सिलसिला क़ायम कर दिया है कि जिसके प्रताप से मायिक पर्दों का नाश हो जाता है और थोड़े ही अर्से तक इन अवस्थाओं में रहने पर जीव उस भारी दया के अधिकारी बन जाते हैं जो सन्तों की आमद के सिलसिले में प्रकट होती है। अगर वक़्त महाप्रलय के बर्पा होने का आ

गया है तब तो यह दया खुद परम दयाल सच्चे कुल्ल-मालिक के हुज़ूर से आती है वरना ब्रह्माण्ड से नाज़िल होती है। पहली सूरत में पिण्ड-देश के बासियों को बेहद परमार्थी लाभ यानी रूहानी फ़ायदा हासिल होता है और कसीर तादाद में जीव पहले दर्जे के अविनाशी स्थानों में बास पाने के अधिकारी बनाये जाते हैं। इस लिए अगर हम उस अन्धाधुन्द ज़माने को ख़्याल में लावें कि जिसके दौरान में पिण्ड-देश के बासी इस देश में रहते हुए ज़िन्दगी का लुत्फ़ उठाते हैं और नीज़ मुक़ाबले में उस मुख़्तसर वक़्फ़े को निगाह में लावें कि जिसके दौरान में उनको अपनी सफ़ाई के लिए यहाँ रहकर दुख सहना पड़ता है तो इस सब से निचले देश की रचना करने में जो भारी दया मुतसव्वर है वह निहायत वाज़ह तौर पर समझ में आ-जाती है और कुल्ल-मालिक के हर एक इन्तिज़ाम के अन्दर आला दर्जे की दानिशमन्दी की झलक नज़र आई पड़ने लगती है। जब अभ्यासी के अन्दर सुरत की निज यानी ज़ाती शक्तियाँ किसी क़दर जग जाती हैं तो उसको दुख सुख और नफ़ा नुक़्सान की तमाम हालतों से, जो उसके तजरुबे में आती हैं, निहायत साफ़ तरीक़े पर रचना के रूपवान करने की मौज व मसलहत दरसने लगती है, जिसकी झलक पाने पर प्रेमी अभ्यासी मस्त व मग्न,

प्रेम में चूर, सच्चे मालिक के गुणानुवाद गाता है और जब कभी उसके अन्दर जोश किसी क़दर ज़बरदस्त पैदा हो जाता है तो बोलना चालना सब बिसर जाता है और इस बेख़ुदी की हालत में वह गोया सच्चे कुल्ल-मालिक से वस्ल का आनन्द लेता है। कुल्ल-मालिक की मौज व मसलहत, जो रचना रूपवान करने के अन्दर रक्खी गई है, अनुभव द्वारा ही ठीक ठीक समझ में आ सकती है और विद्या और बुद्धि की दलीलों के गुबार-आलूदा तरीक़े से कि जिसमें असलियत छिप जाती है उसका अनुभव नहीं किया जा सकता। इस लिए वह परमार्थी विद्यालय, जहाँ रहकर जीव को इस तरह का अनुभवी ज्ञान प्राप्त हो सकता है, एक निहायत मुबारक संयोग क़रार पाता है जिसका काम ख़ास कुल्ल-मालिक की निगरानी में चलता है। आला से आला दर्जे की दिमाग़ी तालीम और तरक़्क़ी अज़ख़ुद रचना की मौज व मसलहत को आज़मायशी ढँग से समझने के लिए नाकाफ़ी है इस लिए जो शख़्स इस मौज और मसलहत को समझने के लिए मैदान में आवे उसको हमारी इस बात का ख़्याल रखना चाहिए। इन्सान के ज्ञान यानी इल्म का दायरा इस संसार के तीन नापों के मुतअल्लिक़ तजरुबों ही पर ख़त्म है लेकिन सृष्टि में क्रिया और कार्य के फ़क़त ये ही घाट नहीं हैं। इनके अलावा दूसरे अनन्त घाट हैं जो

रचना के इन्तिज़ाम के सिलसिले में भारी काम अंजाम दे रहे हैं लेकिन उनका इल्म यानी ज्ञान सिर्फ़ अनुभव यानी ज्ञान लेने की सूक्ष्म इन्द्रिय के द्वारा ही हो सकता है, न कि चर्मेन्द्रियों से। इन्सान को कभी कभी उन ऊँचे घाटों पर क्रिया होने का पता तो चल जाता है लेकिन इस क़िस्म के तजरुबे ऐसे शाज़ व नादिर होते हैं कि कार्य से कारण जानने के तरीक़े से उनकी मा'रफ़त ऊँचे घाटों का कोई मुस्तनद ज्ञान हासिल नहीं हो सकता। इस लिए सच्चे मुतलाशियों को हमारा यह सलाह देना बेज़ा न होगा कि तीन नापों से परे के घाटों का हाल समझने के लिए उनको मुनासिब है कि साधन करके अपनी सूक्ष्म इन्द्रियाँ जगावें और इस बात पर ज़ोर न दें कि इन तीन घाटों के तजरुबों के अलावा दूसरा कोई ज्ञान हो ही नहीं सकता।

भाग चौथा

बयान कर्म यानी मनुष्यों की क्रियाओं का और वर्णन उस असर का जो क्रियाओं के द्वारा मनुष्यों पर पड़ता है।

१२५—रचना का दण्ड यानी सज़ा का क़ानून और उसके फ़ायदे।

अभी पिछले भाग में रचना की निस्बत जो कुछ बयान हुआ उससे ज़ाहिर है कि रचना के अन्दर जितने भी नियम काम कर रहे हैं वे सब के सब दया व बख़्शिश की ग़रज़ से क़ायम किये गये हैं और दण्ड के नियमों से भी अन्त में किसी क़दर भलाई ही की सूरत पैदा होती है क्योंकि दण्ड भुगतने के बाद जीव अपने देश के अन्दर ख़ास दर्जे तक रूहानी तरक़्क़ी हासिल करने के अधिकारी बन जाते हैं। यह सब इन्तिज़ाम पिण्ड-देश के अन्दर तो भरपूर ही मौजूद है लेकिन निर्मल चैतन्य-देश के नीचे (महासुन्न) की और ब्रह्माण्ड के नीचे (चिदाकाश) की नीम-रूहानी रचना के अन्दर भी इसका जुज़ पाया जाता है। सज़ा यानी

दण्ड का क़ानून वैसे तो सब किसी पर एक समान लगता है लेकिन यह ज़्यादातर इस क़िस्म के जीवों के लिए है जो जज़ा यानी इनाम के नियमों से फ़ायदा उठाने के अनधिकारी हैं। यह बयान करने की चन्दाँ ज़रूरत नहीं है कि इस क़िस्म की वासनाएँ और क्रियाएँ और सुस्ती, जिनकी वजह से मनुष्य रचना के बन्दीख़ाने में रहकर दुरुस्ती और अन्त में फ़ायदे की सूरत तलाश करता है, निशान समझ बूझ के घाटे का होती हैं, जिसके लिए हर किसी को शर्म आनी चाहिए। लेकिन वाज़ह हो कि सिर्फ़ नालायक़ जीव ही इन अङ्गों में बर्ताव करते हैं। जिन लोगों के अन्दर काफ़ी दूर-अन्देशी और समझ बूझ का माद्दा मौजूद है वे इन नियमों से वाक़िफ़ियत इस ग़रज़ से पैदा करते हैं कि वे जज़ा से फ़ायदा और दण्ड से बचाव हासिल कर सकें। अलावा इसके ख़्याल करना चाहिए कि दण्ड के इन्तिज़ाम की मारफ़त बुरी आदतों में सिर्फ़ किसी क़दर हलकापन आ जाता है जिससे सुरत सिर्फ़ उस दर्जे के अन्दर कि जिसमें उसका निवास-स्थान वाक़ै है रूहानी तरक़्क़ी कर पाती है लेकिन उसको ऊँचे दर्जे में बास नहीं मिल सकता। ऊँचे दर्जे में चढ़ने के लिए ज़रूरी है कि जीव ऊँचे दर्जे की चैतन्य-धार की पकड़ में आवे और नीज़ सतगुरु-वक़्त की मदद उसके शामिले हाल हो। ऊँचे देश की धार की पकड़ में आने

के लिए सिवाय अन्तरी अभ्यास के और कोई उपाय नहीं है और अभ्यास दुरुस्ती से बन पड़ने के लिए यह निहायत लाज़िमी है कि नीचे दर्जे की बासनाएँ, जो ब्रह्माण्ड और पिण्ड देशों में प्रधान हैं, ठीक तरह पर समझकर मग़लूब (दमन) कर ली जावें और चूँकि यह अन्तरी अभ्यास, जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ, सिर्फ़ मनुष्य-शरीर ही में कामयाबी के साथ किया जा सकता है (देखो दफ़ा १११) इस लिए अब हम यह बयान करेंगे कि मनुष्य के ऊपर उसके गिर्द व पेश के सामान और कर्मों का क्या असर पड़ता है।

१२६—जीव के अन्दर नक़्श कैसे पड़ते हैं और कैसे क़ायम रहते हैं।

पेश्तर इसके कि यह बयान किया जावे कि कर्म कितनी प्रकार के होते हैं और किन नियमों के अनुसार उनका आयन्दा फल भुगतना पड़ता है, हम तहक़ीक़ात इस अम्र की करेंगे कि गिर्द व पेश के सामान जीव पर किस तरीक़े से असर डालते हैं और किस तरह से वे संस्काररूप में जीव के अन्दर दाखिल होते हैं और क़ायम रहते हैं और कैसे उनकी मारफ़त और दूसरे कारणों से इच्छाएँ व बासनाएँ जीव के अन्दर पैदा होती हैं। गिर्द व पेश के सब सामान का असर ज्ञानेन्द्रियों पर पड़ता है और इस तरीक़े से जो

नक़्श ज्ञानेन्द्रियाँ लेती हैं उनका जीव को उस वक़्त ज्ञान हो जाता है लेकिन मुआमला इतने ही पर ख़त्म नहीं हो जाता। ये सब नक़्श हमारे अन्दर किसी जगह पर क़ायम रहते हैं और इनमें से ख़फ़ीफ़ से ख़फ़ीफ़ व कमज़ोर से कमज़ोर नक़्श भी हमारी अन्दरूनी तख़्ती पर लिख जाता है। अबरक्रॉम्बी (Abercrombie) ने अपने रिसाले के अन्दर, जो उसने दिमाग़ की शक्तियों के मज़मून पर लिखा है, जो वाक़यात क़लमबन्द किये हैं उनसे हमारे इस बयान की तसदीक़ पूरे तौर पर हो जाती है। उसने बयान किया है कि कई एक औरतों और मर्दों को ग़ैरज़बान की नज़्में, जो उन्हों ने कभी इत्तिफ़ाक़ से सुन ली थीं, एक अर्से के बाद याद आ गईं और उन्हों ने उन नज़्मों को ठीक ठीक दोहरा दिया। चूँकि नज़्मों के अर्थ न जानने से उनकी निहायत ही ख़फ़ीफ़ तवज्जह उनके सुनने में लगी होगी इस लिए ज़ाहिर है कि नज़्मों के संस्कार जो उनके अन्दर पड़े वे भी निहायत कमज़ोर होंगे। लेकिन हिज़यान (सन्निपात) की वजह से ग़ैरमामूली हलचल की हालत पैदा होने पर ज्योंही वे संस्कार उनकी तवज्जह के सामने आये उनको फ़ौरन् नज़्मों की याद आ गई और उन संस्कारों की मदद से उन्हों ने सब नज़्में दोहरा दीं। वह मसाला या पर्दा, जिसपर ज्ञानेन्द्रियों और नीज़ मानसिक क्रिया-

ओं के द्वारा संस्कार या नक़्श पड़ते हैं और क़ायम रहते हैं, आकाश है ।

१२७—मन-आकाश ।

वह आकाशतत्त्व, जिसपर ये नक़्श जीव के अन्दर पड़ते हैं, मन-आकाश कहलाता है । इस आकाश में हद दर्जे का लचीलापन है जो बाहर सृष्टि के आकाश-तत्त्व के लचीलेपन से मुशाबह है । इस लचीलेपन के ज़रिये ही अन्दर के मन-आकाश और बाहर के आकाश-तत्त्व पर पड़े हुए नक़्श अपने ठिकानों पर पहुँचा करते हैं । बाहरी आकाशतत्त्व की मारफ़त, जिस ठिकाने* पर नक़्श पहुँचते हैं, वह अक्स फेंकने वाला है और मन-आकाश के ठिकाने के अन्दर भी अगर्चे यह गुण मौजूद है लेकिन वह अन्तरी यानी मानसिक है । जिस वक़्त मन-आकाश पर कोई नक़्श पड़ते हैं तो उस वक़्त मन और उसके चारों अङ्गों (मनन, चिन्तवन, बोध और अहङ्कार) को उनका ज्ञान रहता है लेकिन तवज्जह के उनसे हटकर दूसरे नक़्शों और दूसरी तरफ़ों में चले जाने से पहले नक़्शों का ज्ञान मन्द पड़ जाता है और रफ़्ता रफ़्ता उनकी याद बिलकुल जाती रहती है लेकिन याद जाते रहने पर वे नक़्श मिट नहीं जाते बल्कि बरख़िलाफ़ इसके मन-आकाश के दफ़्तर में

* दर्शनेन्द्रिय से मुराद है ।

बतौर पुरानी मिसलों के निहायत एहतियात से रक्खे रहते हैं और जब कभी—चाहे जान बूझ कर या अनायास—हम उनकी जानिब तवज्जह करते हैं तो तवज्जह के पूरे तौर से उनकी जानिब मुख़ातिब होने पर, जैसा कि ऊपर बयान हुआ, वे फ़ौरन् दोबारा प्रकट हो कर याद आ जाते हैं।

१२८—नक़्श कैसे दोबारा प्रकट होते हैं।

अबरक्रॉम्बी के बयानकर्दा वाक़यात से, जिनका ऊपर ज़िक्र हुआ, दो उसूल साफ़ तौर पर क़ायम होते हैं। एक तो यह कि जब किसी की तवज्जह का उसके अन्दर पड़े हुए नक़्शों के साथ पूरे तौर से सम्बन्ध होता है तो वह उन नक़्शों के अनुसार ही बरतने लगता है चाहे वे नक़्श निहायत ही कमज़ोर क्यों न हों और उनका मतलब भी उसकी समझ में न आया हो, और दूसरा यह कि उन नक़्शों की वजह से जो क्रियाएँ जीव करता है उनका मन-आकाश पर फिर असर पड़ता है और मुनासिब संयोग मिलने पर यानी तवज्जह का उनके साथ पूरा तअल्लुक़ क़ायम होने पर वे नक़्श जीव से नये कर्म करा सकते हैं।

ज़मीमा

॥ चौपाई ॥

निज गुन भाट जगत बहुतेरे ।
पर गुन ग्राहक नर न घनेरे ॥ १ ॥
जे छिन छिन निज गुन उच्चरहीं ।
समय परे पर कछु नहिं करहीं ॥ २ ॥
ममता त्यागि करे जो करनी ।
सपने अहँग चित्त नहिं धरनी ॥ ३ ॥
पर गुन जिन रवि उदय समाना ।
निज आचरन खद्योत निमाना ॥ ४ ॥
सत्य साधु करनी तिन केरी ।
ज्ञान मूर मय सुखद घनेरी ॥ ५ ॥
शशि सम सीतल बैन सुबैनू ।
श्रवन परत उर पावत चैनू ॥ ६ ॥
बड़े भाग अस साध सुसंगू ।
कलमल हरन मोह मद भंगू ॥ ७ ॥
अविरल भक्ति प्रेम मन लावन ।
गुरु चरनन चित उमँग बढ़ावन ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

बार बार कर जोर कर,
सविनय करूँ पुकार ।
साध संग मोहिं देव नित,
परम गुरू दातार ॥
कृपासिंधु समरथ पुरुष,
आदि अनादि अपार ।
राधास्वामी परम पितु,
मैं तुम सदा अधार ॥

॥ सोरठा ॥

बार बार बल जाउँ,
तन मन वारूँ चरन पर ।
क्या मुख ले मैं गाउँ,
मेहर करी जस कृपा कर ॥ १ ॥
धन्य धन्य गुरु देव,
दयासिंधु पूरन धनी ।
नित्त करूँ तुम सेव,
अचल भक्ति मोहिं देव प्रभु ॥ २ ॥
दीन अधीन अनाथ,
हाथ गहा तुम आन कर ।

अब राखो नित साथ,
दीनदयाल कृपानिधि ॥ ३ ॥
काम क्रोध मद लोभ,
सब विधि अवगुनहार मैं ।
प्रभु राखो मेरि लाज,
तुम द्वारे अब मैं पड़ा ॥ ४ ॥
राधास्वामी गुरु समरत्थ,
तुम बिन और न दूसरा ।
अब करो दया परतच्छ,
तुम दर एती बिलँब क्यों ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

दया करो मेरे साइयाँ,
देव प्रेम की दात ।
दुख सुख कछु व्यापै नहीं,
छूटै सब उत्पात ॥

॥ दोहा ॥

बाचक ज्ञानी की सभा,
जस खद्योत समाज ।
क्रोध लोभऽहङ्कार मद,
निन्द्या निश की साज ॥१॥

पक्षपात घन नीर कण,
　　करत सदा आहार ।
पर परकाश कुशल नित,
　　स्वयम् घोर अँधकार ॥२॥

॥ सोरठा ॥

सत्य ज्ञान रवि तेज,
　　उदय होतऽहँग रहित सो ।
कृमिवत् तुच्छ अतेज़,
　　कुटिल कुमति कुत्सित गए ॥

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	११	तै	तय
१०	१६	खेल है । क्योंकि	खेल है क्योंकि
१०	२२	आंती हैं और	आती हैं । और
१२	१३	सम्ब्नन्ध में, यह	सम्बन्ध में यह
१५	१३	मुख़्तसिर	मुख़्तसर
२६	२०	तैयार	तय्यार
३२	८	इस तरह पर	इसी तरह पर
३४	१०	सबूत	सुबूत
५४	१२	शकल	शक्ल
५६	१८	जावेगा । यहाँ पर	जावेगा, यहाँ पर
७६	१५	सबूत	सुबूत
८१	१६	बमुक़ाबला	बमुक़ाबले
८६	४	सिन्ध	सिन्धु
६५	१८	असाधाण	असाधारण
१०३	१२	तैयार	तय्यार
११०	२१	धनियों की अंश	धनियों के अंश
११४	१२	रधास्वामी	राधास्वामी
११७	७	होता है जिनसे	होता है कि जिनसे
१७६	१५	चैतन्य-स्थान के	चैतन्य-स्थानों के
२०४	८	ज्ञान्द्रियों	ज्ञानेन्द्रियों
२०५	४	काम देती है।	काम देता है।

फ़िहरिस्त पुस्तकों की

जो स्टोरकीपर, राधास्वामी सेन्ट्रल सतसंग, दयालबाग़, आगरा, से मिल सकती हैं।

—o—

नाम पुस्तक		क़ीमत
छन्दबन्द		
१—राधास्वामी बानी संग्रह भाग १	हिन्दी	२)
२—प्रेमबिलास भाग १	”	॥)
३—प्रेमबिलास भाग २	”	॥)
४—प्रेमबिलास भाग ३	”	॥)
वार्तिक		
५—प्रेम समाचार	हिन्दी	॥)
६—अमृत-बचन	”	३)
७—राधास्वामी मत दर्शन	”	॥=)
८—राधास्वामी मत दर्शन	उर्दू	॥=)
९—राधास्वामी मत दर्शन	बँगला	॥)
१०—राधास्वामी मत दर्शन	तिलेगू	॥)
११—जिज्ञासा नंबर १	हिन्दी	॥)
१२—जतन-प्रकाश	”	॥)
१३—प्रेमसन्देश मासिक पत्र नं० १	”	।=)
१४—प्रेमसन्देश मासिक पत्र नं० २	”	।=)
१५—प्रेमसन्देश मासिक पत्र नं० ३	”	।=)